

Regd. No. 21747

ISSN 2277-2014

Research Discourse

An International refereed research Journal

Vol. III

No. 4

Oct.-Dec. 2013



Editor
Dr. Anish Kumar Verma

Associate Editors

Dr. Rajneesh

Dr. Santosh Kr. Tripathi

Published by :
South Asia Research & Development Institute
Varanasi, U.P. (INDIA)

Patron

Dr. Lalji Tripathi, Mariahu P.G. College, Mariahu, Jaunpur, U.P.
Ex. Prof. Gurudin, M.G.K.V.P., Varanasi, U.P.

Editorial Board

Prof. Munnilal, Varanasi, U.P.

Prof. Shri Bhagwan Rai, Varanasi, U.P.

Dr. Deenbandu Tiwari, Varanasi, U.P.

Dr. Rekha, Varanasi, U.P.

Dr. Anju Sihare, M.P.

Dr. Ramesh Kumar, Hariyana.

Dr. Suresh Kumar Singh, Jaunpur, U.P.

Dr. H.C. Purohit, Jaunpur, U.P.

Dr. Syed Mehartaz Begum, Delhi.

Dr. Anjaneya Pandey, Jaunpur, U.P.

Dr. Kaushal Kishor, Bihar

Anna Malingdog

(Philippines)

Shoir Ajore

(Phillistin)

Advisory Board

Prof. Archana Sharma, Meerut, U.P.

Prof. Renuka Kumari Sinha, Bihar.

Prof. Vasant S. Ghule, Maharashtra.

Dr. Rakesh Kumar Maurya, Varanasi, U.P.

Dr. Sushil Kumar Gautam, Varanasi, U.P.

Dr. Anurag Mishra, Jaunpur, U.P.

© Editor

Published by :

South Asia Research & Development Institute

B. 28/70, Manas Mandir, Durgakund

Varanasi, 221005, U.P. (INDIA)

Email : researchdiscourse2012@gmail.com

Mob. 09453025847, 08687778221

'Research Discourse': An International refereed research Journal, Published Quarterly.

Note: *Scholars will be answerable to the contents of their articles.*

All disputes and complaints are subject exclusively to the Jurisdiction of the courts/tribunals/forums at Varanasi Only.

I E i kndh;

समकालीन भारत में यह समय राजनीतिक विमर्श अर्थात् लोकसभा चुनाव का है, इस चुनाव में विभिन्न राष्ट्रीय व क्षेत्रीय दलों द्वारा जनता से वादा किया जा रहा है, जिसका विस्तृत आयाम है।

बहुलतावादी भारत में मुख्यधारा के राजनीतिक दलों द्वारा क्षेत्रीय समस्याओं के प्रति उदाशीलता ने क्षेत्रीय दलों की आकांक्षाओं व उम्मीदों के लिए ठोस आधार तैयार किया है वहीं देश के आधा से ज्यादा आबादी युवाओं एवं मध्यवर्ग के लिए लोकतंत्र का यह महापर्व बदलाव व विकास का है, जो विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का दशा-दिशा निर्धारित करेगा। इस दृष्टि से यह चुनाव अहम है।

fj | pL fMLdkd | शोध पत्रिका के इस अंक से प्राप्त विमर्श से विविध आयामों पर एक नवीन दृष्टि एवं समझ विकसित करने, स्वस्थ एवं जागरूक वैश्विक समाज की स्थापना में कारगर एवं सहायक सिद्ध होगा। इसके साथ ही नवीन युवा विद्वानों की पीढ़ी लाभान्वित होगी व नवीन शोधकार्य एवं अध्ययन-अध्यापन में गुणवत्ता लाने का प्रयास करेगी। आशा है कि यह अंक जागरूक प्रबुद्ध चिन्तकों एवं पाठकों के लिए भी अवश्य लाभदायक सिद्ध होगा।

fj | pL fMLdkd | शोध पत्रिका के प्रकाशन में प्रारम्भ से नैतिक समर्थन व प्रोत्साहन के लिए मैं MkD ykyth f=i kBh] i kpk;] efM; kgw i h0th0 dkyst] efM; kgw tkuij का आभारी हूँ, इसके साथ ही रिसर्च डिस्कोर्स शोध पत्रिका के इस अंक से संरक्षक का कार्य-भार ग्रहण करने पर हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

प्रस्तुत अंक के अशुद्धियों को शुद्ध करने के लिए MkD jktho dekj f=i kBh] MkD fpjatho dekj Bkdj] MkD | Urksk dekj f=i kBh] MkD fnusk dekj] MkD i#"kk&ke yky fot; एवं अनन्य मित्र Jh vuii dekj ^Jfed*] Jh iadt fl g एवं Jh fjrsk oekl के प्रति हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। प्रस्तुत अंक में रह गयी त्रुटियों के लिए हम सभी पाठकों से क्षमा प्रार्थी है।

अन्त में, सभी लेखकों, पाठकों एवं अन्य विद्वतजनों के प्रति हृदय से आभार प्रकट करते हुए उनसे सुझाव, सहयोग एवं आशीष की कामना करते हैं।

fo"K; &I pph

1-	I LÑr /kkfeİd I kfgR; ea ckYehfd jkek; .k dk vorkjokn डॉ० भास्कर प्रसाद द्विवेदी	1&3
2-	mÜkj &vk/kfudrkoknh % , d I Ei R; kRed nf"Vdks k डॉ० रजनीश	4&6
3-	onka ea of. kR ekuo ds dkMfEcd vknZ k डॉ० प्रभात कुमार सिंह	7&10
4-	Hkkjr ea I kEi nkf; drk dk I ekt' kkl=h; nf"Vdks k डॉ० श्रीमती कंचन	11&14
5-	efgykvka ds ekuokf/kdkj श्रीमति भावना ठाकुर	15&18
6-	cd) }kjk rf"kr Loxl ea tkdj viuh Loxbkl h ekrk egkek; k noh dks /kekā ns'k i nku djus dh dFkk % 'kdkyhu f'kYi dykdānz I kph ds I UnHkZ ea कुमार गौतम	19&21
7-	ukjh I ekt ds cnysr vk; ke विभा सिंह	22&24
8-	Q: [kkckn tuin ds ek/; fed Lrj ds xkeh.k {ks= ds fo kffkZ; ka dh 'kF{k d mi yfc/k ij ?kjsy wokrkoj .k ds i Hkko dk v/; ; u डा० रंजना सिंह	25&29
9-	I kekftd foKkuka ea vuq U/kku I eL; k dh i gpku डॉ० रमोद कुमार मोर्य	30&33
10-	>kI h dh jkuh y{ehckbz %mi U; kI ½ ea 0; Dr vk[; ku मुकेश कुमार	34&39

11-	I puk i kS kfxdh dk Nk=@ Nk=kvka ds vf/kxe Lrj ij i Hkko डॉ० लुभावनी त्रिपाठी	40&44
12-	Lkkeftd&0; oLFkk vkj I kBkÜkj h fgUnh dfork डॉ० सुशील कुमार राय	45&49
13-	cl# {ks= fo' ofo ky; ds , e-, M- rFkk ch-, M- ds Nk=ka dk mPp f'k{kk ds futhdj .k ds i fr fopkj ka dk rnyukRed v/; ; u कुलदीप एवं संदीप कौर	50&53
14-	Hkkjr; f'k{kk 0; oLFkk % , d v/; ; u पंकज कुमार यादव	54&56
15-	vuh" k di j ds mi LFkki u f'kYi ea jaka dk iz ksx नीलम कुमारी	57&61
16-	efgyk I 'kDrhdj .k % , d foopu उपकार दत्त शर्मा	62&64
17-	dkyhinkl dkyhu tui nka dk , dh dj .k देवेन्द्र कुमार उपाध्याय	65&67
18-	Hkkjr ea N"kd I ekt dh vo/kkj .kk डॉ० राजकुमार मिश्र	68&71
19-	efgykvka ds I 'kfädj .k ea xj I jdkjh I xBuka dh Hkfedk डॉ० मंजू भारती	72&75
20.	Self Help Groups and the Women Dairy Development Project (A Reference to Uttarakhand) Dr. Deepali Kanwal	76-80
21.	Vital Role of Women Self Help Groups(shgs) in Kumaon Region of Uttarakhand Dr. Deepa Rawat	81-84
22.	Passing off of Trade Marks-issues and Challenges Ms. Seema Ahlawat & Mr. Kuldeep Birwal	85-90

- | | | | | | |
|-----|--|---------|-----|--|---------|
| 23. | The Importance of Motivation in Organisation : A View
<i>Dr. Rajesh Kumar Singh</i> | 90-94 | 34. | Sports As a Means of Nation Development and Personal Development
<i>Prof. V.S. Ghule</i> | 143-147 |
| 24. | The Contributions of Rajaji for the Socio-Economic Regeneration of Tamil Nadu
<i>Dr. R. Panneer Selvam</i> | 95-99 | 35. | Pandit Shri Ram Sharma Acharya : The great social reformer
<i>Anil Kumar</i> | 148-152 |
| 25. | Nanak's Bhakti Movement: A Vehicle of Social Transformation
<i>Mrs. Archana Bhattacharjee</i>
<i>Mr. Lakhya Pratim Nirmolia</i> | 100-104 | 36. | Coinciding Politics and Tourism in India: A Brand Image Perspective
<i>Vikrant Kaushal & Sidharth Srivastava</i> | 153-157 |
| 26. | The Impact of Celebrity Endorsement on the Young Consumers
<i>Dr. Ajit Kumar Shukla</i> | 105-109 | 37. | Effectiveness of Environmental Laws in India: A Study in Context of Green Criminology
<i>Mr. Supratim Karmakar</i> | 158-162 |
| 27. | An Analytical Study of Emotional Intelligence of Secondary Schools Teachers in Government Aided and Private Schools in Rohtak District
<i>Anju Rani</i> | 110-113 | 38. | INDO-JAPAN RELATION - From Historical Past to Strategic Present
<i>Amar Nath Upadhyay</i> | 163-166 |
| 28. | Financial Inclusion- Issues & Perspectives
<i>Dr. Rajat Kumar Sant</i> | 114-118 | | | |
| 29. | Protection of Geographical Indication as Intellectual Property
<i>Ms. Seema Ahlawat</i> | 119-120 | | | |
| 30. | Global Financial Crisis and India : An Overview
<i>Dr. Shephalika Rai</i> | 121-126 | | | |
| 31. | Role of Intellectual Property Rights in Economic Development
<i>Ms. Jyoti Rani</i> | 127-131 | | | |
| 32. | Microfinance as a tool for Poverty Alleviation Case Study of Balera Village, Mirzapur
<i>Dr. Rajay Kumar Singh</i> | 132-137 | | | |
| 33. | An Analytical Study of Mental Health and Job Satisfaction of Male and Female Teacher Educators Teaching in Self -Financed Institutions in Ghaziabad District
<i>Mrs. Deepali Garg & Dr. D.K. Jha</i> | 138-142 | | | |

I 1Ñr /kkfeɪd | kfgR; eɪ ckYehfd
jkek; .k dk vorkjokn

MKND HkkLdj i 1 kn f}onh*

रामकथा विषयक गाथाओं से लेकर बाल्मीकि रामायण के प्रचलित रूप तक रामकथा साहित्य में अवतारवाद की उत्तरोत्तर बढ़ती व्यापकता के साथ-साथ भक्तिभावना भी उत्पन्न हुई और धीरे-धीरे विकसित होने लगी। भारत में भक्तिमार्ग का बीजारोपण सर्वप्रथम वेदों में हुआ तथा भागवत धर्म में यह पल्लवित हुआ। बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म की भाँति भागवतों का भक्तिमार्ग भी कर्मकाण्ड तथा यज्ञप्रधान ब्राह्मणधर्म की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ था। परन्तु इसमें वेदों की निन्दा को स्थान नहीं मिला और बाद में ब्राह्मण तथा भागवत धर्म के समन्वय से वैष्णव धर्म की उत्पत्ति हुई। भागवतों के देवता वासुदेव कृष्ण प्राचीन वैदिक देवता विष्णु के अवतार माने गए और भक्तिभावना इन्हीं विष्णु-नारायण-वासुदेव कृष्ण में केन्द्रीभूत होकर उत्तरोत्तर विकसित होने लगी। विष्णु के अन्य अवतार भी माने गए हैं जिनमें रामावतार भारतीय संस्कृति में सबसे महत्वपूर्ण है।

बाल्मीकि रामायण के पूर्व भी रामकथा सम्बन्धी आख्यान प्रचलित थे। महाभारत के द्रोणपर्व तथा शान्तिपर्व में संक्षिप्त रामचरित तथा अन्य निर्देश प्राप्त होते हैं। परन्तु अधिकांश आख्यान अप्राप्य हैं। जिससे बाल्मीकि रामायण रामकथा की प्राचीनतम रचना सिद्ध होती है। बाल्मीकि रामायण के त्रिविध पाठ प्रचलित हैं –

1. दक्षिणात्य पाठ, 2. गौडीय पाठ, 3. पश्चिमोत्तरीय पाठ

प्रत्येक पाठ में बहुत से श्लोक ऐसे मिलते हैं जो अन्य पाठों में नहीं पाए जाते। इन पाठान्तरों का कारण है कि बाल्मीकि कृत रामायण प्रारम्भ में मौखिक रूप से प्रचलित था और कालान्तर में भिन्न-भिन्न परम्पराओं के आधार पर लिपिबद्ध हुआ है।¹

*असि० प्रोफेसर, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चुनार, मीरजापुर, उ०प्र०

बौद्धों के जातक साहित्य में भी रामकथा को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इनमें दशरथजातकम्, अनामकं जातकम् तथा दशरथ कथानकम् प्रमुख हैं।² दशरथ जातक में रामकथा का जो रूप विद्यमान है उसे अनके विद्वान् रामायण की कथा का मूल रूप समझते हैं। डा० वेबर ने सर्वप्रथम इस मत का प्रतिपादन किया था जबकि याकोबी इस मत को नहीं मानते, किन्तु आधुनिक काल में दिनेशचन्द्र सेन आदि विद्वान् डा० वेबर का ही मत मानते हैं।³

रामकथा के विकास के दृष्टिकोण से रामायण में अवतारवाद का महत्वपूर्ण स्थान है। बालकाण्ड में पुत्रेष्टियज्ञ के प्रसंग में विष्णु का राम के रूप में अवतार लेने का विस्तार से वर्णन प्राप्त होता है।⁴

बालकाण्ड के 76वें सर्ग में परशुराम राम से कहते हैं कि मैं आपको विष्णु मानता हूँ तथा आपसे पराजय पाना कोई लज्जा की बात नहीं है –

अक्षय्यं मधुहन्तारं जानामि त्वां सुरेश्वरम् ॥

न चयं तव काकुत्स्थ ग्रीडा भवितुमर्हति

त्वया त्रैलोक्यनाथेन यदहं विमुखीकृतः ॥

अयोध्याकांड में राम के अवतार होने का उल्लेख इस प्रकार मिलता है—

स हि देवैरुदीर्णस्य रावणस्य वधार्थिभिः ।

अर्थितो मानुङ्के लोके जज्ञे विष्णुः सनातनः ॥⁵

युद्धकाण्ड में अवतारवादी प्रवृत्ति सबसे अधिक मिलती है। युद्धकाण्ड का अत्यधिक विस्तृत होना इसका प्रमुख कारण है। इसके साथ ही इसमें अपेक्षाकृत अधिक प्रक्षेप भी जोड़े गए हैं। बाल्मीकि रामायण के गौडीय पाठ में मन्दोदरी विलाप के अवसर पर मन्दोदरी कहती है –

रामरूपेण विष्णुश्च स्वयमागतः ।

तव नाशाय मायाभिः प्रविश्यानुपलक्षितः ॥⁶

दक्षिणात्य पाठ में एक स्थान पर दशरथ स्वयं राम से कहते हैं कि वह पुरुषोत्तम ही है –

इदानीं च विजानामि यथा सौम्य सुरेश्वरैः ।

वधार्थं रावणस्येह पिहितं पुरुषोत्तमम् ॥

दक्षिणात्य पाठ में कई स्थान पर विष्णु और राम की अभिन्नता मानी गयी है—

प्रीयते सततं रामः स हि विष्णुः सनातनः । आदिदेवो महाबाहुर्हरिर्नारायणः प्रभुः ॥

दक्षिणात्य पाठ के कई स्थानों पर सीता को लक्ष्मी का अवतार कहा गया है। उत्तरकाण्ड के सर्ग 8, 17, 27, 30 आदि में भी राम के अवतार होने का उल्लेख प्राप्त होता है।

इस प्रकार सम्पूर्ण रामायण में अवतारवाद का पर्याप्त प्रभाव पाया जाता है परन्तु अनेक विद्वानों की मान्यता है कि प्रामाणिक काण्डों की अवतारवादी सामग्री जो तीनों पाठों में मिलती है वह नहीं के बराबर है। जो सामग्री तीनों पाठों में मिलती है वह एक ऐसे अंश में पायी जाती है जो स्पष्टतया प्रक्षिप्त है। अवतारवाद को बाद की भावना मानने में यही सबसे प्रधान तर्क भी है। रामायण के कई अंशों में सीता स्वयं को साधारण स्त्री मानती हैं तथा राम का अवतार होना भी उनसे छिपा हुआ है।

एक स्थान पर लक्ष्मण राम को सान्त्वना देते हुए कहते हैं कि —

प्रात्स्यसे त्वं महाप्राज्ञ मैथिलीं जनकात्मजां।

यथा विष्णुर्महाबाहुर्बलिं बद्ध्वा महीमिमां।।⁷

हनुमान रावण से कहते हैं कि मैं विष्णु की ओर से नहीं आया हूँ वरन् राम की ओर से आया हूँ —

विष्णुना नास्मि चोदितः।।

केनचिद्रामकार्येण आगतोऽस्मि तवान्तिकम्।।⁸

रामायण के अनेक पात्र राम की तुलना विष्णु से करते हैं जिसका तात्पर्य है कि राम को विष्णु से भिन्न समझते हैं।

उपर्युक्त तर्कों से स्पष्ट है कि बाल्मीकि रामायण में जो भी अवतारवादी प्रवृत्ति पायी जाती है वह प्रक्षिप्त अंशों यथा बालकाण्ड और उत्तरकाण्ड में अधिक परिलक्षित होती है। मूल बाल्मीकि रामायण में राम के आदर्शवादी मर्यादा पुरुषोत्तम स्वरूप को ही महत्त्व दिया गया है।

I UnHkz %

1. याकोबी : रामायण, पृ0 3 एवम् कामिल बुल्के : दि जनेसिस आफ दि बाल्मीकि रामायण रिसेन्शन्स, भाग-5, पृ0 66-94
2. कामिल बुल्के : रामकथा, पृ0 44-48
3. ए वेबर : आन दि रामायण दिनेशचन्द्र सेन : दि बंगाली रामायन्स, पृ0 7
4. बाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड सर्ग 15-18
5. वा0 रामायण, अयोध्याकाण्ड 1.7
6. वा0रा0, युद्धकाण्ड 9.95
7. वा0रा0 3.61.24
8. वा0रा0 5.50

mÙkj &vk/kfudrkoknh %
, d | Ei R; kRed nf"Vdks k

MkM j tuh'k*

I kjk'k %

यह प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है जिसका उद्देश्य आधुनिक समाज को समझकर और इनकी कमियों को उजागर करके एक नये समाज की संभावना को उद्घाटित करना है जो की सम्पूर्ण विश्व को मानवतावादी ग्लोबल विलेज के रूप में जोड़कर देखने का एक प्रयास है।

मानव उद्धार के लिए दुनियाँ में बुद्धिजीवी वर्ग ने हमेशा मंथन किया, जिससे समाज में तार्किकता आयी और धर्म का प्रभाव समाज में कमजोर होने लगा। जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में परिवर्तन स्वाभाविक है। विज्ञान के आविष्कार ने परम्पराओं को कमजोर किया और पूँजीवाद को जन्म दिया एवं मशीनीकरण का युग समाज में आया और आधुनिकता का उदय हुआ परन्तु इस आधुनिकता ने पूँजीवाद के नकारात्मक स्वरूप को परिलक्षित किया। जिसके कारण विश्व में कुछ वर्गों को छोड़कर ज्यादातर समाज में असंतोष की स्थिति पैदा हुयी, जिससे वर्ग संघर्ष, आर्थिक असमानता, नैतिक पतन, अपराध में वृद्धि, भ्रष्टाचार में वृद्धि परिवार में विघटन, उपभोगवादी संस्कृति में वृद्धि, मानव का मशीनीकरण, मानवतावाद का पतन, संवेदनहीनता जैसी अनेक विषम स्थितियाँ समाज में अपनी जड़ें जमाने लगी। यूरोप, अमेरिका एवं एशिया में पुनः बुद्धिजीवी वर्गों ने आधुनिकता को सन्देह या भ्रम की स्थिति में देखा और मानव को शोषण से मुक्ति या मानवीय उद्धार की ओर नये सिरे से विश्वव्यवस्था की ओर लोग पुनः सोचने लगे। ऐसे ही नवीन समाज के विकल्पों पर कुछ उत्तर-आधुनिकतावादीयों ने समाज का विश्लेषण किया है जिसमें कुछ समाजवैज्ञानिकों ने इस पर विस्तृत व्याख्या की हैं।

समाजवैज्ञानिकों में T; k okfM*ykMz हैं जिनका कहना है कि वर्तमान आधुनिक समाज टूटने के कागार पर है, क्योंकि वर्तमान समाज संचार

व्यवस्था का है अर्थात् मॉस मीडिया पर आधारित समाज है जो कि समाज में भ्रम पैदा कर रहा है। यह मॉस मीडिया संचार के द्वारा सच और झूठ में अन्तर नहीं कर पा रहा है। मॉस मीडिया अब मिथ्याभाषी हो गया है और यह उपभोक्तावादी समाज को महत्व दे रहा है। फ्रांसीसी विचारक पाल-मिशेल फूको का कहना है कि सामाजिक नियन्त्रण के क्षेत्र में शक्ति, ज्ञान और विमर्श की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसी पर उत्तरआधुनिक समाज का निर्माण होगा, क्योंकि जिसका पास अधिक ज्ञान होगा वह उतना ही अधिक शक्तिशाली होगा अर्थात् ज्ञान ही उत्पादन के साधन होंगे उदाहरण के लिए अमेरिका आज अधिक शक्तिशाली अपने ज्ञान संग्रह के कारण ही है। Qwks कामुकता पर चर्चा करते हैं और कहते हैं कि आज विमर्श के माध्यम से कामुकता पर चर्चा आसान हो गयी है। उत्तर-आधुनिकतावादियों में Y; kV/kMz का कहना है कि आज प्रत्येक सूचना का व्यापारीकरण होने लगा है, आज सूचना जिसके पास जितनी अधिक है वह उतना ही अधिक शक्तिशाली है। tWbI nfjnk विरवण्डनवाद की अवधारणा के माध्यम से समाज को समझाते हैं। आप का कहना है कि आज की दुनियाँ पुराने ग्रंथों के इतिहास पर निर्मित है जिसका शुद्धिकरण करके पुराने ग्रंथों की कमियों का विखण्डन करना होगा तब एक समृद्ध समाज का निर्माण होगा। QfMd tEl u ने पूंजीवादी के वर्तमान नये चेहरे को उजागर किया है, पूंजीवादी देश अपने तकनीकी ज्ञान के कारण कमजोर देशों के संस्कृति को समाप्त करने पर लगे हैं उदाहरण के लिए एशिया देशों की परम्परा और संस्कृति पर आज पश्चिमी संस्कृति एवं अमेरिकीकरण की संस्कृति बढ़ती जा रही है। समाजशास्त्रीय ; ksWlnz fl g का कहना है भारत में भ्रष्टाचार के कारण राजनैतिक दलों में प्रशासनिक क्षमता कमजोर हो गयी है जिससे समाज विघटन की स्थिति में है। यदि आधुनिकता भारतीय समाज में समानता नहीं ला पा रहा है और भारतीय संस्कृति के प्रति लोगों का मोह भंग हो रहा है तो निश्चित तौर पर एक नये समाज का विकल्प बुद्धिजीवियों को खोजना होगा। I qkhl i pksjh का कहना है कि आज के समाज ने हमारी सोच को कुन्द कर दिया है वहीं jktWlnz ; kno कहते हैं कि भारत में आधुनिकता ने पिछड़े वर्गों, दलितों, महिलाओं की उपेक्षा की है उसके स्थान पर उत्तर-आधुनिकता को विकल्प के रूप में आना चाहिए। çkO vWlns cWks ने भारतीय समाज का अवलोकन करने के बाद कहा है कि चूँकि पूर्व का समाज पूर्व के बनाये नियमों पर आधारित था जिसमें परिवर्तन की आवश्यकता है। नयी सामाजिक व्यवस्था के लिए नये सिद्धान्त की वकालत आपने की है।

संक्षेप में, आज जो समाज है इसमें जो समस्याएँ आ रही हैं उसी को उत्तरआधुनिकतावादियों ने चर्चा की है और मानवतावाद, भावना प्रधान समाज, सहयोग और समानता, सामूहिकता के साथ सम्पूर्ण विश्व को एक सूत्र में सम्बद्ध करके एक समृद्ध समाज की कल्पना की है।

I UnHkz %

1. बोड्रिलार्ड. ज्या, 1989; फ्रार्म मार्क्सिज्म टू पोस्टमार्डननिज्म एण्ड बेआण्ड, पोलीटी प्रेस, कैम्ब्रिज
2. माइक एण्ड जानसन. 1993; फूकाल्ट न्यू डोमेन्स, लन्दन
3. रीटजर. 2000; सोशियोलॉजीकल थीयरी, मेकग्राहील, दिल्ली
4. ल्योटार्ड. 1984; द पोस्ट माडर्न कण्डिसन, यूनिवर्सिटी प्रेस
5. दरिदा. जॉक, 1972; डिसमिनेशन, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो, शिकागो
6. जेमसन. फेडरिक, 1984; पोस्ट माडर्ननिज्म आर द कल्बरल लॉजिक ऑफ लेट कैपटलिज्म, न्यू लेपट रिब्यू
7. सिंह. योगेन्द्र, 1994; भारतीय परम्परा का आधुनिकिकरण, रावत पब्लिकेशन, जयपुर
8. पचौरी. सुधीश, 2000; आलोचना से आगे, राधाकृष्ण, नयी दिल्ली

onka ea of. kṛ ekuo ds dks/ƒEcd vknʒ k
MKD i Hkkr dḁkj fl ḡ*

कुटुम्ब समाज और राष्ट्र का प्रथम एवं मूल अंग है। जब कुटुम्ब में सुख, शान्ति, सद्भाव, संगठन, पारस्परिक सौमनस्यता होगी तभी समाज एवं राष्ट्र में इन सद्भावों की परिकल्पना की जा सकती है। यदि व्यक्तिगत सद्भाव होगा तभी समष्टिगत सद्भाव सम्भव है; क्योंकि व्यक्ति परिवार है और समष्टि समाज या राष्ट्र है। अतएव सर्वप्रथम कुटुम्ब अर्थात् परिवार के जो आर्दश एवं मानदण्ड हैं उनका पालन अवश्यमेव अनिवार्य है। यद्यपि आज यह विडम्बना है कि हमारे समाज में कुटुम्ब की अवधारणा शनैः शनैः विखण्डित, ह्रासोन्मुखी एवं जीर्ण होती जा रही है। इसके पीछे मानव की स्वार्थपरता, लोभ, पारस्परिक कलह, अकर्मण्यता एवं भारतीय संस्कृति से मुख मोडना आदि प्रमुख कारण हैं। इस स्थिति में वैदिक मनीषियों का यह नैतिक कर्तव्य है कि वे वेदों में वर्णित मानव के कौटुम्बिक आर्दशों को समाज के सम्मुख प्रतिपादित करते हुए उसके महात्म्य पर गहन विवेचना करें; जिससे कि नष्टप्राय होता हुआ कुटुम्ब पुनः अपने वास्तविक स्वरूप में यथावत बना रहे; तभी समाज, राष्ट्र एवं विश्व में $l\ kḡkn\ fo'oclu/kḡo$, $oa\ l\ oḡ\ HkoUrḡ\ l\ ƒ[ku\ l\ oḡ\ l\ Urḡ\ fuḡke; k\%$ की अवधारणा सार्थक होगी। इसी उद्देश्य को प्रतिपादित करना प्रस्तुत शोधपत्र का लक्ष्य है।

कुटुम्ब (परिवार) माता-पिता, पुत्र-पुत्री, भाई-बहन एवं पति-पत्नी के समुदाय का नाम है। वेदों में कुटुम्ब के उदात्त आर्दशों का वर्णन किया गया है। वैदिक ऋषियों ने कुटुम्ब के सभी सदस्यों माता-पिता, पुत्र-पुत्री, भाई-बहन एवं पति-पत्नी इत्यादि के कार्यों एवं आचरणों की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की है; जिसका पालन करके व्यक्ति अपने परिवार के साथ सुखी एवं आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सकता है।

*असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, राजकीय पी0जी0 कालेज, चुनार, मीरजापुर, उ0प्र0

अथर्ववेद में कहा गया है कि कुटुम्ब में परस्पर प्रेम की भावना होनी चाहिए। मन्त्रद्रष्टा ऋषि का स्पष्ट कथन है कि भाई-भाई में प्रेम हो, बहन-बहन में प्रेम हो। सब मिल जुलकर प्रेम से कार्य करें और सदा मधुर वचन ही बोला करें—

ek Hkkrk Hkkrja f}{kr ek Lol kjeḡ Lol kA
l E; ḡp% l ork Hkḡok okpa onr- Hknz; kA¹

इसी प्रकार एक अन्य स्थल पर ऋषि कहता है कि जिस प्रकार गाय अपने सद्यःजात बछड़े के प्रति प्रेम रखती है उसी प्रकार परिवार के सभी सदस्यों में हृदय एवं मन की समानता हो तथा परस्पर स्नेह हो। जैसे गाय अपने बछड़े का अहित नहीं होने देना चाहती है वैसे परिवार के सभी सदस्य किसी एक दूसरे को कष्ट न पहुँचने दें तथा सभी का हित चिन्तन करें—

l ān; a l keḡL; e fo}sa d". kḡfe oḡA
vU; ks vU; eḡHk g; ḡr oRl a tkrfeok/U; kAA²

यदि इस प्रकार का प्रेमभाव परिवार में हो तो निश्चय ही परिवार स्वर्ग हो जायेगा।

वेदों में वर्णित है कि पुत्र पिता की आज्ञा का पालन करते हुए उसके अनुकूल कार्यों को करने वाला हो और माता के साथ समान मन वाला हो—
vucpr% fi rḡo i ƒk% ek=k Hkorḡ l æuk%AA³

पत्नी के विषय में वेदों में स्पष्ट उल्लिखित है कि वह पति से मधुर और शान्तिप्रद वाणी⁴ से व्यवहार करते हुए समन्वय की भावना से गृहस्थ धर्म का निर्वहन करे— $tk; k\ iR; s\ e/kḡerhḡ\ okpa\ onrḡ\ "kḡfUroke$ ⁵। क्योंकि जिस परिवार में मधुरता, शान्ति एवं समन्वय की भावना होगी उसी परिवार में सुखद एवं सौहार्दपूर्ण वातावरण रहेगा। इसके लिए समन्वय होना अति आवश्यक है; जो कि वर्तमान परिवारों में द्रुतगति से समाप्त होता जा रहा है। क्योंकि आज पति-पत्नी केवल स्व तक केन्द्रित होकर संगठन एवं समन्वय को विस्मृत करते जा रहे हैं। अतएव वेदों में भाई, बहन, पुत्र, पति, पत्नी के जो परस्पर सम्बन्ध बताये गये हैं वह आज के परिवार, समाज व देश के लिए आर्दश है। इस आर्दश का अनुकरण ही हितकारी एवं वरेण्य है।

ऋग्वेद में कुटुम्ब के प्रमुख सदस्य माता-पिता के कर्तव्यों का वर्णन करते हुए वैदिक ऋषि कहता है कि माता-पिता अपने पुत्र-पुत्रियों से मधुर वाणी बोले— $fi\ rkekrk\ e/kḡpk\ l\ ḡLrk\%$ तथा परिवार के सभी सदस्यों को

आवश्यकतानुसार उचित धन देते रहें एवं जीवन के अन्त में पुत्रों में धन का विभाजन समान रूप से करें—

i ztKH; % i ƒ"V foHktUr vki rA⁷

T; s Ba ekrk l uos Hkkxek/kkrA⁸

आज के अधिकांश कुटुम्बों में पारिवारिक कलह का प्रमुख कारण पैतृक सम्पत्ति का विभाजन ही है। भाई—भाई इस पैतृक सम्पत्ति हेतु जीवन्तोपर्यन्त शत्रु हो जाते हैं। क्योंकि माता—पिता अपनी सम्पत्ति का विभाजन समानरूप से न करके पक्षपातपूर्ण ढंग से करके कुटुम्ब में दूषित एवं कलुषित वातावरण का सृजन कर देते हैं। अतएव ऋग्वैदिक ऋषि का यह सन्देश कौटुम्बिक शान्ति हेतु वर्तमान माता पिता के लिए आर्दश एवं अनुकरणीय है।

वेदों में कुटुम्ब के सभी सदस्यों को निर्देशित किया गया है कि वे पुरुषार्थी (कर्मनिष्ठ) बने एवं आलस्य का परित्याग करें तभी परिवार में सुख समृद्धि होगी। यही नहीं यजुर्वेद में तो यहाँ तक कहा गया है कि व्यक्ति को केवल कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करनी चाहिए— dpluog dekf.k ft thfo'kPNra l ek%। ऐसा न हो की कुटुम्ब का एक व्यक्ति कार्य करे शेष बैठकर उपभोग करें; बल्कि सभी मिलकर ईमानदारीपूर्वक कार्य करें तभी कुटुम्ब में सुख शान्ति होगी। यजुर्वेद में ही पुनः उल्लिखित है कि अपने पुरुषार्थ से प्राप्त धन से ही सन्तुष्ट रहें दूसरे के धन का लालच न करें— ek x/k% dL; fLon-/kueA¹⁰ इसीलिए ऋग्वेद के दशम मण्डल में ऋषि कहता है कि श्रमजन्म स्वदेकणों से अभिषिक्त होकर कुटुम्ब निर्वाह के लिए जो धन प्राप्त किया जाता है वही मानवता के विकास में सहायक होता है—

v{kkekz nh0; % Ńf"kfer- Ń"klO foRrs jeLo cgq el; eku%A

r= xko% fdro r= tk; k rles fop"Vs l fork; e; ŃAA¹¹

कुटुम्ब के अभ्युदय के लिए वेदों में निर्देशित है कि कुटुम्ब के सभी सदस्य LokFkz jrk] /kufyII k¹² b"; k] }sk] dVrk¹³ vl R; ¹⁴ bR; kfn npxk kka l s i wkr-% nj jgrs gq vfrffk l Rdkj ¼, "k ok vfrffk; r- Jkf=; % rLekr-i wkd uk- uh; kr½¹⁵] vkfLrdk¹⁶] l kx Bfud Hkko , oa , drk ¼ ekuh o vkdfrr l ekuk ân; kfu o%¹⁷] vkfFkd l cyrk ¼rkfogg ogrka LOkfra cgq Hkweku ef{kre}¹⁸] 'kkjhjd LoLFkrk¹⁹] LokoyEcu ¼Loroká p i zkk l h p—²⁰ , oa fuHkz; rk ¼xgk ek foHkhr ek oí /oa—²¹ आदि सदगुणों को हृदयंगम करें तथा उनका पालन सुनिश्चित

करें। कुटुम्ब में जब इन सदगुणों का विकास एवं पालन होगा तभी कुटुम्ब सुखद् एवं प्रसन्नमय होगा।

निष्कर्षतः यह देखते हैं कि वेदों में जो कौटुम्बिक आर्दश प्रस्तुत किये गये हैं उनके अनुपालन से पूरा कुटुम्ब i e] l kjknl , oa fo'ocll/kko ds Hkko l s vksri kr gkdj सुखद् एवं प्रसन्नमय जीवनयापन करते हुए आर्दश समाज, राष्ट्र व विश्व का सञ्जन कर सकता है। इस प्रकार वेदों में वर्णित मानव के कौटुम्बिक आर्दशों के चिन्तन, मनन एवं अनुपालन करने की महती आवश्यकता है। वेदों के इस कौटुम्बिक आर्दशों में ही परिवार (व्यष्टि) के साथ साथ राष्ट्र व विश्व (समष्टि) का हित सन्निहित है।

I UnHkz %

1. अथर्ववेद, 3.30.3
2. वही, 3.30.1
3. वही, 3.30.2
4. वही 3.30.2
5. अस्थूरि नो गार्हपत्यानि सन्तु। यजुर्वेद, 2.27
6. ऋग्वेद, 5.43.2
7. ऋग्वेद, 2.13.4
8. ऋग्वेद, 2.38.5
9. यजुर्वेद, 40.2
10. यजुर्वेद, 40.2
11. ऋग्वेद, 10.34.13
12. यजुर्वेद, 40.2
13. सर्वाश्चण्डस्य नप्त्यो नाशयामः सदान्वाः। अथर्ववेद, 2.14.
14. पापासः अनप्ता असत्या इदं पदमजनता गभीरम। ऋग्वेद 4.5.5
15. अथर्ववेद, 9.6.37
16. यजुर्वेद, 40.1
17. ऋग्वेद, 10.191.4। सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनासि जानताम्। ऋग्वेद, 10.191.2
18. अथर्ववेद, 3.24.7
19. ऋग्वेद, 7.54.1
20. यजुर्वेद, 17.85
21. यजुर्वेद, 3.41। मा भर्मा संविक्था...। यजुर्वेद, 6.35

Hkkjr esa lkEinkf; drk dk
l ekt'kkL=h; nf"Vdks k

MKD Jheri dpu*

भारत एक बहुलवादी समाज है। जहाँ पर धर्म के अनेक सकारात्मक कार्य हैं तथा सामाजिक जीवन में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान है, वहीं पर कई बार धार्मिक संकीर्णता बहुलवादी समाजों में धार्मिक एवं साम्प्रदायिक तनाव का कारण भी बन जाती है। किसी भी बहुलवादी समाज में बहुसंख्यक बनाम अल्पसंख्यक का प्रश्न एक अत्यन्त नाजुक मामला माना जाता है। यदि सरकार अल्पसंख्यकों को कुछ विशेष अधिकार एवं सुविधाएँ प्रदान करने का प्रयास करती है तो बहुसंख्यक सम्प्रदाय इसे सरलता से सहन नहीं करता है और इसका विरोध करता है। यदि सरकार बहुसंख्यकों को कुछ सुविधाएँ प्रदान करती है तो अल्पसंख्यक इसे अपना शोषण मानते हैं और अल्पसंख्यक होने के नाते बहुसंख्यकों को दी जाने वाली सुविधाओं से कहीं अधिक सुविधाओं की माँग करने लगते हैं। इससे अल्पसंख्यक एवं बहुसंख्यक सम्प्रदायों में सामाजिक दूरी बढ़ने लगती है तथा अन्ततः इसका परिणाम धार्मिक एवं साम्प्रदायिक तनाव के रूप में सामने आता है। धार्मिक एवं साम्प्रदायिक तनाव को ही साम्प्रदायिकता कहा जाता है। आज भारत में पाई जाने वाली सभी समस्याओं में साम्प्रदायिकता की समस्या सबसे प्रमुख मानी जाती है। यह समस्या इतनी गम्भीर होती जा रही है कि कोई भी सरकार इसका उचित समाधान खोजने में सफल नहीं हो पा रही है और न ही विभिन्न राजनीतिक दलों में इस समस्या के समाधान के बारे में कोई आम राय ही बन पा रही है।

अब तो भारत में शायद ही कोई ऐसा दिन बीतता हो जिस दिन दैनिक अखबार में साम्प्रदायिक दंगों का समाचार न होता तो। यह साम्प्रदायिक के बीच, तो कहीं विभिन्न जातियों के बीच अपना रंग दिखाते रहते हैं। इनके परिणामस्वरूप जन और धन की बहुत हानि होती है और समाज के साम्प्रदायिक सद्भाव के हृदय-पटल पर दरार की गहरी रेखा खिंच जाती है। , l 0, y0 'kek' (S.L. Sharma) के अनुसार यद्यपि भारत में साम्प्रदायिकता का एक लम्बा इतिहास रहा

है तथापि पिछले कुछ वर्षों में यह एक अत्यन्त चिन्ताजनक विषय बन गया है। यह उन क्षेत्रों में भी फैलता जा रहा है जिनमें पहले ऐसा नहीं होता था; उदाहरणार्थ, राजस्थान में जयपुर, उत्तर प्रदेश में बदायूँ तथा मध्य प्रदेश में रतलाम इत्यादि। इसके साथ ही पहले साम्प्रदायिक हिंसा छोटे नगरों तक सीमित थी परन्तु अब वह विकास की ओर अग्रसर व्यापारिक तथा औद्योगिक नगरों (जैसे अहमदाबाद, जमशेदपुर, भिवण्डी, मुरादाबाद आदि) में भी फैलती जा रही है। कुछ नगरों (जैसे अलीगढ़, मेरठ, हैदराबाद आदि) साम्प्रदायिकता की दृष्टि से अत्यन्त संवेदनशील बन गए हैं तथा इनमें सदैव हिंसा का डर बना रहता है। fci hu plnz (Bipin Chandra) ने उचित ही लिखा है, "साम्प्रदायिकता सम्भवतः सबसे गम्भीर समस्या है जिसका सामना भारतीय समाज आज कर रहा है।" इसलिए इस समस्या का समाधान ढूँढना राष्ट्रहित के लिए बहुत आवश्यक है। इस समस्या की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए Mh0vkj0 xks y (D.R. Goyal) ने इस बात पर बल दिया है कि साम्प्रदायिक तनावों तथा उपद्रवों को मौलिक एकता की कमी के सूचक के रूप में देखा जाना चाहिए, न कि एक ऐसे कारक के रूप में जिससे विघटन होता है। यह सत्य है कि इससे एकता में कुछ रुकावट पड़ती है, परन्तु आधुनिक तकनीकी तथा विचारों से ऐसा होना सम्भव है। इस समस्या को सही रूप से आँकने के लिए यह आवश्यक है कि साम्प्रदायिकता के अर्थ एवं कारणों को समझा जाए।

साम्प्रदायिकता एक निम्न कोटि की विभाजनात्मक प्रवृत्ति है जिसके कारण प्रथमतः देश का विभाजन हुआ तथा स्वतंत्रता के पश्चात् साम्प्रदायिक तनावों तथा उपद्रवों ने राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में बाधा डाली है। इन उपद्रवों से हिंसा भड़कती है तथा तनाव पैदा होता है जिससे राष्ट्रीयता एवं राष्ट्र-निर्माण की भावनाएँ प्रभावित होती हैं। साम्प्रदायिकता प्रजातन्त्रीय व्यवस्था में एक कलंक है और राष्ट्र-निर्माण को नुकसान पहुँचाती है।

साम्प्रदायिकता एक आक्रामक राजनीतिक विचारधारा है जो धर्म से जुड़ी होती है। यद्यपि अंग्रेजी भाषा का 'कम्यूनल' शब्द व्यक्ति की अपेक्षा समुदाय या सामुदायिकता से जुड़ा हुआ है, तथापि भारत एवं दक्षिण एशियाई देशों में साम्प्रदायिकता शब्द का प्रयोग इस अर्थ में नहीं किया जाता। साम्प्रदायिकता व्यक्ति में एक ऐसी आक्रामक राजनीतिक पहचान बनाती है कि वह अन्य साम्प्रदायों के लोगों की निन्दा करने या उन पर आक्रमण करने को तैयार हो जाते हैं। साम्प्रदायिकता में धार्मिक पहचान अन्य सभी की तुलना में सर्वोपरि होती है अर्थात् इसमें अमीर-गरीब, व्यवसाय, जाति, राजनीतिक विश्वास इत्यादि के आधार पर अन्तर नहीं होता। भारत में साम्प्रदायिकता एक विशेष मुद्दा मानी जाती है। इसका कारण यह है कि साम्प्रदायिकता समय-समय पर तनाव एवं हिंसा का पुनरावर्तक स्रोत रही है।

*सहायक प्रोफेसर, समाजशास्त्र, राजकीय महिला महाविद्यालय, डी0एल0डब्ल्यू0, वाराणसी, उ0प्र0

vkfFkd , oa l kekftd fo"kerk&

आर्थिक सम्पन्नता के स्तर की दृष्टि से विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों में विषमता है, विशेषतः विकास की प्रक्रिया में कुछ सम्प्रदाय आगे बढ़ गए हैं तो कुछ इस दौड़ में पिछड़ गए हैं। लेकिन सभी के हृदय में विकास के फलों में हिस्सा प्राप्त करने की निरन्तर वृद्धिशील चाह होती है। इसलिए आर्थिक रूप से पिछड़े सम्प्रदायों में यह भावना आ जाती है कि वे सापेक्षिक रूप से उस सब से वंचित कर दिए गए हैं जो उन्हें देय था इसलिए उन हितों की पुनः प्राप्ति के लिए या 'दोषी' को दण्डित करने के लिए धर्म का एक यन्त्र के रूप में प्रयोग किया जाता है। ybl M; wka (Louis Dumont) तथा l rh'k l cjoky (Satish Saberwal) जैसे विद्वानों ने सामाजिक पहचान (विशिष्टता) तथा साम्प्रदायिक पृथक्करण को उभारने में धर्म की महत्त्वपूर्ण भूमिका की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। आर्थिक प्रतिद्वन्द्विता को भी इसका एक कारण माना गया है। vl xj vyh blthfu; j (Asghar Ali Engineer) ने अनेक अध्ययनों के निष्कर्षों के आधार पर हमें यह बताया है कि मुसलमानों व हिन्दुओं में आर्थिक प्रतियोगिता ने भी साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया है। bfEr; kt vgen (Imtiaz Ahmed) ने मुरादाबाद तथा अलीगढ़ में साम्प्रदायिक दंगों का एक कारण पहले से संस्थापित हिन्दू औद्योगिक वर्ग एवं नवोदित मुस्लिम उद्यमिता वर्ग में आर्थिक प्रतियोगिता बताया है।

vlrjk'Vh; dkjd&

आजकल एक देश में साम्प्रदायिक दंगों में और साम्प्रदायिकता के प्रोत्साहन में किसी विदेशी शक्ति का हाथ होना; असामान्य घटना होना नहीं रह गया है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति प्रत्यक्ष रूप से साम्प्रदायिकता का महत्त्वपूर्ण कारक बन गई है। हमारे देश में पंजाब, असम, कश्मीर समस्या और देश में फैले हिन्दू-मुस्लिम दंगों के पीछे विदेशी हाथ ही भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। जैसा कि हाल ही में घटित मुजफ्फर नगर के साम्प्रदायिक दंगों के पीछे विदेशी हाथ होने की आशंका मीडिया में चर्चा का विषय रही।

l kEi nkf; drk ; k l kEi nkf; drk fgd k dk l ekt' kkl=&

भारत के सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री i kO ; kxlnz fl g के अनुसार साम्प्रदायिक हिंसा का अपना एक अलग समाजशास्त्र होता है और यह हिंसा के अन्य सभी रूपों के समाजशास्त्र से भिन्न होता है। इसके अनुसार साम्प्रदायिक हिंसा को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की हिंसा के सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक कारण होते हैं, जबकि साम्प्रदायिक हिंसा के साथ ऐसा नहीं होता। इसका आर्थिक विकास से कोई सम्बन्ध नहीं होता अन्य सभी प्रकार की हिंसा कहीं-न-कहीं गरीबी और असमानता से जुड़ी हुई होती है, जबकि साम्प्रदायिक हिंसा अक्सर पूर्व-नियोजित एवं कुछ लोगों द्वारा निहित

लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए होती है। इन्होंने अपने तथ्य की पुष्टि हेतु आर्थिक रूप से भारत के अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक दृष्टि से सम्पन्न राज्य गुजरात तथा महाराष्ट्र का उदाहरण दिया है, जिनमें साम्प्रदायिक तनाव सबसे अधिक पाया जाता है।

प्रो० योगेन्द्र सिंह के अनुसार, साम्प्रदायिक हिंसा कभी भी, कहीं भी हो सकती है। यह एक नगरीय अवधारणा है और गाँव में अभी इसका प्रभाव लगभग नहीं के बराबर है। इस बार गुजरात में हुए साम्प्रदायिक तनाव का प्रभाव नगरों के इर्द-गिर्द बसे गाँव तक भी पहुँच गया है। इनके अनुसार लोगों में व्याप्त डर उन नगरों में साम्प्रदायिक हिंसा की सम्भावना को बढ़ा देता है जिनमें पहले भी साम्प्रदायिक हिंसा होती रही है। ऐसे नगरों में किसी खास समुदाय की अलग कॉलोनियों की संख्या बढ़ जाती है और इस प्रकार वे साम्प्रदायिक हिंसा के समय अलग से पहचाने जाते हैं। ऐसी अलग कॉलोनियों का सबसे बड़ा नुकसान यह होता है कि समाज का एक समुदाय या दूसरे समुदाय से संवाद कम हो जाता है, समाज का बहुलवाद कमजोर हो जाता है, संकीर्ण मानसिकता पनपने लगती है, जो अगली साम्प्रदायिक हिंसा को जमीन मुहैया कराती है। इनके अनुसार साम्प्रदायिक हिंसा का मूल कारण धार्मिक न होकर राजनीतिक होता है। साम्प्रदायिक तनाव का फायदा उठाकर कुछ नेता टाइप के लोग उस पर राजनीति करने लगते हैं, तब जाकर यह तनाव साम्प्रदायिक हिंसा का रूप ले लेता है।

l nHkz %

1. S.L. Sharma, "Communalism: Trends and Roots" in Competition Affairs, September, 1991, pp. 5-7.
2. Bipan Chandra, "The Way Out" in Seminar, No. 322, June 1986, p. 34.
3. D.R. Goyal quoted in Satish Chandra, K.C. Pande and P.C. Mathur (eds.), Regionalism and National Integration, p. 65.
4. प्रो० इम्तियाज अहमद, "हम वहीं हैं जहाँ विभाजन के पहले खड़े थे", हस्तक्षेप, राष्ट्रीय संहारा, 9 मार्च 2002 ई०, पृ० 2.
5. योगेन्द्र सिंह, "साम्प्रदायिक हिंसा का समाजशास्त्र", हस्तक्षेप, राष्ट्रीय संहारा, 9 मार्च 2002 ई०, पृ० 2.
6. Asghar Ali Engineer, "Roots of Communalism" in Seminar, No. 322, June 1986, p. 24.

efgykvka ds ekuokf/kdkj

Jhefr Hkkouk Bkdj *

मनुष्य को अपनी गरिमा उसमें स्थित प्रतिभा के विकास के लिये एक ओर जहाँ उसे प्रकृति द्वारा जन्म से ही कुछ सुविधाएँ एवं साधन प्रदान किए जाते हैं वहीं दूसरी ओर समाज एवं राष्ट्र से भी उसे कुछ सुविधाओं की आशा होती है जब इन सुविधाओं व साधनों को प्रमाण एवं राज्य द्वारा सहमति व स्वीकृति मिल जाती है तब वह अधिकार के रूप में मनुष्य को प्राप्त हो जाते हैं इस प्रकार यह देखने में आता है कि अधिकारों का सीधा संबंध मनुष्य के समाज में अस्तित्व एवं उसके व्यक्तित्व के विकास से होता है। प्रसिद्ध राजनीतिक विचारक लास्की ने कहा है कि “जिनके बगैर समानता अधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थिति कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता “अधिकारों के क्रम में जब हम मानव अधिकारों की बात करते हैं तो पाते हैं कि मानव अधिकारों की यह अवधारणा अधिकारों की अपेक्षा अधिक व्यापक है । मानव अधिकारों से तात्पर्य उन सब परिस्थितियों व पर्यावरण से होता है जो मानव को मानव के रूप में अपने अस्तित्व को कायम करने व व्यक्तित्व के विकास तथा निर्माण के लिये अनिवार्य होता है । “मानव अधिकार वे अधिकार हैं जो हमारी प्रकृति या स्वभाव में होते हैं इसके अभाव में हम मानव के रूप में हम अपना जीवन व्यतीत नहीं कर सकते ।” मानव अधिकार कभी कभी मौलिक अधिकार या मूल अधिकार या प्राकृतिक अधिकारों के नाम से पुकारे जाते हैं “मौलिक अधिकार वे अधिकार हैं जिनको किसी व्यवस्थापिका द्वारा छीना नहीं जा सकता है “। प्राकृतिक अधिकार मनुष्य तथा नारी दोनों से संबंधित हैं साथ ही वे उनके स्वाभाव के अनुकूल होते हैं इस दृष्टि से मानव अधिकारों की परिधि में केवल प्राकृतिक उपहार जैसे हवा जल,पानी,ही नहीं आते हैं बल्कि इनके साथ साथ सम्मान से जीने, पोषण व रक्षण प्राप्त करने सहित वे सब उपागम जो व्यक्तित्व के विकास के लिये आवश्यक हैं सम्मिलित किया जा सकता है।

*सहा0 प्रो0, राजनीतिशास्त्र, शा0 महाविद्यालय, रेहटी, जिला-सीहोर, म0प्र0

“किसी) फ्र&यहाँ पर षोध की अध्ययन पद्धति का उपयोग किया गया है। इसमें द्वितीयक स्रोत का उपयोग किया जायेगा।

यहाँ यह स्पष्ट करना उचित होगा कि मूल अधिकारों एवं मानव अधिकारों में बुनियादी रूप से कुछ भेद है, सभी मूल अधिकारों को मानव अधिकार नहीं माना जा सकता। जबकि सभी मानव अधिकारों को मूल अधिकारों की श्रेणी के अन्तर्गत रखा जा सकता है। जैसे मत देने का अधिकार विचार अभिव्यक्तित्व की स्वतंत्रता का अधिकार मूल अधिकार है न कि मानव अधिकार क्योंकि इन अधिकारों के बगैर भी मनुष्य अपना अस्तित्व कायम रख सकता है इसके विपरीत जीने एवं सुरक्षा प्राप्त करने के अधिकार मूल अधिकार हैं। और मानव अधिकार भी क्योंकि इनके अभाव में मनुष्य का जीवन खतरे में पड़ सकता है। मनुष्य को जो अधिकार प्राप्त हुए हैं वह जन्म से ही प्रकृति द्वारा प्राप्त होते हैं। प्रसिद्ध राजनीतिक उदारवादी विचारक जानलॉक ने कहा है कि ‘मनुष्य का जीवन स्वतंत्रता एवं सम्पत्ति के अधिकार प्रकृति से प्राप्त हुए हैं जिन्हें राज्य भी छीन नहीं सकता। आज मानव जाति के सामने सबसे बड़ी समस्या सम्मान पूर्वक जीवन यापन की है । पग –पग पर वह तिरस्कृत और असुरक्षित एवं उत्पीड़ित है। मानव जाति पर जितने कहर इन दिनों ढाये जाने लगे हैं, उतने शायद पहले कभी सुनने को नहीं मिलें सबसे ज्यादा पीड़ित तो आज की नारी है, नारी उत्पीड़न की घटनाएँ दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। यह एक प्रमाणित तथ्य है कि दुनियाँ में सबसे ज्यादा अत्याचार महिलाओं के खिलाफ ही होते हैं इस परिप्रेक्ष्य में महिलाओं के मानव अधिकार काफी महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

विश्व के सभी देशों में महिलाओं को विशेष अधिकार दिये गए हैं ताकि वे सम्मान पूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें। प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व तक अधिकांश राष्ट्रों में मानव अधिकारों के अस्तित्व एवं इनकी रक्षा की संस्कृति विकसित हो चुकी थी इसी क्रम में 1920 में राष्ट्र संघ नाम का अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का गठन किया गया। इसी संस्था की मौजूदगी के बावजूद भी संसार की धरती पर द्वितीय विश्व युद्ध लड़ा गया, जिसमें खुलकर मानव अधिकारों की होली जलाई गई, उनको देखकर सारी मानवता सिहर उठी। अन्तर्राष्ट्रीय रंग मंच पर शान्ति की स्थापना एवं मानव अधिकारों की रक्षा के लिये अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ नाम की संस्था का उदय हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा द्वारा 10 दिसम्बर 1948 के प्रस्ताव क्रमांक 217 आ (।।।) द्वारा मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा हुई।

भारत में महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभावों का उन्मूलन करने के अभिसमय एवं समिति को अंगीकृत करने के साथ-साथ महिलाओं के

मानव अधिकारों से संबंधित “वियना घोषणा पत्र” 1993 तथा क्रियान्वयन कार्यक्रम को भी मान्यता दे दी है। उक्त घोषणा पत्र में कहा गया है कि महिलाओं और बच्चियों के मानव अधिकार सार्वदेशिक मानव अधिकारों के अहरणीय अनिवार्य व अविभाज्य भाग हैं। राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक नागरिक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में महिलाओं की समान एवं पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करना तथा उनके साथ किये जाने वाले सभी प्रकार के भेदभावों का उन्मूलन किया जाना अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के प्राथमिक उद्देश्य हैं।

पिछले कुछ वर्षों में भारत के महिला वर्ग में अपने मानव अधिकारों के प्रति पर्याप्त अंश में जागरूकता की अभिवृद्धि हुई है तथा महिलाओं के अनेक गैर-सरकारी संगठन उस दिशा में सक्रिय हो उठे हैं। विशाखा बनाम राजस्थान राज्य 1992 में देश के गैर-सरकारी संगठन की पहल का उदाहरण है इसे बाद में उच्चतम न्यायालय में एक याचिका प्रस्तुत हुई थी जो कि विशाखा नामक एक महिला कर्मचारी के यौन उत्पीड़न से संबंधित था। इन महिला संगठनों ने इसे बाद में एक महिला सामाजिक कार्यकर्ता के साथ उसी के सहयोगियों द्वारा राजस्थान के एक ग्राम में सामूहिक बलात्कार के दृष्टकृत्य का मामला उठाया और माँग की थी कि चूँकि भारत में कर्मचारियों के कार्यस्थल अथवा कार्यालय परिसरों में बलात्कार को प्रतिबंधित एवं मना किये जाने वाली किसी भी विधि का अभाव है अतः न्यायपालिका को भारतीय संविधानों के प्रावधानों, महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव बरतने वाले अपराधों के उन्मूलन अभिसमय तथा तत्संबंधी समिति की महिलाओं के विरुद्ध हिंसा की रोकथाम करने वाली सामान्य संख्या 19 को दृष्टि में रखकर स्वयं एक ऐसी वाद विधि की व्यवस्था करनी चाहिए जो इस क्षेत्र में भारतीय संसद की निष्क्रियता की भरपाई कर सके। उच्चतम न्यायालय के सामने यह प्रश्न था कि महिलाओं को यौन उत्पीड़न से संरक्षण दिलाना वस्तुतः राज्य का दायित्व है?

भारतीय संविधान में यद्यपि लिंग के आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव बरतने का निषेध किया है तथा उन्हें समुचित एवं मानवीय परिस्थितयों में कार्य करने के अधिकार की गारन्टी दी है फिर भी यौन उत्पीड़न से महिलाओं का संरक्षण करने एवं ऐसे अपराध के लिये दोषी व्यक्तियों को दण्डित करने का स्पष्ट शब्दों में उल्लेख नहीं किया गया है। इन परिस्थितयों में उच्चतम न्यायालय ने 1997 में अपना ऐतिहासिक निर्णय सुनाते हुए घोषणा की भारतीय संविधान में महिलाओं के मानव अधिकार की व्याख्या महिलाओं के

विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन करने वाले अभिसमय के प्रावधानों को दृष्टि में रखकर करना चाहिए।

इस न्यायिक निर्णय में यह घोषणा की गई कि यौन उत्पीड़न के अन्तर्गत सभी अवांछित यौन व्यवहार आ जाते हैं, जैसे— उद्देश्यपूर्ण शारीरिक संकेत, यौन क्रियाओं की माँग, अश्लील टिप्पणियाँ, अश्लील चित्रों व साहित्य को दिखलाना, यौनाचार से सम्बन्धित अवांछनीय शारीरिक शब्दिक अथवा संकेतिक आचारण संमिलित हैं।

References

1. मिश्र काशी प्रसाद एवं रस्तोगी गौरीनाथ, अन्तर्राष्ट्रीय विधि, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली 1967 प्र. स. 1673
2. डॉ० वसु दुर्गादास, भारत का संविधान : एक परिचय, बटरवर्थ वाधवा प्रकाशन, नागपुर नौवा संस्करण पुनःमुद्रण 2006
3. कान्स्टीट्यूशन ऑफ इंडिया, इस्टर्न बुक कम्पनी, लखनऊ 1980, पृ० 5
4. एलागा लैड्सवर्ग लेविस –बिंगिग इक्वेलिटी होम, दि युनाईटेड नेशन्स डेवलेपमेंट फण्ड फॉर वीमेन, न्यूयार्क 1998, पृ० 6,7

c) }kjk r'kr Loxl ea tkdj vi uh Loxbkl h
 ekrk egkek; k nsh dks /kek ns'k i nku djus
 dh dFkk % 'kxdkyhu f'kYi dykdshz I kph ds
 I UnHkZ ea
 d'ekj xk're*

प्रस्तुत शोध पत्र में बुद्ध द्वारा तुषित स्वर्ग में जाकर अपनी स्वर्गवासी माता महामाया देवी को धर्मोपदेश प्रदान करने की कथा को शृंगकालीन शिल्पकला केन्द्र साँची के सन्दर्भ में उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है जो कि बुद्ध के जीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है।

बुद्ध द्वारा तुषित स्वर्ग में जाकर अपनी स्वर्गवासी माता महामाया देवी को धर्मोपदेश प्रदान करने की कथा में बुद्ध का अपनी जन्मदात्री माता महामाया देवी के प्रति प्रेम एवं बुद्ध के चमत्कार का वर्णन किया गया है कथानुसार, बुद्धत्व प्राप्ति के पश्चात् बुद्ध को अपनी जन्मदात्री माता महामाया देवी का ध्यान था, जो बुद्ध के जन्म के सातवें दिन ही स्वर्ग सिधार गयी थीं। अतः बुद्धत्व प्राप्ति के पश्चात् बुद्ध अपने ज्ञान का लाभ अपनी स्वर्गवासी माता महामाया देवी एवं देवताओं को कराने के लिए श्रावस्ती से तुषित स्वर्ग की ओर प्रस्थान किये।¹ वहाँ अपनी स्वर्गवासी माता महामाया देवी सहित अन्य देवताओं को धर्म की दीक्षा देकर धर्म लाभ कराया।

धर्म दीक्षा उपदेश हेतु तुषित स्वर्ग जाने से पूर्व बुद्ध ने अपने शिष्य मोगलायान से अपनी स्वर्ग से जल्दी आने का वचन दिया था।² परन्तु तीन माह व्यतीत हो जाने के पश्चात् बुद्ध की अनुपस्थिति की कमी उनके शिष्य मोगलायान को होने लगी। बुद्ध की अनुपस्थिति से विचलित मोगलायान पुनः बुद्ध को देखने की इच्छा से अपने ध्यान को केन्द्रित करके दैवीय शक्ति द्वारा तुषित स्वर्ग को गए जहाँ बुद्ध उपस्थित थे। उन्होंने बुद्ध की अनुपस्थिति के कारण व्याकुल पृथ्वीवासियों की दशा को सूचित करके पुनः पृथ्वी पर आने का

निवेदन किया। तब बुद्ध ने मोगलायान को कुछ सप्ताह उपरान्त वे स्वर्ग से उसके नगर संकिसा में आने का वचन दिया। माता एवं देवताओं को धर्मदीक्षा देकर उस स्वर्ग में चतुर्मास निवास कर देवों से भिक्षा ग्रहण करके वे पृथ्वी की ओर प्रस्थान किये। बौद्ध साहित्य बुद्धचरितम् में बुद्ध द्वारा स्वर्ग में स्थित माता महामाया देवी एवं देवताओं को धर्म लाभ कराके चतुर्मास स्वर्ग में निवास करके पृथ्वी की ओर प्रस्थान करने का उल्लेख मिलता है।³ बुद्ध का स्वर्ग से पृथ्वी की ओर प्रस्थान हेतु देवताओं ने सीढ़ियों का निर्माण किया। बौद्ध ग्रन्थ बुद्धचरितम् एवं दिव्यवदान में यह उल्लेख मिलता है कि स्वर्ग से पृथ्वीलोक में बुद्ध के प्रस्थान के समय बुद्ध को पीछे दाहिनी ओर श्वेतवस्त्र एवं कमण्डलु धारण किये हुए ब्रह्मा दाहिनी ओर सीढ़ी से एवं छत्र लिए हुए शक (इन्द्र) बायीं ओर की सीढ़ी से तथा इन दोनों देवों के बीच की सीढ़ी से बुद्ध उतरे साथ ही शान्त व स्वच्छन्द हृदय से युक्त देवतागण अपने विमान पर बैठकर बुद्ध को पृथ्वीलोक की ओर जाते देखने लगे।⁴ वहीं पृथ्वी से बहुत से राजाओं ने ऊँचा मुँख करके सूर्य के समान तेजस्वी बुद्ध का सम्मान करते हुए हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम करते हुए ऊँच स्वर से जय-जयकार किया। बौद्ध ग्रन्थ अवदानशतक तथा दिव्यावदान के अनुसार जब बुद्ध स्वर्ग से पृथ्वी पर संकिसा नगर में उतरे तब अनेक राजाओं महाराजाओं सहित नगर के अनेक नागरिक बुद्ध के दर्शन एवं पूजन के लिए उपस्थित हुए।

भिक्षुणी उत्पलवर्गा के मत में स्वर्ग से उतरते हुए बुद्ध का प्रथम पूजन करने की तीव्र इच्छा जागृत हुई। अतः बुद्ध की कृपा से वह भिक्षुणी उत्पलवर्णा तक चक्रवर्ती राजा तत्काल बन गई एवं सब राजाओं महाराजाओं एवं नागरिकों के मध्य खड़ा होकर बुद्ध का प्रथम पूजन व दर्शन का लाभ प्राप्त किया।

इस प्रकार श्रावस्ती से स्वर्ग जाकर अपनी स्वर्गवासी माता महामाया देवी एवं देवताओं को धर्मदीक्षा देकर स्वर्ग से पृथ्वी पर संकिसा नगर में अवतरण बुद्ध के अन्य अलौकिक चमत्कारों में से एक था।

शृंगकालीन शिल्पकलाकेन्द्र साँची के उत्तरी तोरण द्वार के दाहिने स्तम्भ के अग्र भाग के प्रथम दृश्य में तुषित स्वर्ग से बुद्ध के अवतरण का दृश्य अंकित किया गया है, जिसकी ऊपरी भाग में बुद्ध ने अपने पद चिन्ह एवं बोधि वृक्ष के प्रतीक रूप में उपस्थित है जिसकी सभी देवी-देवता हाथ जोड़कर नमन करते हुए अंकन किया गया है। इस दृश्य में माता महामाया की पहचान करना कठिन है। इस दृश्य का अर्थ यह है कि बुद्ध स्वर्ग में स्थित माता महामाया देवी एवं देवताओं को धर्मोपदेश प्रदान कर रहे हैं। स्वर्ग से नीचे की तरफ सीढ़ी की ओर दो देवी का अंकन किया गया है जिसमें छत्र लिए हुए एक देव इन्द्र हैं परन्तु दूसरे देव के स्वरूप की पहचान करना कठिन है। उस

*शोध छात्र, सामाजिक विज्ञान विभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत वि'वविद्यालय, वाराणसी, ३0900

दूसरे देव श्वेतवस्त्र धारण किये हुए हैं साथ ही अपने दाहिने हाथ में कमण्डलु एवं बाये हाथ में कमल लिए हुए हैं। इस स्वरूप के आधार पर इस देव को ब्रह्मा ही माना गया है। इन दोनों देवों के मध्य सीढ़ी पर बुद्ध पद-चिन्ह के माध्यम से ही उपस्थित थे। साथ ही ढोल बजाते हुए देवगणों का भी अंकन किया गया है। इस दृश्य का अर्थ है कि बुद्ध तुषित स्वर्ग से पृथ्वी की ओर प्रस्थान कर रहे हैं और उनके पीछे ब्रह्मा एवं इन्द्र अनुचर की भौति चल रहे हैं और देवतागण ढोल बजाकर उत्सव मनाते हुए बुद्ध की विदाई कर रहे हैं। सीढ़ी के नीचे उपस्थित बोधिवृक्ष का दर्शन-पूजन सभी उपासक राजा महाराजा एवं नागरिक अपने परिवारों सहित कर रहे हैं। इस दृश्य के अंकन का अर्थ यह है कि बुद्ध तुषित स्वर्ग से पृथ्वीलोक के संकिसा नामक नगर में अवतरित हो चुके हैं, और सभी राजा-महाराजा एवं नागरिक अपने परिवारों सहित बुद्ध का दर्शन-पूजन कर रहे हैं।

I UnHkZ %

1. बुद्धचरितम्, द्वितीयो भागः, विंशतितमः सर्गः, श्रावस्तीवासिभिः सम्यक् श्लोक-64, पेज नं० 70। ठाकुर अमरनाथ, बुद्धा एण्ड बुद्धिस्ट सेनोइस इन इण्डिया एण्ड ऐबरोड, 1996 पेज नं०-72। थामस इडवार्ड0 जे, द हिस्ट्री ऑफ बुद्धिस्ट थाउट, 1933, पुनमुद्रण (रिप्रिन्ट), 1963 द्वितीय संस्करण पेज नं० 142। डॉ० सिंह, शीला; बुद्ध और बोधिवृक्ष (दक्षिण-पूर्व एशिया के सन्दर्भ में) पेज नं० 93
2. नागर, शान्तिलाल, बुद्धा इव गान्धार आर्ट एण्ड अदर बुद्धिस्ट साइट्स, 2010 पेज नं० 353
3. बुद्धचरितम्, द्वितीयो भागः, विंशतितमः सर्गः दिदीक्षे मांतर, श्लोक-65, पृ० 70
4. बुद्धचरितम्, द्वितीयो भागः, विंशतितमः सर्गः, देवाः शान्तिमुपागताः, श्लोक-66, पेज नं०-70, ठाकुर अमरनाथ, बुद्धा एण्ड बुद्धिस्ट सेनोइस इन इण्डिया एण्ड ऐबरोड, 1996 पेज नं०-72 लेमोट्टे, इ हिस्ट्री ऑफ इण्डियन बुद्धिज्म फ्रॉम द ओरिजिन्स टू द साका ऐरा, 1988, पेज नं० 20
5. मार्शल, सर जॉन, ए गाइड टू साँची, द्वितीय संस्करण, 1936 पेज नं० 61, 62, 71 मित्रा देबला, साँची, द्वितीय संस्करण, 1965 पेज नं०-37 परिमू, रतन, लाइफ ऑफ बुद्धा इन इण्डियन स्कल्पचर (अशाता-माना-प्रतिहारी) इन आइकनोलॉजिकल ऐनालाइसिस, 1982 पेज नं०-53,54

ukjh I ekt ds cnyrs vk; ke

foHkk fl g*

आज की दुनियाँ कुल मिलाकर अपेक्षाकृत तेजी से बदल रही है और यह परिवर्तन कई क्षेत्रों में दिखाई दे रही है। सामाजिक दृष्टिकोण से महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों में अधिक परिवर्तन आये है किन्तु स्वतंत्रता के बाद भारतीय नारियों के दृष्टिकोण में भी व्यापक परिवर्तन आया है। नारी समाज की अपेक्षिक मुक्ति घरों की चहारदीवारियों से निकलकर बाहरी दुनिया में हलचल पैदा कर रही है।

लगभग पचास वर्षों में भारत में जो सामाजिक परिवर्तन हुए उनसे यहाँ की पूरी आबादी प्रभावित हुई है। समाज के कुछ वर्गों पर इसका असर अधिक पड़ा है जैसे ग्रामीण समाज की अपेक्षा नगरीय समाजों में परिवर्तन अधिक दृष्टिगोचर हो रहे हैं। मध्यवर्गीय परिवारों में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में अधिक परिवर्तन हुआ है। इन परिवर्तनों के दौर से ग्राम्य जीवन भी अछूता नहीं रह पाया है। आधुनिकीकरण के युग में आधुनिक शिक्षा रोजगार के समान अवसर समानता की अभिव्यक्ति एवं स्वतंत्रता ने लगभग पूरी समाज व्यवस्था में परिवर्तन के संकेत दे रहे हैं।

परम्परागत भारतीय समाज में जहाँ उच्च एवं मध्य वर्ग की स्त्रियों को घरों से बाहर निकलकर नौकरी या पेशा करने की सख्त मनाही थी। वहीं आज ग्रामीण समाज में भी स्त्रियों को बाहर निकलकर नौकरी आदि की सुविधा के लिए उनके परिवारजन खास कर उनके पति भी उनके प्रति सहानुभूतिपूर्वक प्रयास कर रहे हैं।

स्वीडेन के समाजशास्त्री गुस्ताफगीगर ने लिखा है कि 'किसी समाज में स्त्रियों की जो स्थिति होती है उससे उस विकास को सही सही नापा जा सकता है।' इसी प्रकार का कथन मार्क्स ने भी दिया है कि 'स्त्रियों की सामाजिक स्थिति से सामाजिक प्रगति को ठीक ठीक मापा जा सकता है।'

*शोधछात्रा समाजशास्त्र, का०न०रा० महाविद्यालय, ज्ञानपुर, भदोही, उ०प्र०

इन विद्वानों के वक्तव्यों से स्पष्ट हो जाता है कि नारियों के विकास के बिना कोई भी समाज प्रगति नहीं कर सकता है और न ही पूर्व विकसित समाज की ही श्रेणी में रखा जा सकेगा।

परम्परागत भारतीय हिन्दू स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में भी अब परिवर्तन हो रहे हैं। आज हिन्दू नारी समाज में अपना अलग पहचान बनाने जा रही है। आज परम्परागत दृष्टिकोणों को लोग तार्किकता के आधार पर समझने का प्रयास कर रहे हैं। आज हिन्दू भारतीय नारी अपने मूल्यों को परिवर्तित कर रही हैं वे घर से बाहर निकल कर पुरुषों के समान अपने अधिकारों की माँग कर रही हैं। भारतीय समाज में उनके व्यवहारों कर्मकाण्डों रीतिरिवाजों इत्यादि में भी परिवर्तन दिखाई पड़ रहा है।

इस प्रकार हम खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा इत्यादि में भी उनके परिवर्तनों को देख सकते हैं। जहाँ पर वे परम्परागत वस्त्र आभूषणों का प्रयोग करती थी वहीं आज फैशन के दौर में शामिल हो रही हैं उनके पोशाक एवं खानपान पर आधुनिकीकरण का प्रभाव दिखाई दे रहा है।

ओटन ने बंगाल की वीमेन कालेज कलकत्ता में सम्पूर्ण भारतीय महिलाओं को सम्बोधित करते हुए कहा है कि 'स्त्रियों एक आवाज में कहें कि वे क्या चाहती हैं और तब तक कहती रहें जब तक कि उनकी मांग पूरी न हो जाय।

अखिल भारतीय सम्मेलन 1931 को सम्पादित हुआ जिसकी अध्यक्षता मुथुलक्ष्मी रेड्डी ने की और उसी तिथि अर्थात् मार्च 1931 को महिला दिवस के रूप में मनाया गया।

भारतीय हिन्दू स्त्रियों की स्थिति के सम्बन्ध में प्रो० एम० एन० श्रीनिवास ने लिखा है कि पश्चिमीकरण लौकिकीकरण जातीय गतिशीलता ने स्त्रियों की सामाजिक आर्थिक स्थिति को उन्नत करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आज स्त्री शिक्षा का प्रसार हुआ है अनेक स्त्रियाँ आत्मनिर्भर होती जा रही हैं अनेक सामाजिक अधिनियमों ने स्त्रियों को निर्योग्यताओं को समाप्त करने और उन्हें सामाजिक कुरीतियों से छुटकारा दिलाने में योग दिया है।

शिक्षा के क्षेत्र में वर्तमान समय में स्त्रियों में पर्याप्त सुधार हुआ है और निरन्तर आगे बढ़ रही है। 1951 की जनगणना के अनुसार 1000 स्त्रियों में केवल 79 स्त्रियाँ शिक्षित थी। जहाँ 1983 में पहली बार एक लड़की ने बी० ए० की परीक्षा पास की थी वहीं आज उनकी संख्या निरन्तर बढ़ रही है। कला के क्षेत्र में भी स्त्रियाँ अब पुरुषों से पीछे नहीं रहीं। के० एम० पाणिक्कर ने लिखा

है कि 'स्त्रियों की शिक्षा एवं उनकी राजनीतिक जागृति ने उस कुल्हाड़ी को तेज कर दिया है जिसकी सहायता से हिन्दू सामाजिक जीवन की जंगली झाड़ियों को साफ करना संभव हो गया है।

जहाँ पर भारतीय हिन्दू समाज में स्त्रियाँ विवाह को जन्म जन्मान्तर का सम्बन्ध मानती थी वहीं आज आधुनिकीकरण एवं पश्चिमीकरण के मूल्यों से प्रभावित होकर वे विवाह सम्बन्ध की अनिवार्यता को समाप्त करने और तलाक आदि दृष्टिकोणों से प्रभावित हुई हैं।

आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में हिन्दू स्त्रियों ने महती प्रगति की है। नौकरी के क्षेत्र में वे परम्परागत व्यवहारों को छोड़ कर पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिला कर चल रही हैं। खेल के क्षेत्र में पी० टी० उषा, प्रशासन के क्षेत्र में किरण बेदी एवं रेल के क्षेत्र में सुरेखा भोंसले आदि ने उल्लेखनीय प्रगति की है। सेना एवं पुलिस में भी बराबर की भूमिका निभा रहीं हैं।

हेल्सन ने लिखा है कि 'चालू अध्ययनों का उद्देश्य इस धारणा पर आधारित है कि स्त्रियाँ उन क्षेत्रों में भी पूरी तरह और बराबरी के स्तर पर काम कर सकती हैं जिन पर पुरुष अब तक अपना एकाधिकार मानते रहे हैं।

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक हिन्दू नारी आज परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। जहाँ उन्हें वैदिक युग में पुरुषों के समान स्थान प्राप्त था। वहीं पर उत्तर वैदिक युग आते आते उनकी दशाओं में गिरावट आई है जिसका क्रम 20वीं सदी में प्रवेश के बाद समाप्त हो गया। आज एक बार फिर भारतीय हिन्दू नारी अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक हुई है। वे देश की प्रधान मंत्री व देश की भाग्य निर्मात्री हुई हैं।

I UnHk %

1. इवेन लाइन सुलेरोट 'वुमन सोसाइटी एण्ड चेन्ज' 1971, पृ० 14
2. लेबर ब्यूरो रिपोर्ट 1953, भारत सरकार, पृ० 1
3. श्री ओटन 'ए काल टू एक्शन 27 जुलाई 1926
4. पांचवे अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की कार्यवाही 1931
5. डा० एम० एन० श्रीनिवास 'सोसल चेन्ज इन मार्डन इंडिया'।
6. के० एम० पाणिक्कर 'हिन्दू सोसाइटी ऐट क्रास रोड्स, पृ० 36
7. रैवेना हेल्सन, 'द चेंजिंग इमेज आफ द कैरियर वीमन 1972, पृ० 33-44

Q: [kckn tui n ds ek/; fed Lrj ds xkeh.k
 {ks= ds fo | kfFkz; ka dh 'kF{k d mi yfC/k i j ?kj syw
 okrkoj .k ds i Hkko dk v/; ; u
 Mko jat uk fl g*

उपलब्धि शैक्षिक परिश्रम का आखिरी उत्पादन है। विद्यालय अथवा महाविद्यालय में होने वाली सभी शैक्षिक कोशिशों का आशय यह है कि यह देखा जाए कि सीखने वाले ने क्या उपलब्धि प्राप्त की है? इसकी पुष्टि छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान, बोध, कौशल, अनुप्रयोग आदि योग्यताओं की मात्रात्मक अभिव्यक्ति से है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के द्वारा छात्रगण अपनी विभिन्न बौद्धिक योग्यताओं का विकास करते हैं। छात्रों ने किस सीमा तक अपनी बौद्धिक योग्यताओं का विकास किया, यही उसकी उपलब्धि का सूचक होता है। विद्यार्थियों की उपलब्धि उच्च है या निम्न यह उसको मिलने वाले वातावरण पर निर्भर करता है।

विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को मुख्य रूप से दो कारक सबसे अधिक प्रभावित करते हैं— विद्यालय और घरेलू वातावरण। जर्मन शिक्षा शास्त्री पेस्तालॉजी ने कहा है— “गृह प्रेम और स्नेह का केन्द्र है, शिक्षा का सर्वोत्तम स्थान है और बच्चे का सर्वप्रथम विद्यालय है।” जहां पर उपयुक्त वातावरण के द्वारा उनके शारीरिक, मानसिक, सांस्कृतिक, चारित्रिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास की आधारशिला रखी जाती है।

विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के सम्बन्ध में सेल्यूर, आर0 बी0 (1979) ने बताया कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का उनके घरेलू वातावरण से सम्बन्ध होता है। जैन, एस (1965) ने बताया कि परिवारिक वातावरण का प्रभाव उपलब्धियों पर सकारात्मक एवं अर्थपूर्ण होता है। दवे, पी0 एन एण्ड दवे, जे0 पी (1971) ने एक अध्ययन में पाया कि श्रेणी प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों का एक ऊँचा प्रतिशत ऐसे गृह पर्यावरण से सम्बन्धित

था, जिनके माता-पिता ऊँची आय, व्यवसाय और शिक्षा रखते थे। रेड्डी, वी0 एल (1973) ने बताया कि शैक्षिक उपलब्धियों को निर्धारित करने में बुद्धि के बाद घरेलू वातावरण का महत्वपूर्ण योगदान है।

शैक्षिक उपलब्धि और घरेलू वातावरण से सम्बन्धित कतिपय अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि और उनको मिलने वाला घरेलू वातावरण एक दूसरे से सम्बन्धित है। यदि किसी विद्यार्थी को उसके अभिभावकों के द्वारा उचित मनो-सामाजिक वातावरण प्रदान किया जाता है तो निश्चित रूप से उसकी उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ेगा। फर्रुखाबाद जनपद एक पिछड़ा क्षेत्र है। यहाँ की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। जिनमें अधिकतर अभिभावक या तो अर्द्धशिक्षित या अशिक्षित हैं। निश्चित रूप से यहाँ के विद्यार्थियों को मिलने वाले परिवारिक वातावरण में भिन्नता होगी, जिसका प्रभाव विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर भी पड़ेगा। अतः विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर घरेलू वातावरण के प्रभाव को जानने हेतु तथा इस क्षेत्र में पर्याप्त अनुसन्धान न किये जाने के कारण यह विषय आंशिक शोध हेतु चुना गया है। विशेष कर फर्रुखाबाद जनपद के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों पर ऐसे अध्ययनों का नितान्त अभाव है। इस दृष्टि से यह अध्ययन अत्यन्त आवश्यक तथा महत्वपूर्ण है।

mnas; % प्रस्तुत समस्या के अध्ययन का उद्देश्य, “माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर परिवारिक वातावरण के प्रभाव” का अध्ययन करना है।

ifjdyiuk % प्रस्तुत अध्ययन में दिशायुक्त परिकल्पना का प्रयोग किया गया है। जो अग्रलिखित प्रकार से है — “उच्च एवं निम्न घरेलू वातावरण वाले माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर है।”

lhekdu % 1. प्रस्तुत अध्ययन में फर्रुखाबाद जनपद के माध्यमिक स्तर के कक्षा 10 के छात्र — छात्राओं का चयन किया गया है। 2. इस अध्ययन में केवल ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों को ही रखा गया है। 3. इस अध्ययन में केवल 200 विद्यार्थियों को ही शामिल किया गया है।

vuq U/kku fof/k % प्रस्तुत अध्ययन हेतु “वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि” का प्रयोग किया गया है।

U; kn' kZ % प्रस्तुत अध्ययन हेतु “सोद्देश्य न्यादर्श विधि” द्वारा चयनित ग्रामीण क्षेत्र के चार माध्यमिक विद्यालयों से कक्षा 10 के 200 विद्यार्थियों जिनमें 100 छात्र तथा 100 छात्राओं का चयन न्यादर्श चयन की ‘आकस्मिकता विधि’ द्वारा

*असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, बंदी विशाल पी0जी0 कालेज, फर्रुखाबाद, उ0प्र0

किया गया है। चूंकि अध्ययन विशिष्टता उच्च तथा निम्न घरेलू वातावरण वाले विद्यार्थियों से सम्बन्धित है। अतः शैक्षिक उपलब्धि पर घरेलू वातावरण के प्रभाव के अध्ययन हेतु $M \pm 1SD$ की सहायता से घरेलू वातावरण को उच्च तथा निम्न वर्ग में विभाजित किया गया है।

midj.k %

1. प्रस्तुत अध्ययन में आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए डॉ० के० एस० मिश्र द्वारा निर्मित "गृह पर्यावरण सूची" का प्रयोग किया गया है। गृह पर्यावरण सूची में 100 मद हैं, जो कि निम्नलिखित हैं। नियन्त्रण, संरक्षात्मकता, दण्ड, समरूपता, सामाजिक पृथक्करण, पुरस्कार, विशेषाधिकार का हनन, पालन – पोषण, अस्वीकृति तथा पालन पोषण। प्रत्येक आयाम से सम्बन्धित 10 प्रश्न हैं।
2. शैक्षिक उपलब्धि का मापन करने के लिए न्यादर्श में सम्मिलित कक्षा 10 में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों की पिछली कक्षा के प्राप्तांकों का प्रतिशत प्रयोग किया गया है।

Lkkf [; dh i fof/k; k % प्रस्तुत अध्ययन में आँकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात का प्रयोग किया गया है।

vkqMka dk fo' ysk.k , oa0; k [; k % उच्च घरेलू वातावरण वाले विद्यार्थियों तथा निम्न घरेलू वातावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना –

वर्ग	उच्च घरेलू वातावरण वाले विद्यार्थियों		निम्न घरेलू वातावरण वाले विद्यार्थियों		प्रतिशत	वर्णन
	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन		
विद्यार्थियों	86.21	8.78	87.98	11.8	88.21	उच्च
विद्यार्थियों	72.89	8.91	85.02	11.2	85.02	उच्च
उच्च	176.82	8.28	71.28	8.88	71.28	उच्च
विद्यार्थियों	74.71	8.87	72.88	8.88	72.88	उच्च
विद्यार्थियों	78.82	8.78	85.02	11.8	85.02	उच्च
विद्यार्थियों	78.81	8.87	85.02	11.8	85.02	उच्च
विद्यार्थियों	82.81	7.88	85.02	8.88	85.02	उच्च
उच्च	72.89	7.88	85.02	8.88	85.02	उच्च
विद्यार्थियों	71.88	8.78	71.28	8.88	71.28	उच्च
विद्यार्थियों	88.21	8.78	87.98	11.8	88.21	उच्च

.05 सार्थकता स्तर का मान 1.98

.01 सार्थकता स्तर का मान 2.63

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि उच्च तथा निम्न स्तर के दण्ड, समरूपता, विशेषाधिकार का हनन तथा अस्वीकृति वाले ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों का क्रान्तिक अनुपात सार्थकता मान से कम है। अतः इन विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर नहीं है। इससे यह ज्ञात होता है कि इन विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में समानता है।

घरेलू वातावरण के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र के उच्च तथा निम्न स्तर की संरक्षात्मकता, पुरस्कार, पालन-पोषण एवं उन्मुक्तता वाले विद्यार्थियों का क्रान्तिक अनुपात सार्थकता मान से अधिक है। इसका आशय है कि इस विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर है। तालिका से स्पष्ट है कि उच्च स्तर की संरक्षात्मकता, पुरस्कार, पालन-पोषण तथा उन्मुक्तता वाले विद्यार्थियों का मध्यमान, निम्न स्तर की संरक्षात्मकता, पुरस्कार, पालन-पोषण तथा उन्मुक्तता वाले विद्यार्थियों से अधिक है। अतः उक्त आयामों पर उच्च स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि, निम्न स्तर के विद्यार्थियों से अधिक है।

माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के उच्च तथा निम्न स्तर के नियन्त्रण तथा सामाजिक पृथक्करण वाले विद्यार्थियों का क्रान्तिक अनुपात सार्थकता मान से अधिक है। अतः इन विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर है। तालिका पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट है कि निम्न स्तर के नियन्त्रण तथा सामाजिक पृथक्करण वाले विद्यार्थियों का मध्यमान, उच्च स्तर के नियन्त्रण तथा सामाजिक पृथक्करण वाले विद्यार्थियों के मध्यमान से अधिक है। अतः उक्त दोनों आयामों पर निम्न स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि, उच्च स्तर के विद्यार्थियों से अधिक है।

fu"d"kl %

आँकड़ों के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष इस प्रकार है।

1. गृह पर्यावरण के अन्तर्गत उच्च तथा निम्न दोनों स्तरों के दण्ड, समरूपता, विशेषाधिकार का हनन, तथा अस्वीकृति वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में समानता थी।
2. ग्रामीण क्षेत्र के उच्च स्तर की संरक्षात्मकता, पुरस्कार, पालन – पोषण एवं उन्मुक्तता प्राप्त वातावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अधिक पायी गयी।
3. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण क्षेत्र के निम्न स्तर के नियन्त्रण तथा सामाजिक पृथक्करण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अधिक पायी गयी।

mi kns rk %

शोध का परिणाम शैक्षिक निर्देशन, अभिभावकों एवं प्रशासकों के लिए उपयोगी है। स्थापित सामान्यीकरण के प्रकाश में उच्च शैक्षिक उपलब्धि वाले छात्रों को उच्च शैक्षिक लक्ष्यों को निर्धारित करने की दिशा में आगे बढ़ा सकते हैं तथा निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले छात्रों को अभिभावकों के द्वारा उचित मनोसामाजिक वातावरण प्रदान करके उनकी शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाया जा सकता है जो कि व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

I UnHkz %

1. कपिल, एच० के (1999) अनुसन्धान विधियाँ, भार्गव बुक डिपो, कचहरी घाट, आगरा।
2. गुप्ता, एस० पी (2001) आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
3. गुप्ता, रामबाबू (1999) शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, अलका प्रकाशन, कानपुर।
4. जैन, एस० (1965), गृह पर्यावरण एवं शैक्षिक उपलब्धि के बीच सम्बन्ध पर एक प्रयोगात्मक अध्ययन, पी-एच० डी, शिक्षाशास्त्र, आगरा, वि० वि०।
5. दुबे, पी० एन० एण्ड दुबे, जे० पी० (1971) असफल विद्यार्थियों और रैंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों की अशाब्दिक बुद्धि का उनकी सामाजिक – आर्थिक पर्यावरण से सम्बन्ध का अध्ययन, आर० सी० ई० मैसूर वि० वि०।
6. रेड्डी, बी० एल (1973) प्रथम वर्ष की स्नातक परीक्षा की शैक्षिक उपलब्धियों से सम्बन्ध निश्चित कारकों का एक अध्ययन, पी० – एच० डी० मैसूर वि० वि०।
7. लाल, रमन बिहारी (2005), शिक्षा के सिद्धान्त, रस्तोगी पब्लिकेशन्स गंगोत्री शिवाजी रोड, मेरठ।
8. सेल्यूर, आर० वी० (1999) ए स्टडी ऑफ द होम एनवायरमेण्ट सोशियो इकोनामिक स्टेट्स एण्ड एकोनामिक मैनेजमेन्ट इन रिलेशन टू द एकेडमिक एचीवमेन्ट आफ द फस्ट ईयर कालेज स्टूडेन्ट्स आफ एम० एस० यूनिवर्सिटी।

I kekftd foKkuka ea vuq U/kku

I eL; k dh i gpk

MkK jekn dpekj ek\$ z*

सामाजिक अनुसन्धान चाहे किसी भी प्रकार का हो, अनुसन्धान समस्या की पहचान अनुसन्धान का पहला चरण है। परन्तु अनुसन्धान विषय का चयन कर लेने का यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि वही विषय अनुसन्धान के लिए अनुसन्धान का वास्तविक विषय भी बन जाय। विषय का चयन करने के उपरान्त एक अनुसन्धानकर्ता इस स्थिति में नहीं होता कि वह सोचने लगे कि उद्देश्य के लिए कौन से आँकड़े उपयोगी हैं तथा किस पद्धति द्वारा उनका संकलन व विश्लेषण किया जाय। इन पहलुओं पर ध्यान देने से पहले उसे एक विशेष अध्ययन समस्या के निर्धारण की आवश्यकता होती है। एक अनुसन्धान समस्या के रूप में विषय का चुनाव या सूत्रीकरण वैज्ञानिक अनुसन्धान का प्रथम चरण है और अनुसन्धान के निर्धारण का प्रथम सोपान समस्या को अवलोकन के योग्य व सुस्पष्ट बनाना है।'

वास्तविकता यह है कि किसी भी सामाजिक अनुसन्धानकर्ता के लिए अनुसन्धान के विषय अथवा समस्या का चुनाव करना एक कठिन काम होता है। कारण यह है कि प्रत्येक समाज में सामाजिक जीवन से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों अथवा समस्याओं की संख्या इतनी अधिक होती है कि अनुसन्धान के लिए एक सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा ही उनमें से किसी सही और व्यवहारिक समस्या का चुनाव किया जा सकता है। दूसरी कठिनाई यह है कि अनुसन्धानकर्ता जब किसी समस्या का चुनाव करके उसके विभिन्न पक्षों का अवलोकन करता है, तब इससे प्राप्त तथ्य पुराने सिद्धान्तों से अक्सर काफी भिन्न होते हैं। जैसे—सिद्धान्त इस प्रकार की भविष्यवाणी कर सकता है कि किसी विशिष्ट प्रकार के समाज में आत्महत्या का स्तर निम्न पाया जाता है परन्तु अवलोकन

से कुछ दूसरे तरह के निष्कर्ष सामने आ सकते हैं। समस्या का यह एक उदाहरण है जिसे सैद्धान्तिक परिस्थिति में अनुभव करना पड़ता है। यद्यपि एक अनुसन्धान विषय के चयन का निर्धारण वैज्ञानिक तर्कों के बिना भी किया जा सकता है लेकिन अनुसन्धान समस्या के रूप में विषय का निर्धारण वैज्ञानिक खोज का प्रथम चरण होने के कारण इसे वैज्ञानिक कार्य-प्रणालियों से अलग करके व्यवहार में नहीं लाया जा सकता है। इसके पश्चात् यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि कोई ऐसा सुस्पष्ट नियम नहीं है जो एक दिये गये अनुसन्धान क्षेत्र के विषय में महत्वपूर्ण प्रश्नों के निर्धारण में अन्वेषक का पथ-प्रदर्शन करेगा।¹ इस कार्य में व्यक्ति के प्रशिक्षण और योग्यता का प्रमुख महत्व है। टाउनसेण्ड ने कहा है कि "एक अध्ययन-समस्या समाधान हेतु प्रस्तावित एक प्रश्न है।"²

आज परम्परागत सामाजिक विज्ञानों में अनुसन्धानकर्ता अध्ययन भी कर रहे हैं लेकिन उनका गुणात्मक स्तर शोचनीय है। फलस्वरूप अनुसन्धान प्रारम्भ करते समय अनुसन्धान समस्या की पहचान आवश्यक होती है।³ प्रस्तुत अध्ययन इसी दिशा में एक प्रयास है। सामाजिक विज्ञानों में अनुसन्धान करने से पूर्व उसकी विस्तृत रूपरेखा तैयार करनी आवश्यक है। अनुसन्धान की सफलता काफी हद तक अनुसन्धान के आयोजन पर निर्भर करती है। अनुसन्धान आयोजन के लिए समस्या की पहचान, अनुसन्धान का उद्देश्य, विषय क्षेत्र, अनुसन्धान की प्रकृति, समय, अध्ययन स्रोत, अध्ययन विधि, सांख्यिकीय इकाई, अध्यायीकरण आदि का निर्माण करना जरूरी है।

अनुसन्धानकर्ता जिस विशेष समस्या को अनुसन्धान विषय के रूप में प्रस्तुत करना चाहता है, उसकी विषयवस्तु के क्षेत्र के बारे में उसे पुरी जानकारी होनी चाहिए। यह जानकारी प्राथमिक अवलोकन द्वारा ही सम्भव है। कोहन तथा नेगेल ने कहा है कि जिस स्थिति को सामान्य लोग केवल एक मामूली तथ्य समझकर छोड़ देते हैं, वैज्ञानिक दृष्टि से अनुसन्धान के लिए वही एक संवेदनशील कठिनाई प्रतीत होती है जिसके बारे में अनुसन्धानकर्ता अनुसूची के माध्यम से विभिन्न प्रकार के प्रश्न करके उसके व्यापक पक्षों को देखना आरम्भ कर देता है। इसी विशिष्ट बोध को वैज्ञानिक बौद्धिकता कहते हैं।⁴ शोध समस्या की पहचान में अनुसन्धानकर्ता को पुरी तरह से स्पष्टता का होना आवश्यक है कि वह जिस समस्या को अनुसन्धान का आधार बनाना है उसी समस्या विशेषकर शोध होने जा रहा है, उसके प्रत्येक पक्ष पर पूर्ण रूप से विचार कर लेना चाहिए। जैसे अनुसन्धानकर्ता 'बाल-अपराध' की समस्या

के विषय में जानकारी प्राप्त करना चाहता है तो उसे व्यवस्थित व गहन ज्ञान प्राप्त करने के लिए बन्दीगृहों, बाल-केन्द्रों, बाल-न्यायालयों, बाल-अपराधियों के परिवारों तथा अधिक अपराध वाले क्षेत्रों के बारे में तथा बाल-अपराधी तथा उसके परिवार के सदस्यों का साक्षात्कार करके भी उसके जीवन के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त कर तथा संकलित करना होगा।

अनुसन्धान समस्याओं के स्रोत-

1. सम्बन्धित साहित्य- पी०पी० यंग का कथन है कि अनुसन्धान विषय से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन करने से अनुसन्धाकर्ता को अवधारणाओं को समझने में सहायता मिलती है तथा अनेक मान्यताओं का सत्यापन करने के तरीकों का ज्ञान हो जाता है। इससे तथ्यों के अनावश्यक संग्रह की सम्भावना कम हो जाती है तथा अध्ययन कहीं अधिक व्यवस्थित बन जाता है।⁵ अनुसन्धानकर्ता इस विधि को अपना कर उसकी सत्यता की जाँच स्वम् कर सकता है।
2. अनुसन्धान से उत्पन्न नई समस्याएं- अनुसन्धानकार्य निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। अनुसन्धान के दौरान अनेक नई समस्याएं आती हैं जिस पर पुनः अनुसन्धान किये जाते हैं।
3. नई प्रौद्योगिकी से उत्पन्न समस्याएं- आज विज्ञान व कम्प्यूटर का युग है। बड़ी तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं। इसका प्रभाव शिक्षा पर भी पड़ा है। इण्टरनेट के माध्यम से विश्व के किसी भी साहित्य को पल भर में प्राप्त करके अध्ययन किया जा सकता है।
4. नवीनता- अनुसन्धान समस्या पर यदि कोई कार्य किया जा चुका है तो एक ही समस्या पर पुनः कार्य करने की कोई उपयोगिता नहीं है। लेकिन यदि उस समस्या पर नये सन्दर्भ में अनुसन्धान किया जाय तो समस्या की नवीनता समाप्त नहीं होती।
5. समस्या की उपयोगिता- समस्या का चयन करते समय इस बात को ध्यान में रखनी चाहिए कि समस्या कितनी महत्वपूर्ण है।
6. समय व धन का महत्व- समस्या का चयन करते समय यह ध्यान रखने की बात है कि अनुसन्धान में कितना समय लगेगा और कितना धन खर्च होगा।
7. उपकल्पना- अनुसन्धानकर्ता मुख्य समस्याओं के ज्ञान के आधार पर अपने अध्ययन विषय के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में एक सामान्य अनुमान लगा लेता है। इस प्रकार अनुसन्धानकर्ता को दिशा-निर्देश

मिलता है, जिससे उसका ध्यान अपने अध्ययन विषय पर ही केन्द्रीत रहता है।⁷

8. अनुसन्धान का उद्देश्य— यदि अनुसन्धान का उद्देश्य तय कर लिया जाता है तो आगे चलकर तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण तथा निर्वचन करने में कठिनाई नहीं उठानी पड़ेगी।
9. अध्ययन क्षेत्र— अनुसन्धान का उद्देश्य निश्चित करने के बाद यह निश्चित करना जरूरी है कि अनुसन्धान का क्षेत्र क्या है—

I exz , oa U; kn' k&

अनुसन्धान के क्षेत्र में निदर्शन पद्धति को एक प्रमुख आविष्कार माना जाता है। भौतिक विज्ञान या सामाजिक विज्ञान दोनों में ही किसी न किसी रूप में निदर्शन प्रणालियों से मदद ली जाती है। प्रतिदर्श का चयन करते समय अनुसन्धानकर्ता को यह ध्यान देना चाहिए कि अध्ययन में प्रत्येक जाति एवं धर्म के उत्तरदाताओं का प्रतिनिधित्व हो सकें।

इस प्रकार अनुसन्धान करने हेतु अनुसन्धान की सफलता बहुत कुछ अनुसन्धान समस्या के चयन पर निर्भर करती है। यदि अनुसन्धानकर्ता ने बहुत सोच-समझकर समस्या की रूपरेखा तैयार की है तो उसका अनुसन्धान कार्य सुगमता से व निर्धारित समय में पूर्ण हो जायेगा। अनुसन्धान के निष्कर्ष समाज, देश व नीति-निर्माताओं के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकेंगे और अनुसन्धान की गुणवत्ता में भी सुधार हो सकेगा।

I anhz %

1. C. Selltiz Marie Jahoda and others, Research Methods in Social Relation. p. 31
2. Agarwal, G.K. Social Research in Bimevi Statistics-2010 p. 54
3. Johon C. Townsand. Introduction to Experimental Method. p 32
4. Srivastva. P.K. Kumar Abhay, Quality & Relevance in Higher Education p.137
5. M.R. Cohen and F. Negal, An Introduction to Logic and Scientific Method, Quoted by C. Selltiz Jahoda and Others, OP. cit. p.31
6. P.V. Young, Scientific Social Surveys and Research. P. 139
7. Tripathi, R.S. health problems of child loabourers, p. 59

>k| h dh jkuh y{ehckbz ¼mi U; kl ½
ea 0; Dr vk[; ku

eps k dpxj *

आख्यान एक प्रकार की काल्पनिक कथा है। जो कोरी कल्पना (गल्प) से अपना अलग रूप रखती है। इसे साहित्यिक कल्पना के नाम से जाना जाता है। इसका प्रयोग उपन्यासों की कथावस्तु को रूपायित करने में किया जाता है। क्योंकि पात्र, घटनाएँ या कहानी तो इतिहास सम्मत मिल जाते हैं परन्तु उसमें कथोपकथन या वातावरण की सटीक जानकारी नहीं हो पाती कि अमुक घटना में इस प्रकार के वार्तालाप के द्वारा पात्र इस निष्कर्ष पर पहुँचे या इस प्रकार के निर्णय लिये गये। लेखक तर्क के द्वारा सत्य घटनाओं के करीब ताना-बाना बुनता है परन्तु वह सीधे-सीधे निष्कर्ष पर नहीं पहुँचता कुछ पाठकों पर भी छोड़ देता है।

लेखक के पास सीधे-सीधे तथ्य को स्वीकार करने या खारिज करने का विकल्प नहीं होता है। वह साहित्यिक कल्पना के माध्यम से लोगों के पास पहुँचता है। ऐतिहासिक उपन्यास और इतिहास में अन्तर होता है। ऐतिहासिक उपन्यास में लेखक किसी घटना या तथ्य को अपने अनुसार ढालता अवश्य है परन्तु उसके द्वारा निकाले गये निष्कर्ष जरूरी नहीं कि सर्वमान्य रूप से स्वीकार कर लिए जाएं। परन्तु लेखक के पास एक तथ्य पहले से मौजूद रहता है जिसके इर्दगिर्द ही उसको ताना-बाना बुनना पड़ता है। फिर भी यह संभव है कि लेखक जिस निष्कर्ष पर पहुँचना चाहता है या पहुँचता है वह उस समय घटी घटना का एक पक्ष हो।

यह झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के विषय में देखा जा सकता है जिनके बारे में अनेक किस्से गढ़े गये। कि उन्होंने मजबूरी में अंग्रेजों से लड़ने का फैसला किया क्योंकि अंग्रेजों ने उनको कुछ भी देना स्वीकार नहीं किया। साथ ही यह भी कहा जाता है कि रानी के स्थान पर उनकी सहेली ने उनका

*शोध छात्र, (हिन्दी विभाग), का0हि0वि0वि0, वाराणसी।

वस्त्र पहनकर अंग्रेजों से मोर्चा लिया। वर्मा जी लिखते हैं— “लक्ष्मीबाई जो इतनी बहादुरी के साथ लड़ी—मरी वह सब व्यर्थ गया! मन में आग लग गई। पुस्तक का वह सफा फाड़ डाला! घर पहुँचा तो पुस्तक अंग-भंग की बात काका को मालूम हो गई, पड़ी मार मेरे उपर। उतने स्नेहिल काका भी वह नुकसान कैसे सह पाते? जब उन्हें कारण मालूम हुआ तब बहुत पछताये। मुझे पुचकारा। बोले पुस्तक में अंग्रेज ने हम सबको उल्लू बनाये रखने के लिए वैसा लिखा है, पर एक किताब का सफा फाड़ डालने से क्या होता है? वह तो हजारों की गिनती में छपी होगी।”

इस बात को सभी जानते हैं कि ‘खूब लड़ी मरदानी वह तो झांसी वाली रानी थी।’ यह सत्य है परन्तु उनको एक मरदानी के वेश में क्यों युद्ध करना पड़ा वास्तविक कारणों पर मतभेद है। और मतभेद इसलिए भी रहता है कि इतिहास जीती हुई जातियों का होता है। हारी जातियों का नहीं। चूँकि इतिहास अंग्रेजों का था अतः हो सकता उसमें उन्होंने अपने कमजोर पक्षों को न दिखाया हो क्योंकि उन्हें अपनी सत्ता को बनाये रखना था और कोई भी अपनी हार को छुपाना ही चाहता है।

कोई लेखक यह दिखाना चाहे कि रानी का युद्ध देश के लिए जनता के लिए जरूरी था तो दिखा सकता है कि यह मजबूरी में नहीं बल्कि देशहित में स्वेच्छा से लिया गया निर्णय था। और प्रारम्भ से लेकर अंत तक के बीच में जो संभावना है उसमें लेखक को साहित्यिक कल्पना की कूची से रंग भरने के लिये स्वायत्तता मिलती है परन्तु स्वतंत्रता नहीं मिलती क्योंकि एक सूत्र जो साथ में चलता है वह टूटना नहीं चाहिए। और उसी में लेखक आख्यान और यथार्थ के सामंजस्य को संतुलित ढंग से प्रस्तुत करता है। यह संतुलन बहुत ही आवश्यक होता है क्योंकि इसका संतुलन बिगड़ने पर उपन्यास नीरस लगने लगता है। जो पाठक को प्रभावित नहीं कर पाता और वह पाठक के लिए बोझिल जान पड़ता है।

आख्यान और यथार्थ के संतुलन पर बल देते हुए श्री श्यामसुन्दर दास ने अपनी पुस्तक ‘साहित्यलोचन’ में लिखा है “कवि, लेखक या चित्रकार आदि को सत्यता, वास्तविकता और कल्पना का मेल मिलाना पड़ता है। उसका अंकित चित्र वास्तविक भी होता है और कल्पित भी वह वास्तविक तो इसलिए होता है कि सचमुच होने वाली घटनाओं से बहुत कुछ मिलता—जुलता होता है, और कल्पित इसलिए होता है कि वास्तव में उसका कोई अस्तित्व नहीं होता। तात्पर्य यह है कि वास्तविकता और कल्पना दोनों की समान रूप

से आवश्यकता होती है। न तो कोरी कल्पना से ही काम चल सकता है और न निरी वास्तविकता से ही। वास्तविकता में कल्पना का और कल्पना में वास्तविकता का संमिश्रण ही आनन्ददायक और शिक्षाप्रद हो सकता है।”²

इतिहास एक ही बार घटित होता है बार-बार नहीं परन्तु आख्यान को लेखक अपने अनुरूप बार-बार प्रस्तुत कर सकता है अतः आख्यान के आयाम इतिहास से विस्तृत होते हैं। परन्तु ऐतिहासिक उपन्यासों में आख्यान और इतिहास के बीच स्पष्ट रेखा खींचना संभव नहीं हो पाता। दोनों एक दूसरे को विस्तार देते दिखाई पड़ते हैं। इस तथ्य को स्वीकारते हुए डॉ० मालती तिवारी ने आरनोल्ड जे० तायन्बी के कथन का उल्लेख करते हुये लिखती हैं “इतिहास, मिथक, विज्ञान के अन्दर से विकसित होता है, जिसमें कल्पना तथा तथ्य के बीच विभाजक रेखा खींचना कठिन है। जैसा कि वे कहते हैं कोई इलियड को इतिहास समझ कर पढ़ना प्रारम्भ करे तो पायेगा कि यह काल्पनिक कथाओं से परिपूर्ण है, लेकिन साथ ही यदि इसे कोई काल्पनिक कथा समझ कर पढ़ना प्रारम्भ करता है, तब पाता है कि यह इतिहास से परिपूर्ण है।”³

झाँसी की रानी—लक्ष्मीबाई, उपन्यास की रचना वर्मा जी ने सन् 1946 ई० में की थी। रानीलक्ष्मीबाई की कहानी कहीं न कहीं वर्मा जी को लिखने और अपने समाज में व्याप्त विरोधाभाषों को हटाने का आधार बनी। जिसने उन्हें झाँसी के इतिहास से लेकर बुंदेलखण्ड के इतिहास पर कुछ लिखने को प्रेरित किया। वर्मा जी को यह पसंद नहीं था कि दूसरे उनके तथा उनके समाज, देश के बारे में निष्कर्ष निकालें कि वे पैदा ही दूसरे के सेवा के लिए हुए हैं और कमजोरी के कारण हारते रहेंगे।

इतिहास की टूटी कड़ियों को जोड़ने में आख्यान का उपयोग किया जा सकता है परन्तु इसके उपयोग में सावधानी आवश्यक है, क्योंकि इससे इतिहास के प्रक्षिप्त होने की संभावना रहती है। लेकिन इसको पूरी तरह से खारिज भी नहीं किया जा सकता। “वे छोटी—छोटी घटनाएँ जो वास्तव में घटी तो हों किन्तु इतिहासकारों ने उसे शासन या राष्ट्र से विशेष सम्बन्धित न समझकर अपने इतिहास ग्रंथों में स्थान न दिया हो। इतिहास भी ऐसा तो है नहीं कि घटनाओं के साथ—साथ ही कोई उसे लिखता चला जाता है। एक बार घटनाएँ घट जाती हैं तो कहीं इतिहासकार कुछ प्रलेखों, प्राचीन उल्लेखों अथवा ध्वनित बातों के आधार पर ही इतिहास की रचना करते हैं। इसलिए उन जन श्रुतियों को लेकर जिससे वर्मा जी ने अपने उपन्यास की रचना की है नितांत असत्य ठहरा देना उन झाँसीवासियों के साथ अन्याय करना है।

जिन्होंने संभव है उन्हें आँखों देखा हो। क्योंकि वर्मा जी ने बताया है कि उनके जन श्रुतियों के स्रोत भी बड़े-बूढ़े ही हैं जिन्होंने स्वयं रानी को आँखों देखा था। अतः उन लोगों की बातों पर तो विश्वास करना ही पड़ेगा जो रानी के समकालीन थे। हो सकता है उनके वर्णन शैली में कुछ अतिरंजना हो किन्तु फिर भी उनके वर्णन शैली में कुछ सत्य अवश्य होगा। इसके अतिरिक्त झांसी की रानी का कथानक अधिक पुराना भी नहीं है। जिससे उसमें अधिक हेर-फेर हो जाने का संदेह हो।⁴

झांसी की रानी-लक्ष्मीबाई; में ऐसा ही एक प्रसंग आनन्दराव का आया है जिसे वर्मा जी अपने परदादा के रूप में 'अपनी कहानी' (आत्मकथा) में स्वीकार करते हैं। और कहते हैं कि परदादी ने रानी को अपनी आँखों से देखा था।

वर्मा जी, आनन्द राव के माध्यम से उपन्यास में आम जन को जोड़ने का प्रयास करते हैं साथ ही अपनी बातों की प्रामाणिकता के लिये भी यह प्रसंग उपन्यास में ले आते हैं। इसका एक कारण यह भी प्रतीत होता है कि वर्मा जी ने उपन्यास में जिन घटनाओं का वर्णन किया है वे सन् 1857 ई0 की हैं। उपन्यासकार के सामने दरबार के वर्णन का दबाव है जबकि सही मायने में उपन्यासकार दरबारी कवि, लेखक या सेनापति नहीं रहा है। दरबार का वातावरण उसके लिए अछूता है। अतः उपन्यासकार बातों की प्रामाणिकता के लिए उपन्यास में आख्यान रूप में इन तत्वों का समावेश किया है।

“परदादी ने लक्ष्मीबाई को कई बार देखा था। जब रानी ग्वालियर की लड़ाई में मारी गई तब झांसी के आसपास तो युद्ध बहुत कमजोर पड़ गया, परन्तु मरू, अब भी सिर उठाये थी। मेरे परदादा दीवान आनन्दराव (उनका नाम आनन्दराय था, परन्तु रानी ने राम जी राव कर दिया था।) मरू के एक विद्रोही गिरोह के संचालक थे।⁵

लेखक राज्य के दरबार का वर्णन तो करना चाहता है परन्तु वह उसके विस्तार का जोखिम नहीं लेता। अतः वह आख्यान का सहारा लेता है और दरबार के वर्णन को कम शब्दों में ही सीमित करके वह बाहर प्रकृति, संघर्ष आदि पर अपनी दृष्टि केन्द्रित करता है। “झांसी की गद्दी पर राजा गंगाधरराव को बैठे और झांसी राज्य के शासन को अंग्रेजों द्वारा चलते सात-आठ साल हो गये। नगर का शासन गंगाधरराव के हाथ में था और बाकी राज्य का कम्पनी के कर्मचारियों के हाथ में। चैत लग गया था। वास्तव में पत्थरों और कंकड़ों तक फुलवाड़ियाँ पसार दीं। टेसू के फूलों ने क्षितिज को सजा दिया और घरती पर रंग बिरंगे चौक पूर दिये। समीर और प्रभंजन में भी

महक समा गई। रात और दिन संगीत में पुलकित हो उठे।⁶ मनु बचपन से ही निर्भीक थी, चुनौतियों का सामना करने में उसे कोई विशेष कठिनाई का अनुभव नहीं होता था। अपने आश्रयदाता के यहाँ रहकर भी किसी प्रकार अपने को कमजोर नहीं समझती थी। “झांसी की रानी की कथा तो बहुत विश्रुत है ही। बाल्यावस्था से ही उनकी दृढ़ता, निर्भीकता, महत्वाकांक्षा तथा विचारशीलता का उद्घाटन कर दिया गया है। महापुरुषों के आदर्श ने उनमें जाति प्रेम, राष्ट्रप्रेम बलिदान, सेवा आदि के गुणों को विकसित कर दिया था। गीता धर्म की अनुगामिनी थीं। सैन्य संचालन में अद्वितीय, जाति वर्ण की संकीर्णता से दूर, अपनी प्रजा के लिए वे साक्षात् वात्सल्यपूर्ण जननी थीं।⁷

ये कथाएं काल्पनिक प्रतीत होती हैं। परन्तु असंगत नहीं लगती। इतिहास में इन कथाओं का जिक्र नहीं आ पाता। साहित्य में घटनाओं को व्यक्त करने के लिए उपन्यासकार छोटी-छोटी कथाओं का सहारा लेता है इस प्रकार के कथाओं का स्थान समाज में होता है। उसी में ये कथाएं पीढ़ी दर पीढ़ी थोड़ी बहुत परिवर्तित रूप में सामने आती रहती हैं। जब कोई इतिहासकार इतिहास लिख रहा होता है, उस समय दरबारी निर्णयों, जीत-हार मनोरंजन आदि के अलावा समाज में भी काफी कुछ घटित होता रहता है। उन घटनाओं को इतिहासकार सामान्य घटना मानकर अपने इतिहास में जगह नहीं देता क्योंकि सामाजिक निर्णय बड़े स्तर पर राजा को प्रभावित नहीं करते थे। जितना कि राजा का निर्णय समाज को प्रभावित करता था। आधुनिक समाज और लोकतंत्र के निर्माण में उन निर्णयों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। “हमारा अभिप्राय उन दुखदायी एवं अनेक पुस्तकों के लेखक इतिहासकारों जो अपने निरूपण की नियमितता को सुरक्षित रखने के लिए उन मासों एवं वर्षों, जिन में कुछ भी असाधारण घटित नहीं हुआ, से अधिकतम लिखकर स्वयं को कृतज्ञ (धन्य) समझते हैं- के अनुकरण की अपेक्षा उन लेखकों की रीतियों का अनुसरण है जो देशों की क्रांति को प्रकट करने की उद्घोषणा करते हैं, क्योंकि वे उन महत्वपूर्ण संवतों पर ध्यान देते हैं जब मानवीय रंगमंच पर महान् दृश्य घटित हुए।⁸

झांसी के किले पर अंग्रेजों का कब्जा हो जाने के पश्चात रानी ने किले से बाहर अलग-अलग रियासत के सरदारों, राजाओं को इकट्ठा करके अंग्रेजों से लोहा लेती रहीं। विलासी राजाओं, सरदारों का रानी को अपेक्षित सहयोग नहीं मिल सका। फिर भी उन्होंने अपने मरते दम तक अंग्रेजों को काफी परेशान किये रक्खा। रानी के मरने के पश्चात पठान सेनापती गुल मुहम्मद कहता है। “ओह कबी नहीं। वो कबी नहीं मरेगा। वो मुर्दा को जान

बख्शाता रहेगा।⁹ रानी की चिता के राख पर गुल मुहम्मद एक चबूतरा बाँधता है, उस चबूतरे के बारे में एक अंग्रेज अधिकारी गुलमुहम्मद से पूछता है कि यह मजार किसका है? तब गुल मुहम्मद कहता है— “अमारे पीर का, वो बौत बड़ा बली था।¹⁰”

वर्मा जी अपने उपन्यास झांसी की रानी—लक्ष्मीबाई; में रानी के विषय में प्रचलित भ्रांतियों को दूर करने के साथ ही उनके वीर चरित्र को दिखाने के लिए जिन आख्यानों को गढ़ा है उनमें वे काफी सफल रहे हैं। ये आख्यान एक क्रम से आते हैं और रानी के दृढ़ चरित्र में चार चांद लगाते रहते हैं। कहीं से भी ये आख्यान असंगत नहीं लगते।

I nHkZ %

1. अपनी कहानी—वृन्दावनलाल वर्मा (वृन्दावनलालवर्मा समग्र—सप्तम खण्ड) (सं०) डॉ० विश्वनाथ प्रसाद/प्रकाशक—हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन्स (प्रा०) लिमिटेड, सी० 21/30, पिशाच मोचन, वाराणसी—221010, संस्करण—2000, पृ० 689
2. साहित्य लोचन—श्यामसुन्दर दास/प्रकाशक—इंडियन प्रेस पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड, प्रयाग, संस्करण—1962, पृ० 164
3. मिथक एक अनुशीलन—मालती सिंह/प्रकाशक—लोकभारती प्रकाशन, 15—ए महात्मागाँधी मार्ग, इलाहाबाद, संस्करण—प्रथम 1988, पृ० 51
4. झांसी की रानी एक दृष्टि—श्री श्याम जोशी/प्रकाशक—मोहन न्यूज ऐजेंसी, कोटा, संस्करण—2008, पृ० 161
5. अपनी कहानी—वृन्दावनलाल वर्मा (वृन्दावनलाल वर्मा समग्र—सप्तम खण्ड)—(सं०) डॉ० विश्वनाथ प्रसाद/प्रकाशक—हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा० लि०, सी० 21/30, पिशाच मोचन, वाराणसी—221010, पृ० 683
6. झांसी की रानी लक्ष्मीबाई—वृन्दावनलाल वर्मा (वृन्दावनलाल वर्मा समग्र—द्वितीय खण्ड)—(सं०) डॉ० विश्वनाथ प्रसाद/प्रकाशक—हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा०—1106, पिशाच मोचन, वाराणसी—221010, संस्करण—2000, पृ० 117
7. आधुनिक हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास—बेचन/प्रकाशक—सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली, संस्करण—1971, पृ० 03
8. उपन्यास का उदय—ऑयन वॉट/(अनुवादक—डॉ० धर्मपाल सरिन), प्रकाशक—हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, संस्करण—1990, पृ० 22
9. झांसी की रानी लक्ष्मीबाई—वृन्दावनलाल वर्मा (वृन्दावनलाल वर्मा समग्र—द्वितीय खण्ड) (सं०) डॉ० विश्वनाथ प्रसाद/प्रकाशक—हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा०—1106, पिशाचमोचन, वाराणसी—221010, संस्करण—2000, पृ० 350
10. वही, पृ० 350

I puk i kS| kfxdh dk Nk=@Nk=kvks ds vf/kxe Lrj ij iHkko

MkK yqkkouh f=i kBh*

I kjkd k %

सूचना प्रौद्योगिकी ने मानव जीवन के समस्त पक्षों को प्रभावित किया है। शिक्षा भी इससे अछूती नहीं रही है। सूचना प्रौद्योगिकी विषयवस्तु को प्रस्तुत करने में इतनी विविधता के अवसर प्रदान करती है कि सीखने वाले को विषय पर ध्यान केन्द्रित करने में मदद मिलती है साथ ही वे विषय को बेहतर तरीके से समझ सकते हैं, जो अन्यथा संभव नहीं है। सीखने वालों को किसी नये विषय पर अन्य देशों के उसी विषय के जिज्ञासुओं के साथ काम करने का अवसर प्राप्त होता है। सूचना प्रौद्योगिकी से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में गुणात्मक सुधार लाने में भी मदद मिलती है। यही कारण है, कि ऐसे विद्यालयों के छात्र—छात्राओं का अधिगम स्तर अपेक्षाकृत अधिक है, जहाँ पर सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित शिक्षा दी जाती है।

'kk/k v/; ; u ds mnns ; %

आज सम्पूर्ण विश्व ज्ञान के हर क्षेत्र में अत्यंत तीव्र गति से प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा है। शोधार्थी का मुख्य उद्देश्य छात्र—छात्राओं के अधिगम स्तर पर सूचना प्रौद्योगिकी के पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना है तथा शिक्षा पर सूचना प्रौद्योगिकी की प्रभावशीलता, उपादेयता एवं वास्तविकता को प्रकट कर इसके उद्देश्य पूर्ति में अपनी सहभागिता प्रदान करना भी है। इस शोध अध्ययन के निम्नलिखित महत्वपूर्ण उद्देश्य है —

- ' शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग के छात्र—छात्राओं के अधिगम स्तर पर पड़ने वाले प्रभाव का मूल्यांकन करना।
- ' विद्यालयों में गुणात्मक शिक्षा हेतु उपलब्ध आधुनिक संसाधनों की वास्तविक स्थिति का अध्ययन करना।

*प्राचार्या, कोलंबिया कॉलेज, रायपुर, मध्य प्रदेश

- ‘ शिक्षा एवं सूचना प्रौद्योगिकी के बीच सह-सम्बंध का मूल्यांकन करना।
- ‘ विद्यालयों में सूचना तकनीकी के उपयोग सम्बंधी शिक्षकों एवं छात्र-छात्राओं की क्षमता का मूल्यांकन करना।
- ‘ विद्यालयों में सूचना तकनीकी के उपयोग हेतु शासन द्वारा संचालित प्रोत्साहन योजनाओं के प्रभाव का मूल्यांकन करना।

‘ kks/k v/; ; u dh vko’ ; drk , oa egRo

शोध की विषय वस्तु छात्र-छात्राओं के अधिगम स्तर पर सूचना प्रौद्योगिकी के प्रभाव के मूल्यांकन के प्रथम उद्देश्य की पूर्ति पर लक्षित है।

‘ kks/k i fj dYi uk

शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग एक शैक्षिक नवाचार है, जिसके अन्तर्गत सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा शिक्षा के माध्यम से छात्र-छात्राओं के अधिगम स्तर में वृद्धि करने का प्रयास किया जाता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के संदर्भ में शोधार्थी की परिकल्पना इस प्रकार है— “शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग से छात्र-छात्राओं के अधिगम स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।”

‘ kks/k fof/k

शोधार्थी ने अपने शोध अध्ययन हेतु रायपुर जिले के कक्षा 8वीं में अध्ययनरत कुल 100 छात्र-छात्राओं को न्यादर्श में चयनित किया है। जिसमें से 50 छात्र ऐसे विद्यालयों से हैं, जहाँ पर सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जा रही है तथा 50 छात्र ऐसे विद्यालयों से हैं, जहाँ पर परम्परागत तरीके से शिक्षा प्रदान की जा रही है एवं शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग नहीं किया जा रहा है। शोधार्थी द्वारा सभी न्यादर्शों का चयन दैव-निर्दर्शन विधि से किया गया है। शोधार्थी ने अपने शोध अध्ययन में शोध उपकरण के रूप में स्वनिर्मित छात्र-परीक्षण पत्रक का उपयोग किया है तथा इसी छात्र परीक्षण पत्रक का प्रशासन न्यादर्श में चयनित छात्र-छात्राओं पर करके प्रदत्तों का संग्रहण किया है तथा प्राप्त प्रदत्तों के सारणीयन विश्लेषण एवं व्याख्या द्वारा वस्तुस्थिति की जानकारी प्राप्त की। जिसका विवरण इस प्रकार है –

तालिका क्रमांक-1

क्र.	प्राप्तांक	कक्षा 8वीं में अध्ययनरत छात्र-छात्राओं का अधिगम स्तर			
		सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा प्राप्त छात्र-छात्राओं का अधिगम स्तर		परम्परागत माध्यम से शिक्षा प्राप्त छात्र-छात्राओं का अधिगम स्तर	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	0 अंक से अधिक किन्तु 40 अंक से कम (न्यूनतम अधिगम स्तर की प्राप्ति नहीं)	4	8.00	10	20.00
2.	40 अंक से अधिक किन्तु 60 अंक से कम (न्यूनतम अधिगम स्तर की प्राप्ति)	34	68.00	36	72.00
3.	60 अंक से अधिक किन्तु 80 अंक से कम (दक्षता की ओर अग्रसर)	9	18.00	3	6.00
4.	80 अंक से अधिक किन्तु 100 अंक से कम (दक्षता की प्राप्ति)	3	6.00	1	2.00

fo’ ysk.k , oa 0; k[; k

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि न्यादर्श में चयनित 50 छात्र-छात्राओं जिन्हें सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जा रही है में से 4 छात्र न्यूनतम अधिगम स्तर की प्राप्ति नहीं कर सके, जबकि 34 छात्र-छात्राओं ने न्यूनतम अधिगम स्तर की प्राप्ति कर ली है तथा 9 छात्र-छात्राएँ दक्षता की ओर अग्रसर है एवं न्यादर्श में चयनित 3 छात्र-छात्राओं ने दक्षता की प्राप्ति कर ली है। इस प्रकार सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा प्राप्त

8.00 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ न्यूनतम अधिगम स्तर की प्राप्ति नहीं कर सके जबकि 68 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने न्यूनतम अधिगम स्तर की प्राप्ति कर ली है, तथा 18 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ दक्षता की ओर अग्रसर है, एवं 6.00 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने दक्षता की प्राप्ति कर ली है।

इसी प्रकार से न्यादर्श में चयनित कुल 50 छात्र-छात्राओं जिन्हें परम्परागत माध्यम से शिक्षा प्रदान की जा रही है में से 10 छात्र-छात्राएँ न्यूनतम अधिगम स्तर को प्राप्त नहीं कर सके, जबकि 36 छात्र-छात्राओं ने न्यूनतम अधिगम स्तर को प्राप्त कर लिया है, तथा 3 छात्र-छात्राएँ दक्षता की ओर अग्रसर है एवं मात्र 01 छात्र-छात्राएँ ही दक्षता की प्राप्ति कर सके है। इस प्रकार परम्परागत माध्यम से शिक्षा प्राप्त 20.00 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने न्यूनतम अधिगम स्तर को प्राप्त नहीं किया, जबकि 72.00 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने न्यूनतम अधिगम स्तर को प्राप्त कर लिया है, जबकि 6.00 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ दक्षता की ओर अग्रसर है एवं मात्र 2.00 प्रतिशत छात्र ही दक्षता की प्राप्ति कर सके।

'k k y k f u " d " k % प्रस्तुत शोध अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है – उपरोक्त तालिका क्रमांक-1 के विश्लेषण एवं व्याख्या के आधार पर यह तथ्योद्घाटन होता है कि सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा प्राप्त छात्र-छात्राओं का अधिगम स्तर एवं परम्परागत माध्यम से शिक्षा प्राप्त छात्र-छात्राओं के अधिगम स्तर से बहुत अधिक है। इस प्रकार यह सिद्ध होता है, कि "शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग से छात्र-छात्राओं के अधिगम स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।"

I p k o

- क) शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग और अधिक प्रभावी बनाने हेतु शोधार्थी द्वारा दिये गये सुझाव इस प्रकार है –
1. शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी की अवधारणा को स्पष्ट किया जाये।
 2. विद्यालयों को सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा हेतु पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराये जाये।
 3. समय-समय पर शिक्षकों को सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाये।
 4. विद्यालयों में सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा हेतु अच्छा वातावरण तैयार किया जाये।

I a n H k z %

1. कल्पना. राजा राम (2004) – भारत में विज्ञान प्रौद्योगिकी : स्पेक्ट्रम बुक्स प्रा0 लि0 जनकपुरी, नई दिल्ली।
2. चितले. रंजना (2001) – इंटरनेट खोजे अपना कैरियर, रोजगार और निर्माण 14 दिसम्बर 2000।
3. सनसनवाल. डी. एन. (2001) – सूचना प्रौद्योगिकी और उच्च शिक्षा।
4. गौड़. प्रकाश (1999) – कम्प्यूटर अनुप्रयोग, रोजगार और नये आयाम, रोजगार और निर्माण, 14 अक्टूबर 1999।
5. Hathi, Urmil H. (1994) – A study of the audio visual aids in secondary schools of the univ. guide : Dr. J.I. Jani, (I.E.A. Vol. 1 (1), Jan. 2001)
6. Chandra, Arvinda and Pandya, Reameshari (1996) : How effective are video films for imparting legal education? The progress of education, vol. LXXI (4), 90-92 & 96.
7. Joshi, Anuradha and Mahapatra, B.C. (1995) – Effectiveness of computer software in terms of higher mental ability in science. Indian journal of psychometry and education vol. 26 (2), 105-108.

Lkkeftd&0; oLFkk vkj I kBk&lkjh fglnh dfork MKND I qkhy d&ekj jk; *

सामाजिक-व्यवस्था को प्रभावित करने में आर्थिक कारक की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। समाज का निर्माण जीवन की आवश्यकताओं के अनुसार होता है। समाज-व्यवस्था का निर्धारक तत्व धर्म अवश्य है, पर जब प्रतिदिन की जरूरतों में अवरोध उत्पन्न हो जाता है, तब स्वाभाविक रूप से मनुष्य का ध्यान ऐसी स्थिति में प्राचीन व्यवस्था के विघटन तथा नवीन के निर्माण का आधार आर्थिक सुविधा बन जाती है।

डॉ० हरवंश लाल शर्मा ने लिखा है, “भारतीय सामाजिक जीवन में यह विघटन और नये वर्गों का निर्माण 19 वीं शताब्दी में प्रारम्भ हो जाता है जो अब तक चल रहा है। 19 वीं शताब्दी में और उसके बाद पूरा राष्ट्र एक आर्थिक इकाई के रूप में सामने आया और साथ ही नवीन औद्योगिक अर्थ प्रणाली में श्रम-विभाजन की प्रक्रिया को जटिल और विस्तृत बना दिया। इस नवयुग में कोई भी वर्ग अपने ही गाँव या नगर में रहकर स्पर्धामुक्त मोदित निश्चित पेशे को अपनाकर जीवन व्यतीत करने में रुचि न रखता है और न ऐसा करने में समर्थ ही था। भारत की इस आर्थिक जर्जरत तथा वैशम्य ने मध्य वर्ग तथा किसानों की प्राचीन जीवन पद्धति में उथल-पुथल पैदा कर दी। बड़े उद्योगों ने लघु तथा गृह उद्योगों को निगल लिया और उन्हें बहुत कुछ नष्ट कर दिया। अब नये-नये पेशे जन्म ले रहे थे और व्यक्ति जीविकोपार्जन के लिए नये पेशों को सीखने तथा अपनाने के लिए विवश था। साथ ही उद्योग प्रधान बड़े-बड़े नगरों में जीविकोपार्जन की सम्भावना भी अधिक थी। अतएव व्यक्ति दूरस्थ औद्योगिक केन्द्रों में जाकर रोजी कमाने लगा। यातायात की आधुनिक सुविधाओं में इस सामूहिक स्थानान्तरण में सहायता दी। फलतः औद्योगिक केन्द्रों में श्रमिकों के बाड़ होते या उपनिवेश बन गये जो कई दृष्टियों से नवीन, विशिष्ट तथा महत्वपूर्ण थे।”

*वरिष्ठ प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, सेण्ट ऐण्ड्रयूज कालेज, गोरखपुर, उ०प्र०

सन् साठ में समाज की स्थिति विघटनकारी घटको की सक्रियता, सामाजिक मूल्यों में पतन, स्वार्थ की भावना, संयुक्त परिवारों में विभाजन, चारित्रिक-नैतिक पतन, पति-पत्नी के बीच टूटती परम्परागत मान्यताएं आदि विसंगतियों का यथार्थ चित्रण किया गया। साठोत्तरी कवियों में ऐसे विभाजन समाज का प्रभाव विद्रोह, नकार और अस्वीकार के रूप में देखने को मिलता है। साठोत्तरी कवियों ने सामाजिक जड़ता के अन्दर सामाजिक अन्तर्विरोधों को पकड़ने की कोशिश किया है। इसी जड़त और अलगाव के अन्दर से आक्रोश और अस्वीकार का स्वर प्रस्फुटित हुआ जो अतिवादी सीमाओं को अतिक्रमण कर गया। सच्चाई यह है कि सत्य हमेशा सकारात्मक तरीके से ही अभिव्यक्त नहीं होता। प्रतिक्रियात्मक भावावेग के कारण वह नकारात्मक प्रभाव भी ग्रहण कर लेती है।

साठोत्तरी सामाजिक परिस्थितियां बहुत ही निर्मम हैं। व्यक्ति इस परिस्थिति में अपनी सहज स्वाभाविक वृत्तियों को दूसरे के निर्देश पर संचालित कर रहा है। यदि वह दूसरे के निर्देश का पालन नहीं करेगा तो उसका जीवन कब समाप्त हो जाय, यह नहीं कहा जा सकता। आज के इस कठिन समय में आदमी की हंसी पर भी पहरा लगा हुआ है, उस पर दृष्टि रखी जा रही है। इस विशय पर रघुवीर सहाय की कविता उदाहरणार्थ प्रस्तुत है :

“हंसो तुमपर निगाह रखी जा रही है,
हंसो अपने पर न हंसना क्योंकि उसकी कड़वाहट
पकड़ ली जायेगी और तुम मारे जाओगे
ऐसे हंसो कि बहुत खुश न मालूम हो
वरना शक होगा कि यह शख्स शर्म में शामिल नहीं
और मारे जाओगे।”²

आज के समय में हंसी एक औपचारिकता भर रह गयी है तथा सम्पन्न लोगों को प्रसन्न करने का एक माध्यम-मात्र बन कर रही गयी है। सत्ता के शोषक राजनीतिज्ञों ने इस देश की प्रतिष्ठा धूल-धुसरित कर दिया है। व्यक्ति यहां तड़प-तड़प कर मरने के लिए अभिक्षप्त है। व्यक्ति की सभी इच्छा, आकांक्षा, लालसा धूमिल हो गयी है। समकालीन समाज के जिम्मेदार मंत्री की मृत होती संवेदना को देखकर कवि रघुवीर सहाय करते हैं -

“समाज मर रहा है इसका मरना पहचानों मंत्री
देश ही सब कुछ है धरती का क्षेत्रफल सब कुछ है
राजा ने मन में कहा जो राजा प्रजा की दुर्बलता नहीं पहचानता।

वह अपने देश को नहीं बचा सकता प्रज्ञा के हाथों से
यह समाज मर रहा है, नकल अपनी ही करता जा रहा है।³

इस भ्रष्ट व्यवस्था का प्रभाव सबसे अधिक साधारण व्यक्तियों, बच्चों एवं महिलाओं पर पड़ता है। साठोत्तरी कवियों की रचनाओं में इनके दुःख-दर्द एवं लाचारी का स्वर मुखरित हुआ है। कवि लीलाधर जगडू ने सामान्य आदमी के व्यक्तिगत कष्ट एवं दुःख को इस प्रकार अभिव्यक्त किया कि वह समाज के सभी लोगों के दुःख-दर्द का परिचायक बन गया :-

“यद्यपि मौजूद दृश्य के पीछे
हाहाकार कोरस की तरह बज रहा है
फिर भी गौर से सुनें

उसमें बहुमत अप्रिय स्वर वाला एक पुराना बाजा है

जो हमारे अज्ञान और हमारी गरीबी को संस्कृति की तरह अलापता है और खारिज अपील वाले समूचे संसार को एक सजायाफ्ता राग में बदल देता है।⁴

साठोत्तरी हिन्दी कविता में आदमी में व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में परिव्याप्त संत्रास की स्थिति दिखायी देती है। वस्तुतः स्वाधीन भारतीय परिवेश ने मनुष्य के सामने अंधकार का वातावरण सृजित कर दिया था। सभी व्यक्ति आतंक, भय, निराशा, आशंका एवं अनिश्चितता के वातावरण से आच्छादित है। वैज्ञानिक प्रगति, तकनीकी उन्नति, बौद्धिक उन्नति, महानगरीकरण तथा औद्योगीकरण ने मनुष्य को एक इकाई के रूप में परिवर्तित कर दिया है। जिसके कारण वह परिवार, समाज, राष्ट्र और मनुष्य मात्र से दूर बहुत दूर होता जा रहा है। आपसी प्रेम, सहयोग एवं सहानुभूति के भाव समाप्त होते जा रहे हैं। एक-दूसरे से आगे निकलने की प्रतिस्पर्धा के कारण लूट, हत्या, डकैती, अपहरण, घृणा एवं अपमान की प्रवृत्ति समाज में बढ़ी है। संवेनहीनता और अमानवीयता से आज मनुष्य पूरी तरह प्रभावित हो गया है जिसके कारण व्यक्ति का सम्बन्ध प्रभावित हुआ है। लोग एक-दूसरे को शक की दृष्टि से देखने लगे हैं तथा डरने लगे हैं। कवि विनय ने इस प्रसंग पर लिखा है :

“वह इतना घायल है कि

प्यार के हाथ से भी टीस पड़ते हैं। उसके घाव वह चारों तरफ अविश्वास की/नजरों से देखता है
आदमी में इतना डर समा गया है कि एक घायल दूसरे घायल से भी डरने लगा है

उस पर अविश्वास करने लगा है⁵

साठोत्तरी समाज में मनुष्य के सम्मुख अनेक समस्याएं तथा चुनौतियां हैं जिन्हें देखकर उसका धैर्य टूट जाता है। मनुष्य ऐसी स्थिति में कुछ भी सकारात्मक न कर सकने के कारण अवसाद-ग्रस्त हो जाता है। वह अपने को अपमानित एवं पराजित अनुभव करता है। वर्तमान सामाजिक वातावरण में व्याप्त चुनौती के सम्मुख अधिसंख्य मनुष्य पराजित एवं हताश पलायन कर रहे हैं। प्रमोद सिन्हा ने इस प्रवृत्ति पर कुछ इस प्रकार प्रतिक्रिया व्यक्त किया है :

“आंखों का खुलना/बन्द होना ओर फिर
भयावनी आकृतियों में बदल जाना

वह झेल सकने में समर्थ न था

उसने देखा वह मुड़ रहा है/लगातार मुड़ रहा है।⁶

इस प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हुए कवि धूमिल ने लिखा है :

“हर आदमी/भीतर की बत्तियां बुझाकर पड़े-पड़े सोता है। क्योंकि वह समझता है कि दिन की शुरुआत का ढंग/सिर्फ हारने के लिए होता है।”

देश ने स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद कई युद्ध लड़े हैं। भीषण युद्ध ने भी मनुष्य के हृदय में संघय और भय के बीजारोपण का सूत्रपात किया है। मनुष्य भीतर से कमजोर तथा भयभीत रहने लगा है। युद्धमय वातावरण ने सम्पूर्ण विश्व के परिदृश्य को प्रदूषित कर दिया है। अमानवीय सैनिक कार्यवाहियों से पूरा विश्व भयाक्रान्त हो गया है। इस संदर्भ में श्रीकान्त वर्मा ने लिखा है :

“फौज के अंधेरे में/लूटी हुई बीसवीं शताब्दी का
सिर/गिरता है/चेकोस्लोवाकिया में/धड़/वियतनाम में
शेश/ढाका/चटगाँव में/शुक्रिया चंगेज खाँ
तुम्ही को पाया/हर मोड़ पर।”⁸

बीसवीं शती में दो-दो विश्व युद्ध लड़े जा चुके हैं और तीसरे युद्ध की आशंका में सभी लोग सहमे हुये हैं। पूरी बीसवीं शती विसंगतियों से भरी हुई है। ऐसी सामाजिक व्यवस्था पर सबको सावधान करते हुये कवि धूमिल कहते हैं :-

“इससे पहले कि मैं किसी संख्या में

या व्याकरण की किसी अपाहिज धारणा में बदल दे
मैं उन तमाम चुनौतियों के लिये
खुद को तैयार करना चाहता हूँ।”⁹

साठोत्तर समाज में मनुष्य ने अभूतपूर्व प्रगति किया और चाँद पर भी पहुँच गया। मनुष्य ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में तो काफी समृद्ध हुआ किन्तु उसमें नैतिक एवं चारित्रिक मूल्यों का विकास नहीं हो सका। इससे उसके जीवन में संकट का प्रादुर्भाव हो गया। विज्ञान की प्रगति ने मनुष्य के अस्तित्व पर ग्रहण लगा दिया। साठोत्तर समाज में अकेलापन, दिशाहीनता, जीवनगत विषमता, संत्रास एवं पराजय बोध आदि विशेषतायें परिलक्षित होती हैं। इन सबसे आज का मनुष्य संघर्ष कर रहा है और उसकी नियति उसे अनुत्पादकता की तरफ ले जा रही है। साठोत्तर सामाजिक व्यवस्था में मानव अपने स्वाभिमान एवं अस्तित्व के लिये जूझ रहा है किन्तु तत्कालीन शक्ति अपने प्रभाव से उसे अपने प्रसायों में सफल होने से रोकती है। मनुष्य की चेतना को निराशा, हताशा और अनास्था के घनघोर अंधाकर ने प्रभावित कर दिया है।

साठोत्तरी हिन्दी कविता के विश्लेषण से यह कहा जा सकता है कि साठोत्तर समाज में मनुष्य की आस्था इतनी कमजोर भी नहीं है कि वह विपरीत एवं विशम परिस्थितियों के सम्मुख पराजित हो जाये। निराशा के स्वर में संघर्ष और आस्था का मानववादी स्वर कभी-कभी शिथिल अवश्य पड़ जाता है लेकिन पूरी तरह से समाप्त नहीं हो जाता। किसी न किसी स्तर पर वह मानव की चेतना में उपस्थित एवं प्राणवान अवश्य रहती है और अनुकूल समय आने पर वह सक्रिय एवं गतिशील हो जाता है। साठोत्तरी सामाजिक व्यवस्था में भी मनुष्य में निराशा, हताशा, अनास्था आदि के स्वर प्रभावी अवश्य हैं किन्तु आशा, उत्साह और आस्था के स्वर भी सुनाई पड़ते हैं।

I nHkz %

1. डॉ० हरवंश लाल शर्मा, हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास, पृ०सं० 24
2. रघुवीर सहाय, हंसो-हंसो जल्दी हंसो, पृ०सं० 25
3. रघुवीर सहाय, हंसो-हंसो जल्दी हंसो, पृ०सं० 75
4. लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृ०सं० 108प
5. विनय, मई, अन्तराल, पृ०सं० 77
6. प्रमोद सिन्हा, तलघर, पृ०सं० 12
7. धूमिल, संसद से सड़क तक, पृ०सं० 28
8. श्रीकान्त वर्मा, जलसा घर, पृ०सं० 67
9. धूमिल, संसद से सड़क तक, पृ०सं० 34

de# {ks= fo' ofo | ky; ds , e-, M- rFkk ch-, M- ds
Nk=ka dk mPp f' k{kk ds futhdj .k ds i fr
fopkjka dk ryukRed v/; ; u

dyynhi *

I nhi dkj **

शिक्षा एक विस्तृत प्रक्रिया है। यह सभी प्रकार के ज्ञान की अपेक्षा तक फैली हुई है। शिक्षा के द्वारा ही हमारी कीर्ति का प्रकाश चारों ओर फैलता है तथा शिक्षा हमारी समस्याओं के सुलझाती है एवं हमारे जीवन को सुसंस्कृत बनाती है हम देश में रहे या विदेश में शिक्षा प्रत्येक स्थान पर हमारी सहायता करती है। जिस प्रकार बालक का सर्वांगण विकास करके उसे तेजस्वी बुद्धिमान, चरित्रवान विद्वान तथा वीर बनाती है दूरी ओर शिक्षा समाज की उन्नति के लिए भी एक आवश्यक एवं शक्तिशाली साधन है।

mPprj f' k{kk

राष्ट्र की शक्ति का उसमें विद्यमान शिक्षा के साथ सीधा सम्बन्ध होता है। सामाजिक विकास के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य है जबकि अन्य शिक्षा राष्ट्रीय शक्ति लाती है। उच्चतर शिक्षा 17 से 23 वर्ष के बच्चों को कॉलेज तथा विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की जाती है। भारत में उच्च शिक्षा विकास अंग्रेजी शासन काल में ही प्रारम्भ हो गया था। उस समय से आज तक चलने वाली विश्वविद्यालयों की शिक्षा व्यवस्था लंदन की विश्वविद्यालय व्यवस्था के अनुकरण पर चल रही है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उच्च शिक्षा व्यवस्था में पर्याप्त प्रगति हुई है। आधुनिक विकासशील देशों में पाई जाने वाली शिक्षा का प्रसार आने वाले समय में राष्ट्रों के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और औद्योगिक विकास का ही रूप होता है। आज के विश्वविद्यालय का उद्देश्य विद्यार्थियों को उत्तम ज्ञान प्रदान

*असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, यश कॉलेज ऑफ एजुकेशन, रुड़की, रोहतक, हरियाणा

**असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, यश कॉलेज ऑफ एजुकेशन, रुड़की, रोहतक, हरियाणा

करना ही नहीं है बल्कि बड़े स्तर पर सामूदायिक नेतृत्व, बौद्धिक, आर्थिक, राजनैतिक और औद्योगिक विकास का ही रूप होता है।

उच्च शिक्षा एवं व्यवसायिक शिक्षा देश की परिवर्तित एवं गतिशील शक्ति में बनाए रखने में सहायक है। राज्य एवं केन्द्रीय सरकार ने उच्चतर शिक्षा का महत्वपूर्ण स्रोत है। राज्य के केन्द्रीय सरकार ने 1964-66 उच्चतर शिक्षा पर 6 प्रतिशत GDP के लक्ष्य को शिक्षा पर खर्च करना निर्धारित किया था, जोकि 6 प्रतिशत GDP के लक्ष्य को शिक्षा पर खर्च करने में काफी पीछे है। यद्यपि सरकार शिक्षा की दर को बढ़ाने का पूर्णतः प्रयास कर रही है। लेकिन स्रोतों के अभाव के कारण सरकार और राज्य सभी को व्यवसायिक या उच्च शिक्षा प्रदान नहीं कर पाई। इसलिए उच्च शिक्षा की बढ़ती मांग को ध्यान में रखते हुए तथा कॉलेज व विश्वविद्यालय को राज्य द्वारा दिए जाने वाले ऋण की असमर्थता के बावजूद, निजी संस्थानों की भागीदारी को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

उच्च शिक्षा में निजीकरण सरकार के नियन्त्रण से बाहर होकर कार्य करने की प्रक्रिया है। इस प्रकार शिक्षा ही नहीं कोई भी कार्य जो व्यक्तिगत स्तर या समूह संगठन स्तर पर किया जा सकता है। लेकिन जो भी कार्य किया जाए सवैधानिक नियमों से बाहर न किया जाए। आज भारत सरकार का झुकाव निजीकरण की ओर हो रहा है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण एक अच्छा विकल्प है। जब सरकार का पूर्ण नियन्त्रण होता है तो कई प्रकार के प्रतिबन्ध लग जाते हैं और उनके चलते-चलते विकास कार्यों की गति धीमी पड़ जाती है।

विश्व बैंक (1992) में उच्च शिक्षा के निजीकरण से सम्बन्धित निम्नलिखित तर्क दिए हैं।

1. शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति होगी क्योंकि निजीकरण से विविधता और चयन को बढ़ावा मिलेगा। छात्र-छात्राओं के चयन हेतु कई विकल्प होंगे।
2. इससे साधनों के प्रयोग में कुशलता को प्रोत्साहन मिलेगा और छात्र-छात्राओं को यह गुण भविष्य में लाभप्रद होगा।

उच्चतर शिक्षा के निजीकरण के सकारात्मक पहलू -

निजीकरण सरकारी संस्थानों की सीमित संख्या की पूर्ति करती है।

इसलिए सरकार को उच्च शिक्षा के लिए निजी भागीदारों को प्रेरित करना चाहिए। लेकिन उच्च शिक्षा पूर्णतः निजी क्षेत्रों को नहीं सोपना चाहिए।

यदि एक बार निजीकरण हो जाता है तो इसकी अमीर वर्ग के हाथों में ही रहेगा। यदि विद्यार्थी पैसे के बल पर उच्चतर शिक्षा में प्रवेश पा लेते हैं तो वे पैसे के बल पर ही सरकारी नौकरियां भी प्राप्त कर लेते हैं।

इस बात को स्वीकार करना मुश्किल नहीं होता कि राज्य और केन्द्र सरकारें उच्च शिक्षा और नए व्यावसायिक कॉलेज को खोलने में विद्यार्थियों की रुचि के अनुरूप कॉलेज खोलने में उचित मात्रा में वित्तीय सहायता प्रदान नहीं करती है। उच्च शिक्षा का निजीकरण शिक्षा के उन निश्चित क्षेत्रों में बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में समर्थ है।

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के एम.एड. तथा बी.एड. के छात्रों का उच्च शिक्षा के निजीकरण के प्रति विचारों का तुलनात्मक अध्ययन।

बी.एन. जॉन सन के अनुसार "निजीकरण एक आम प्रक्रिया है जिसमें निजी क्षेत्रों के मालिक या निजी उद्यमियों के कार्यों को शामिल किया जाता है। क्योंकि निजीकरण का प्रभाव लगभग अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों का प्रभाव लगभग अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में तीव्र रूप से अपनाया जा रहा है तथा यह शिक्षा में भी उसी रूप से लागू होता है।"

विश्वकोश के अनुसार "वह शिक्षा जो सैकेण्डरी शिक्षा पूरी करने के पश्चात् 17 से 23 के विद्यार्थियों को कॉलेज या विश्वविद्यालय में प्रदान की जाती है जिसमें छात्रों को डिग्रियाँ प्रदान की जाती है।

1. कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के ग्रामीण व शहरी एम.एड तथा बी.एड. के छात्रों का उच्च शिक्षा के निजीकरण के प्रति विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना। 2. कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के पुरुष एवं महिला छात्रों (एम.एड. एवं बी.एड. के) का उच्च शिक्षा के निजीकरण के प्रति विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

1. उच्च शिक्षा के निजीकरण में एम.एड तथा बी.एड. के ग्रामीण एवं शहरी छात्रों के विचारों में सार्थक अन्तर नहीं होगा। 2. उच्च शिक्षा के निजीकरण में पुरुष और महिला (बी.एड. और एम.एड. के) छात्रों के विचारों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।

1. इस शोध में केवल बी.एड. और एम.एड. के छात्रों को लिया गया। 2. इस शोध में केवल कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के छात्रों को लिया गया।

3. इस अध्ययन में न्यादर्श के रूप में 40 छात्र बी.एड. के और 40 छात्र एम.एड. के लिए थे जिनमें से प्रत्येक से 20 महिला और 20 पुरुष।

v/; ; u dh fof/k % अध्ययन के उद्देश्यों और प्रकृति को ध्यान में रखते हुए विवरणात्मक सर्वे विधि को अपनाया गया।

ef; ; fu"d"kl % 1. एम.एड. और बी.एड. के छात्रों में उच्च शिक्षा के निजीकरण के प्रति विचारों में सार्थक अन्तर नहीं है अर्थात् एम.एड. और बी.एड. के छात्र एक समान विचार रखते हैं वे न तो उच्च शिक्षा के निजीकरण के पक्ष में हैं और न ही विपक्ष में हैं उन दोनों के विचारों में उच्च शिक्षा के निजीकरण में निश्चितता नहीं है क्योंकि उन्हें उच्च शिक्षा पर निजीकरण के विभिन्न प्रभावों का ज्यादा ज्ञान नहीं है। 2. उच्च शिक्षा के निजीकरण में पुरुष और महिला दोनों समूहों (एम.एड. और बी.एड.) के विचारों में सार्थक अन्तर नहीं है दोनों के विचार उच्च शिक्षा के निजीकरण में एक समान है। पुरुष एवं महिला दोनों के विचारों में निश्चितता नहीं है क्योंकि उन्हें उच्च शिक्षा पर निजीकरण के प्रभाव का ज्यादा ज्ञान नहीं है।

'k{kfd fugr{k % 1. इस अध्ययन के शीर्षक के अन्तर्गत अभिभावकों तथा अध्यापकों के सैम्पल लेकर अध्ययन किया जा सकता है। 2. इस शोध के आधार पर निजीकरण के विषय में नीति निर्माताओं तथा पाठ्यक्रम निर्माताओं के विचार लिये जा सकते हैं। 3. निजीकरण के सम्बन्ध में नीति तथा सरकारी संस्थानों और कॉलेजों के सैम्पल लेकर आगे शोध कार्य किया जा सकता है।

इस विषय के सम्बन्ध में पूरे देश के सैम्पल लेकर भविष्य में शोधकार्य किया जा सकता है।

I UnHkZ %

1. Aggarwal, Y.P.(1998). Statistical Methods, Concepts, Application and computation. New Delhi: Sterling publishing Pvt. Ltd.
2. Aggarwal, Y.P.(1998). The Science of Educational Research- A Source Book. Kurukshetra: Nirmal Book Agency.
3. Best, J.W. & Kahn, J.V. (1996). Research in Education. New Delhi: Prentice Hall of India Pvt. Ltd.,
4. Aggarwal, Vidya and Sharm, Uma Rani (2002). Privatization of Higher Education: Controversies and Suggestions. University News, Vol. 40, No. 49, Dec. 09-15.
5. Husain, Ilyas and Furgam, Quamar (1995) Budgetary Practices in Colleges of Higher education in India. Journal of Education Planning and Administration, Vol. 9, No. 3, July.

Hkkj rh; f' k{k 0; oLFkk % , d v/; ; u

i dt d e k j ; k n o *

भारतीय सभ्यता और संस्कृति विश्व में अपना अलग स्थान रखती है। विश्व के अन्य देश जब असभ्य जीवन यापन कर रहे थे, भारत में एक उच्च कोटि की संस्कृति फलीभूत हो रही थी। भारत की यह संस्कृति जिसके कारण कभी विश्व गुरु हुआ करते थे, नगरों में निर्मित न होकर वन प्रान्तीय आश्रमों में विकसित हुई थी। इस संस्कृति के विकास में सूक्ष्म तत्वान्वेषी, त्याग, तपस्या, सच्चरित्रता एवं अनुशासन प्रिय गुरुओं द्वारा गुरुकुलों में प्रतिष्ठित शिक्षा पद्धति ने अतिशय योगदान किया, फलस्वरूप चार-पांच सहस्राब्दियाँ व्यतीत हो जाने के अनन्तर भी यह संस्कृति सुरक्षित है। भारतीय मनीषा उत्तरदायित्वों के विधिवत निर्वाह-भावना के विकास हेतु शिक्षा की महती आवश्यकता अनुभव की। प्राचीन भारतीय समाज में जहाँ एक ओर यह मान्यता प्रचलित थी कि शिक्षा व्यक्ति में समस्त गुणों के आधान की माध्यम होने के साथ-साथ आजीविका का उत्तम साधन थी, वहीं दूसरी ओर यह मान्यता भी प्रकारान्तर से प्रचलित थी कि शिक्षा को मात्र आजीविका का साधन न माना जाय। धार्मिक एवं वैयक्तिक स्वरूप वाली शिक्षा को प्राप्त कर व्यक्ति भावी-जीवन के झन्झावातों के भय से अपने कर्तव्य पथ से विचलित नहीं होता था।

दान-दक्षिणा एवं कदाचित् गुरुओं द्वारा इसका बहिष्कार कर मात्र शिष्यों द्वारा भिक्षाटन में प्राप्त अन्नादि पर व्यवस्थिति होने के कारण गुरुकुलों पर किसी राजा, सरकार या अन्य किसी राजनीतिक दलों का जायज, नाजायज नियन्त्रण नहीं था। राजा मात्र यह व्यवस्था देता था कि विद्वान-पण्डित निर्बाध अध्ययन कर्म में निरत रहें, फलस्वरूप शिक्षा का सम्राट स्वयं गुरु होता था और वह शिष्य हेतु जिस प्रकार की शिक्षा अभीष्ट समझता था, देता था तथा शिक्षा मंदिर के कपाट राजा एवं रंक सभी के लिए समान रूप से खुले होते थे। प्राचीन शिक्षा शास्त्रियों का विश्वास था कि मानव जीवन की सफलता

का आधार आदर्शात्मक एवं उदात्त चरित्र का चमत्कार है अतः वे चरित्र निर्माण पर बल देते थे। आधुनिक शिक्षाशास्त्री चरित्रवान व्यक्तियों की अपेक्षा विद्वान व्यक्तियों का निर्माण करना अच्छा समझते हैं।

भारतीय सरकार द्वारा शिक्षा व्यवस्था के दोषों को दूर करने के बजाय टेकेदारी प्रथा थोपी जा रही है। अन्य क्षेत्रों में चल रही टेकेदारी व्यवस्था का परिणाम आम आदमी के समक्ष है। आवश्यकता थी शिक्षा व्यवस्था के ठले पुर्जों की चूड़ी कसने की, किन्तु उसे कसने के बजाय नई व्यवस्था के नाम पर एक नया घाव दिया जा रहा है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सोची समझी नीति की आड़ में किसी साजिश की बू आ रही है। यह कहना असंगत न होगा कि शैक्षिक अनुबन्धीकरण की प्रक्रिया के क्रियान्वित होने से अराजकता में बेहताशा वृद्धि होगी। शिक्षा प्रौद्योगिक, चिकित्सा तथा आर्थिक विकास आदि की सम्मुन्नत व्यवस्था आज अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एवं आदान-प्रदान पर आधारित हो गयी है। विकसित, विकासशील एवं अविकसित राष्ट्रों की सहयोगात्मक प्रवृत्ति एवं ग्रहणी शीलता इसे गति प्रदान करेगी। विकसित एवं विकासशील देशों के विकास का मूल उस देश की प्रौद्योगिकीय है। विकसित देशों में वैज्ञानिक अविष्कार, शिक्षा सम्बन्धी शोध कार्य, शैक्षिक नवाचार वहां के अत्यन्त उन्नतिशील एवं परिष्कृत हैं। उनकी तुलना में विकासशील देशों की संस्थिति निर्माणवस्था में है। ऐसी परिस्थिति में आवश्यक है कि विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों में अपनी सन्निकटता हो। एक-दूसरे राष्ट्र के हित के लिए एक मंच, एक मत एवं सहयोगात्मक प्रवृत्ति का विकास हो, प्रौद्योगिकी शिक्षा का परस्पर आदान-प्रदान हो, विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों को एक दूसरे राष्ट्रों में स्थापित करने, डिग्री डिप्लोमा देने की पूर्ण स्वतंत्रता हो, सूचना प्रौद्योगिकी का हस्तान्तरण किया जाय। एक राष्ट्र की समस्त कार्य प्रणाली, शैक्षिक एवं वैज्ञानिक विकास का लाभ समस्त राष्ट्रों को प्राप्त हो। इस उद्देश्यों की प्राप्ति के निमित्त इक्कीसवीं सदी में एक नवीन संकल्पना का उदय हुआ जिसे भूमण्डलीकरण कहा जाता है।

भारत में भूमण्डलीकरण की भावना रखने का मंतव्य ऋषियों एवं मनीषियों ने सहस्रों वर्ष पूर्व में ही "वसुधैव कुटुम्बकम्" उक्ति के माध्यम से दिया था। ऋग्वेद सम्पूर्ण विश्व की श्रेष्ठता की कामना समान रूप से करता हुआ कहता है 'कृष्वन्तो विश्वमार्यम्' महात्मा बुद्ध ने सारी दुनिया में धर्मराज्य की स्थापना करने पर तथा मध्य काल में पैगम्बरों ने मनुष्य जाति की एकता

की बात सोची थी। कन्फ्यूसियस ने कहा था "आसमान के नीचे एक परिवार है" ईसाई धर्म पृथ्वी पर शान्ति सह अस्तित्व एवं सदभावना का मूल मंतव्य दिया है। वर्तमान समय में प्रत्येक राष्ट्र और मानव को अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने और विकास पथ का आलम्बन ग्रहण करने के लिए आवश्यक हो गया है। कि प्राचीन भारतीय आदर्श 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को अंगीकार करते हुए शिक्षा, व्यापार वाणिज्य, स्वास्थ्य, वैज्ञानिक गतिविधियों के साथ-साथ शान्ति की स्थापना के लिए सभी राष्ट्र और व्यक्ति एक केन्द्र की स्थापना करके परस्पर आदान-प्रदान, आयात-निर्यात को मूर्त रूप दें और लाभान्वित हों। ऐसे उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विकसित राष्ट्र द्वारा, उदासीकरण, निजीकरण, बाजारीकरण की अवधारणाओं को जन्म दिया गया है।

अध्यापन कार्य में स्थायित्व की कमी के कारण बुद्धिजीवी वर्ग अध्यापन के पेशे के प्रति आकर्षित न होकर पत्रकार, साहित्यकार, उच्चाधिकारी एवं व्यापारी बनने की ओर कहीं अधिक आकृष्ट होगा। ऐसी स्थिति में जब न पढ़ने वाले होंगे और न पढ़ाने वाले, उच्च शिक्षा का भविष्य खतरे में पड़ जायेगा। अतः विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को अपने निर्णय पर सार्थक बहस करानी चाहिए तथा उच्च शिक्षा में गुणवत्ता परिवर्तन के लिए शिक्षा से जुड़ी बुनियादी समस्याओं को तलाश कर कठोरता के साथ अनुपालन किया एवं कराया जाना चाहिए और उच्च शिक्षा को माफियाओं के मायाजाल से मुक्त रखना चाहिए।

I UnHkz %

1. ओड. लक्ष्मीलाल, 1982; शिक्षा के दार्शनिक आधार, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
2. पाण्डेय. राम सकल, 2012; भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
3. सारस्वत. मालती, 2010; भारतीय शिक्षा का इतिहास, आलोक प्रकाशन, इलाहाबाद, उ0प्र0
4. चौब. सरयू प्रसाद; आधुनिक शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

vuh"k di j ds mi LFkki u f'kYi ea
jæka dk i z ksx

uhye dækjh*

अनीष कपूर का जन्म 1954 में इंग्लैण्ड में हुआ। यहीं रहकर ये कार्य करते रहे, उनके कार्य दो विपरीत भावनाओं के धारक हैं। वे कामोत्तेजक और आध्यात्मिक हैं और एक प्रकार से अमानवीय शक्ति का आभास कराते हैं।¹ उन्होंने आनन्द और बेचैनी दोनों को प्रस्तुत किया जिसमें गहरें रंगों का प्रयोग किया है। इन गहरे रंगों के प्रयोग से समुदाय विशेष के संस्कृति और हिन्दू त्योहारों में प्रयोग किये जाने वाले चमकीले रंगों का आभास मिलता है। अनेक प्रयोगवादी कलाकारों के समान अनीष कपूर ने सहजता से इन्स्टालेशन विधा को ग्रहण किया है।

अनीष कपूर अपने कार्य में जड़-चेतन को पदार्थीय भाव में देखते रहे हैं। उन्होंने उपस्थिति, अनुपस्थिति, ठोस और अदृश्य विचार को अपने मूर्ति शिल्प का आधार बनाया है। उनके कार्य में अंधेरापन और प्रकाश प्रत्यक्ष आभासित होता है। रेजिन के अल्प-पारदर्शी गुण रंगों को अपने में समाहित करता है, प्रकाश और आकार के मध्य जो गतिशीलता दिखाई देती है वह ईश्वरीय अनुभव कराती है। यह मानव की अति-भौतिक और मनोवैज्ञानिक अवस्था माना जा सकता है।² अनीष कपूर के मूर्तिशिल्प पत्थर को तराश कर या फिर पॉलिश किये गये स्टील से निर्मित होते हैं। मिश्रित माध्यम में किया गया उनका कार्य उल्लेखनीय है।

अनीष का विचार रहा है कि वे किसी निर्दिष्ट शैली में बंधकर कार्य नहीं करना चाहते क्योंकि इस प्रकार की संकीर्णता किसी भी सृजनात्मक विषय को मृत कर देती है। अनीष कपूर इस गहन सत्य को सर्वदा अपने कला प्रक्रिया में उजागर करते हैं। उन्होंने अधिकतर मूर्तिशिल्पों को काले और नीले रंग में बनाया है। नीले रंग में गहराई दिखाई देती है। वैचारिक दृष्टि से देखा

जाय तो गहरे नीले रंग में देर तक आँखें नहीं टिकती। उनका विचार रहा है कि वैचारिक कला प्रवृत्ति और मनोवैज्ञानिकता के आपसी समन्वय से कला में जीवन्तता आ जाती है। उनका विचार है कि गहरा रंग और गहनता लिए हुए रंग अंधेरे को आभासित करते हैं। उनका यह भी मानना है कि लाल रंग की गहरी छाया काले तक जाते-जाते अंधेरेपन का आभास देता है। ज्ञात हो कि उनके पैतृक घर की भूमि भी लाल है।³ उनके मूर्तिशिल्प में स्थापत्य की संरचना की जटिलता के समन्वय होने पर भी सौन्दर्यबोधीय दृष्टि से कार्य का स्तर बहुत उच्चकोटि का है। इनमें घनापन एवं उत्कृष्टता, वृहदता तथा अतिमानवीयता का बोध होता है। फिर भी उनके लिए किसी मूर्ति का बड़ा होना महत्व नहीं रखता बल्कि उसका अर्थपूर्ण होना महत्वपूर्ण है।⁴

अनीष कपूर 1980 से अपने विशाल ज्यामितीय आकारों के कल्पित तथा मिश्रित माध्यम में निर्मित मूर्तिशिल्पों के लिए जाने गये। इनके मूर्तिशिल्प में साधारण तात्विक पदार्थों जैसे ग्रेनाइट, लाइम स्टोन, मार्बल, रंग और प्लास्टर का प्रयोग किया गया। इनके आरम्भिक मूर्तिशिल्प घुमावदार आकारों और एकल चमकीले रंगों में रंगे गये। सूखे रंगों का प्रयोग आकार का आभास देने के लिए किया गया। 1980 और 1990 में उन्होंने पदार्थों में विस्तार देना आरम्भ किया। उनके अनेकों विशालकाय मूर्तिशिल्प बहुत दूर से ही दिखाई देते रहे हैं। उनके कार्य भूमि पर सिमटते रहे या अपने आस-पास के अन्तराल को भेदते रहे हैं।⁵ 1987 में उन्होंने पत्थर माध्यम में कार्य करना आरम्भ किया। खदान से निकाले गये पत्थर के ठोस मूर्तिशिल्प में उभार और उत्तल सतह दर्शाये गये। इनमें दो विचार एक साथ दिखाई देते हैं, जैसे पृथ्वी-आकाश, भौतिक पदार्थ-आत्मा, प्रकाश-छाया, दृश्य-अदृश्य, चेतन-अचेतन, पुरुष-नारी, शरीर-मस्तिष्क आदि। 1995 से उन्होंने विकसित रूपों के विस्तारित सतह के पॉलिश किये हुए स्टेनलेस स्टील के कृतियों का निर्माण किया। ये सभी कार्य दर्पण के समान, परावर्तित या विकृति के रूप में दर्शक और आस-पास के वातावरण के परावर्तन को दर्शाते रहे हैं। इस दशक में अनीष कपूर के मूर्तिशिल्प आकार और अंतराल को एक नये रूप में परिभाषित करते हैं। उन्होंने वृहद आकार के मूर्तिशिल्पों का निर्माण किया, जिसमें 'तारनतारा' मूर्तिशिल्प भी शामिल रहा है जो 1999 में बना। यह 35 मीटर लम्बा मूर्तिशिल्प इंग्लैण्ड के गेट्सहेड के बाल्टिक फ्लोर मिल में लगा है।⁶ 'मारस्यास' शीर्षक से 2002 में स्टील और पी.वी.सी. माध्यम में वृहद बना मूर्तिशिल्प एक छोर से दूसरे छोर तक 3,400 वर्ग फीट का है। यह टेट मॉडर्न के टरबाइन दीर्घा में

*असिस्टेंट प्रोफेसर, दृश्यकला विभाग, असम विश्वविद्यालय, सीलचर, असम

प्रदर्शित हुआ। इसी प्रकार अनीष कपूर द्वारा बनाया गया पत्थर का मेहराब उत्तरी नार्वे के लोडिन्जेन में झील के किनारे लगाया गया। 'पाराबोलिक वाटर' शीर्षक मूर्तिशिल्प तेजी से घूमते हुए रंगीन पानी की धारा को प्रदर्शित कर रहा था। इस शिल्प को लन्दन के मिलिनियम डोम के बाहर स्थापित किया गया है।⁷ उनके मूर्तिशिल्प का एक हिस्सा लाल मोम के प्रयोग से बना है, जो माँस, रक्त और आकृतिकरण का नया आयाम है। 2007 में 'स्वयंभ' Svayambh मूर्तिशिल्प को प्रस्तुत किया गया जिसके शीर्षक का अर्थ संस्कृत भाषा में स्वयं-निर्मित है। 1.5 मीटर लाल मोम के ब्लॉक में बना यह मूर्तिशिल्प घुमावदार आधार पर घूमता है।⁸

2008-09 में रॉयल एकेडमी ऑफ आर्ट्स में प्रतिस्थापन कला की एकल प्रदर्शनी का आयोजन करने वाले वे प्रथम भारतीय कलाकार हैं जिन्होंने तीन महीने की इस प्रदर्शनी में लगभग 275,000 दर्शकों को आकर्षित किया।⁹ उन्होंने अपने कलात्मक यात्राकाल में नये मूर्तिशिल्पों को शामिल किया। इनमें दर्पण जैसे वस्तु निरपेक्ष तथा सीमेन्ट माध्यम के मूर्तिशिल्प उल्लेखनीय हैं। 'शूटिंग इन्टू दी कॉर्नर' कला दीर्घा के एक किनारे में दर्शाया गया जिसमें मोम के गोलों को एक तोप के साथ रखा गया। यह प्रतिस्थापन जनवरी 2009 में वियेना के मैक नामक स्थान पर नाटकीय उपस्थिति के साथ प्रस्तुत किया गया था। इस प्रकार के कार्यों में अनीष कपूर की अभिरुचि स्वयं निर्मित वस्तुओं की ओर निरन्तर रही। मोम को दीवार और फर्श पर प्रस्तुत करके नये प्रकार के आकारों का निर्माण करते रहे जो एक विचित्र प्रकार की उश्मा जागृत करते थे।¹⁰ यह स्थापना 2008-09 में मिश्रित माध्यम में बना जिसमें भिन्नता लिए हुए शिल्पगत आयाम को प्रस्तुत किया गया। कला दीर्घा के एक हिस्से में तोप की संरचना को और दरवाजे, दीवार एवं फर्श पर खून के समान छींटे दर्शाये गये। यह स्थापना रायल एकेडमी ऑफ आर्ट्स, लन्दन के दीर्घा में प्रस्तुत किया गया। कपूर के इस स्थापना ने अपनी प्रस्तुति से साबित किया कि यह हिंसा को परिभाषित करता है। इस स्थापना में लाल रंग रंग को अधिक प्रभावी ढंग से प्रयोग किया गया है।

2011 के बसन्त में उनका मूर्तिशिल्प "लेवियाथान" जो 'डाक्यूमेन्टा' वार्षिकी प्रतिस्थापन था, यह अन्तिम रूप से पेरिस के ग्रैण्ड पालइस के लिए किया गया था। अनीष कपूर ने इसे 'एकल वस्तु, एकल आकार व एकल रंग के रूप में वर्णित किया। उनकी इच्छा थी कि सृजनात्मक अंतराल अपने अक्षत अन्तराल में व्यवस्थित हो तथा दीर्घा की ऊँचाई और प्रकाशित होने का आभास

कराये। दर्शक इस कार्य के अन्दर जाये तथा रंग के साथ अपने को शामिल कर लें। वे इस प्रकार के आध्यात्मिक और कवितामय अनुभव की अनुभूति करते हुए कार्य करते रहे। 2011 में ही अनीष कपूर ने "डर्टी कॉर्नर" निर्माण किया जो मिलान के फैब्रिका डेलबेपोरे में प्रदर्शित हुआ। इसका स्वरूप पूर्णरूप से गिरजाघर के अन्तराल को आच्छादित किये हुए था। साठ मीटर लम्बा और आठ मीटर ऊँचा स्टील का आयतन जहाँ दर्शक अन्दर तक जाते थे और धीरे-धीरे वे अन्तराल के विचार में खो जाते थे। अन्दर प्रकाश व्यवस्था न होने से गहरा अंधेरा हो जाता था और दर्शकों को वैचारिक रूप से यह बाध्य किया जाता था कि वे अपने अन्तर्बाध को आधार मान कर अन्तराल के आनंद का अनुभव करें। इस गहरे भाग का आकार लगभग गोल था जो आन्तरिक और बाह्य सतह को एक सा आभासित करता था। बिल्कुल गोलाकार; लगभग एक सौ साठ क्यूबिक मीटर को घेरता हुआ एक मशीनी उपकरण, जिसका बहुत कम संपर्क जमीन से था।¹¹

टू रिप्लेक्ट ऐन इन्टीमेट पार्ट ऑफ दी रेड में निर्मित हुआ। काष्ठ, सीमेन्ट पोलिस्टीरीन और रंग में विभिन्न अर्द्ध गोलाकार संरचनाओं को दर्शाया गया है। तीन लाल रंग की संरचनाओं को फर्श पर बिछे लाल रंग पर स्थापित किया गया है। एक पीले संरचना को फर्श पर बिछे पीले रंग पर दर्शाया गया है। इन सभी संरचनाओं को अलग-अलग आकार में प्रस्तुत किया गया है, लेकिन इनमें आपसी सम्बन्ध दिखाई देता है। एक त्रिकोण आकार के समायोजन से इन सबको विरोधाभासी अवयव के रूप में दर्शाया गया है।

इस प्रकार के विभिन्न पदार्थीय सम्मिलन की संभावना; जिसमें मूर्तियों और मंचन के मध्य जो संबध था वह भारत के शास्त्रीय ओर लोक परंपरा में पहले भी था। पारंपरिक परिप्रेक्ष्य में मूर्तिकला और नृत्य दोनों का सह-अस्तित्व था। स्थापना कला ने कला के स्थिरता को जीवित परिवेश में प्रस्तुत किया। यह कला वर्तमान समय की स्थितियों और यथार्थ को परिभाषित करते हुए वर्तमान विश्व के साथ समन्वय प्रस्तुत करती है। इस संदर्भ में यह नयी व्याख्या है कि जहां मूर्तिशिल्प का अंत होता है वहां से मंचन आरंभ होता है। इस प्रकार स्थापना कला ने नये सृजनात्मक परिभाषा का प्रतिपादन किया। यह भी कहा जा सकता है कि इस कला में मूर्ति और मंचन, चित्र और स्थापत्य की सीमा रेखा को समाप्त करके नये कल्पनाओं और प्रयोगात्मक संभावनाओं को प्रश्रय देना आरंभ किया।¹² स्थापना कला और अभिनय में एक प्रकार से समतुल्यता है, क्योंकि दोनों दर्शकों के साथ सम्प्रेषण का कार्य करते

हैं और दर्शक को सदैव एक नया अनुभव होता है। इन्टरैक्टिव इन्स्टोलेशन एक प्रकार से दर्शक को भी अपने क्रियाकलापों के साथ जोड़ देता है। अगर इस कलात्मक क्रियाकलाप के साथ दर्शक जुड़ कर सृजनात्मक गतिविधि में भाग लेने लगता है तो कलाकार का उद्देश्य पूर्ण हो जाता है। आधुनिक युग में स्थापना कला के अन्तर्गत वेब इन्स्टोलेशन, गैलरी आधारित इन्स्टोलेशन, डिजिटल इन्स्टोलेशन, इलेक्ट्रॉनिक आधारित इन्स्टोलेशन, मोबाइल आधारित इन्स्टोलेशन आदि का प्रचलन 1990 से हुआ और कलाकार दर्शकों की भागीदारी को अधिक महत्व देते रहे हैं।¹³ इस प्रकार की अभिव्यक्ति के नये तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता से रंगों के प्रयोग में भी विविधता होती है। खनिज रंग और रासायनिक रंगों का स्थान अब रंग के प्रकाश कणों ने ले लिया है। यद्यपि मंच कला के अन्तर्गत रंगीन वस्त्रों व प्रकाश व्यवस्था का महत्व तो है ही तथापि विडियों व ध्वनि के प्रसार में प्रकाशित रंग कणों के अनियमित संयोजन भी अपनी क्रमबद्धता से प्रेक्षकों के मन-मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

I UnHkz %

1. http://en.wikipedia.org/wiki/Anish_Kapoor
<http://www.metmuseum.org/toah/works-of-art/1999.305d>
2. http://www.factum-arte.com/eng/artistas/Kapoor/greyman_cries.asp
3. <http://farticulate.wordpress.com/2010/12/09/9-december-2010-anish-kapoor-selected-installations-interviews/>
4. Ibid
5. http://en.wikipedia.org/wiki/Anish_Kapoor
6. Ibid
7. Ibid
8. Ibid
9. Ibid
10. Ibid
11. Ibid
12. Pal, Op.cit, pp. 61-62
13. http://en.wikipedia.org/wiki/Anish_Kapoor

efgyk I 'kDrhdj .k % , d foopu

mi dkj n'Yk 'kek*

भारत की प्रथम महिला पूर्व राष्ट्रपति श्रीमति प्रतिभा पाटिल ने 25 जुलाई 2007 को संसद के केन्द्रीय हॉल में शपथ ग्रहण करने के बाद अपने पहले और संक्षिप्त संबोधन में महिलाओं के सशक्तीकरण पर विशेष जोर देते हुए कहा कि उनका मानना है कि नारी सशक्तीकरण से राष्ट्र को सशक्त बनाने में मदद मिलेगी। महिलाओं का इतिहास काफी उतार-चढ़ाव भरा रहा है। भारत की सभ्यता और संस्कृति में स्त्रियों ने कुछ विशेष कालों में अहम भूमिका निभायी है और ऐसे भी युग आये हैं, जिनमें इनको यातनायें एवं शोषण भी सहना पड़ा है।

भारतीय महिलाओं की सामाजिक स्थिति और भूमिका बहुत कुछ समाज के स्वरूप और विशेषताओं पर निर्भर करती है। उसमें समाज की परम्पराएं कैसी हैं? वह समाज आधुनिक है अथवा परम्परागत, यह सब सामाजिक परिस्थितियों के रूप को प्रभावित करते हैं, साथ-ही-साथ समाज का आकार और संरचना भी महिलाओं की सामाजिक स्थिति का निर्धारण करते हैं। समाज में होने वाले विकास जैसे-नगरीकरण, जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण, यातायात के साधन इत्यादि भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। वर्तमान परिवेश में पुत्रियों का महत्व धीरे-धीरे बढ़ रहा है। शहरी और ग्रामीण महिलाओं के विचारों में भी परिवर्तन आया है और समाज के प्रतिमानों, मूल्यों के प्रति उनका दृष्टिकोण बदल रहा है। ये शिक्षित महिलाएं यह समझ रही हैं कि मेरी दयनीय स्थिति के लिए अशिक्षा, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, परम्परागत मान्यता तथा समाज का पुरुष प्रधान होना जिम्मेदार है। आज की महिलाएं चाहती हैं कि वे अपने अधिकारों के साथ-साथ बौद्धिक जागरूकता एवं आत्मनिर्भरता भी प्राप्त करें। वे अपने पैरों पर खड़ा होने की इच्छा ही नहीं, बल्कि एक प्रबल क्षमता भी रखती हैं।

भारतीय महिलाओं को प्रोत्साहित करने एवं विकास की ओर ले जाने के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने विभिन्न प्रकार के महिला कल्याण कार्यक्रम, पुरस्कार आदि प्रारंभ किये हैं। बहुत से अधिनियमों को कानूनी अमली जामा पहनाया गया है। किसी भी समाज में मानवाधिकारों का निर्विवाद महत्व है। व्यक्ति के मन, वाणी व कर्म की स्वतंत्रता का मूल स्रोत ही मानवाधिकार है। मानव के अधिकार स्वीकृत सिद्धांत है लेकिन दुर्भाग्य से हमारे पुरुष प्रधान समाज में इस शब्द का एकमात्र अर्थ पुरुष का अधिकार है।

महात्मा गाँधी ने कहा था— “स्त्री पुरुष की संगिनी है, जिसकी बौद्धिक क्षमताएं पुरुष की बौद्धिक क्षमताओं से किसी भी तरह कम नहीं है। पुरुष की प्रवृत्तियों में उन प्रवृत्तियों के प्रत्येक अंग एवं उपांग में उसे भाग लेने का अधिकार है। स्वाधीनता का भी उसे उतना ही अधिकार है जितना पुरुषों को।” 1893 में न्यूजीलैंड ने पहली बार महिलाओं को मताधिकार दिया जिसके पश्चात 1908 में आस्ट्रेलिया एवं कनाडा में महिलाओं को मत देने अधिकार प्राप्त हुआ।

गाँधी जी ने कहा था, “स्त्रियों के अधिकारों के सवाल पर मैं किसी तरह का समझौता स्वीकार नहीं कर सकता। मेरी राय में महिलाओं पर भी ऐसा कोई कानूनी प्रतिबंध नहीं लगाना चाहिए, जो कि पुरुषों पर लगाया गया हो। पुत्र एवं पुत्री में किसी तरह का भेद नहीं होना चाहिए। संविधान लागू होने के छः दशक के बाद भी महिलाओं की समाज में स्थिति, समानता, स्वतंत्रता की प्रतिबद्धता किस हद तक पूरी हुई है का जायजा लेने के लिए यह समय बिलकुल उपयुक्त है। नोबल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन के अनुसार “भारत को अपनी 1.21 अरब की वर्तमान जनसंख्या में से 3.3 करोड़ गायब हुई औरतों का जवाब देना है।” वर्तमान समय का सबसे ज्वलंत विषय कन्याभ्रूण हत्या है।

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा का यह क्रूरतम एवं घृणित रूप है। एक ओर जहां महिला सशक्तीकरण की बातें की जा रही हैं, वहीं दूसरी ओर उसके जन्म लेने पर प्रश्नचिन्ह लगा हुआ है। भारत में महिलाओं के प्रति उत्पीड़न की समस्या इतनी व्यापक है कि प्रत्येक 29 मिनट में एक बलात्कार, 19 मिनट में हत्या, 77 मिनट में एक दहेज मृत्यु, 23 मिनट में एक अपहरण, 3 मिनट में हिंसा, 10 मिनट में एक धोखाधड़ी होती है। पिछले कुछ वर्षों में भारतीय समाज में महिलाओं का दायरा बढ़ा है जो सरकार की सकारात्मक नीतियों, गैरसरकारी संस्थाओं तथा अन्य सामाजिक समूहों के प्रयत्नों का नतीजा है।

शैक्षणिक क्षेत्र में लड़कियों की वर्तमान सफलता भारतीय समाज में बदलाव की वजह बनने वाली है। भारतीय महिलाओं ने राष्ट्र के विकास,

स्वतंत्रता आन्दोलन, शासन व सामाजिक अभियानों में भी अहम भूमिका निभायी है। इन सबके बावजूद देश की परम्परावादी सोच व सामाजिक स्थितियों ने महिलाओं को आगे आने में रुकावटें खड़ी की हैं। लेकिन जैसे महिलाओं में शिक्षा और जागरूकता बढ़ी देश में बदलाव की लहर आयी और वे स्वयं बढ़कर महती भूमिका निभाने लगीं। आज महिलाओं में जागरूकता आ रही है और उनका आत्मविश्वास बढ़ रहा है तो इसकी वजह उनका आर्थिक-सामाजिक विकास है।

fu"d"kl % सारांश रूप में कहा जा सकता है कि आज भारतीय महिलाओं के कल्याण और सशक्तिकरण के लिए राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक पोषण मिला है।

स्पष्ट है कि देश में महिलाओं की स्थिति में प्रत्येक क्षेत्र में सुधार आया है, लेकिन समाज में उन्हें वांछित स्थान दिलाने हेतु अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना बाकी है वास्तविकता यह है कि महिलाओं की स्थिति को बदलने के लिए तमाम सरकारी और कानूनी प्रयास तब ही अधिक कारगर हो सकते हैं जब समाज के संपूर्ण सोच, रवैये और पूर्वाग्रहपूर्ण धारणाओं में भी उनके प्रति बदलाव आए। परिणामस्वरूप इक्कीसवीं शताब्दी की चुनौतियों का सामना करने हेतु अभी भी हमें यह लड़ाई तब तक जारी रखनी है, जब तक कि हम उन्हें पूरी तरह हर क्षेत्र में बराबरी का दर्जा और सम्मानजनक स्थान उपलब्ध नहीं करा दें। तभी हम विश्व के समक्ष अपना सिर गौरव से ऊंचा रख पाने में समर्थ हो पाएंगे।

I UnHkz %

1. करण बहादुर सिंह, महिला अधिकार व सशक्तिकरण, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), मार्च 2006
2. ऋतु सारस्वत, महिला अधिकारिता: एक विश्लेषण, योजना (हिन्दी), अक्टूबर 2006
3. कौशिक, आशा, नारी सशक्तिकरण : विमर्श एवं यथार्थ, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर 2004
4. भट्टाचार्य, सुनीलकान्त, भारत की सामाजिक समस्याएँ, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 2004
5. राधा कुमार, स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
6. शर्मा, वीरेन्द्र प्रकाश, भारतीय समाज, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
7. रस्तौगी, आर0के0, लिंग एवं समाज, संजीव प्रकाशन, मेरठ

dkyhinkl dkyhu tui nka dk , dhjdj .k
nodlnz dækj mi k/; k; *

| kjka k % प्रस्तुत शोध-पत्र कालीदास कालीन जनपदों के एकीकरण के महत्वपूर्ण पक्षों को रेखांकित करता है। यह अध्ययन ऐतिहासिक शोध प्रणाली पर आधारित है। इस अध्ययन से तत्कालीन समाज की स्थिति भी ज्ञात होता है।

कालीदास ने अपने ग्रन्थों में जिन जनपदों का उल्लेख किया है, उनमें सबसे पहले उन स्थान-नामों को लेना चाहिए जो रघुवंश के चतुर्थ सर्ग में रघु-दिग्विजय के प्रकरण में आते हैं। रघु-दिग्विजय का प्रयास कर रहे थे। सर्वशक्तिशाली मध्यवर्ती अयोध्या राज्य कालीदास का विजेता सुदूर पूर्व का मार्ग पकड़ता है और भारत की पूर्वी सीमा बंगोपसागर¹ के तट पर पहुँचता है। पूर्वी जनपद के निवासियों में कणि ने सुह्य, लड़ाकू नौ-बेड़ा² से सुसज्जित वंग और उत्कलवासियों का नामोल्लेख किया है।

| d % सुह्य वंग के पश्चिम में था। महाभारत का प्रसिद्ध टीकाकार नीलकण्ठ इसको 'राधा' बतलाता है और इसलिए यह बंगाल का वह भाग था जो गंगा³ के पश्चिम में पड़ता था और जिसमें तामलुक, मिदनापुर और शायद दुगली और वर्तमान जिले में भी सम्मिलित थे। वृहत्संहिता में यह वंग और कलिग के बीच में अवास्थित माना गया है, जो ठीक वही स्थान है जहाँ कालीदास ने इसे रखा है। कालीदास ने बतलाया है कि सौह्य संतो से भरी भूमि के निवासी थे।

oX % वंगों का देश टिपेरा के पश्चिम में था। इसको गौड़ अथवा उत्तरी बंगाल मानकर भ्रम नहीं उपस्थित किया जा सकता, क्योंकि माधव-चम्पू में दोनों देश स्पष्ट रूप से पृथक हैं। पार्जितर वंग का एकीकरण उस स्थान से करता है जहाँ आज के मुर्शिदाबाद, नदिया, यशोहर, पवना और फरीदपुर के जिले अवस्थित हैं।⁴ वंगों को कालीदास गंगा-ब्रम्हपुत्र (गंगा-स्त्रोतोडन्तरेण) की लायी हुई मिट्टी से बनी भूमि के निवासी मानते हैं जिससे ये सागर-सैन्य⁵ रखने वाले समुद्र-विहारी लोग हैं।

*शोध छात्र, प्रा0 इतिहास, मडियाहूँ पी0जी0 कालेज, मडियाहूँ, जौनपुर, उ0प्र0

mRdy % उत्कल अपभ्रंश है उत्कलिंग का, जिसका अर्थ है, कालिंग का उत्तरी भाग। उत्कल का विस्तार उत्तर में बंगाल के मेदिनीपुर की कसई नदी तक और दक्षिण में कलिंग तक था।

dfya % जनपद कलिंघम कलिंग को उत्तर-पश्चिम में इन्द्रावती नदी की शारवा गोलिया और दक्षिण-पश्चिम में गोदावरी नदी के मध्य में रखते हैं और राप्सन के अनुसार यह उत्तर में महानदी और दक्षिण में गोदावरी तक विस्तृत है। अतः गोदावरी को कलिंग की दक्षिणी सीमा माना जाता है। उत्तर में यह उत्कल से मिला हुआ था।

अब कालीदास का विजेता पूग वृक्षों से भरे सागर-तट के साथ-साथ दक्षिण की ओर अग्रसर होता है। वह कावेरी को पार करता है, मसालों की भूमि मलाया से होकर निकल जाता है, और सुदूर दक्षिण में उसकी मुठभेड़ होती है शक्तिशाली⁶ पाण्ड्यों से। वह उनके प्रत्याक्रमण को असफल करता है और उनके सम्पूर्ण मोतियों के भण्डारों को प्राप्त करता है। इसके उपरान्त अजेय-पराक्रम रघु ने मलय और पालघाट-दरी से पश्चिमी घाट को पार किया।

ik.M; % पाण्ड्य देश भारत के अत्यन्त दक्षिण में था जो चोल देश के दक्षिण-पश्चिम में पड़ता था। मलय पर्वत तथा ताम्रपर्णी नदी इसकी स्थिति निम्नान्त रूप से निश्चित करते हैं। इसकी उत्तरी सीमा कावेरी तक पहुँचती प्रतीत होती है जहाँ से यह दक्षिण में सीधे भारत-महासागर तक विस्तृत है।⁶

vijklr&djy % कालीदास विजेता की सेना भारत के सम्पूर्ण पश्चिमी समुद्री किनारे (अपरान्त) पर विजय प्राप्त करने के लक्ष्य से पश्चिमी तट पर बढ़ चली। 'कौतिल्य-अर्थशास्त्र' के अपने भाष्य में भट्टसवामी अपरान्त का एकीकरण कोंकण के साथ करते हैं जबकि 'ब्रह्मपुराण' सूपाकर को भी शामिल करता है। किन्तु कालीदास का वर्णन इन दोनों में किसी के साथ भी सहमत नहीं। पूर्व तट पर रघु की विजय के बाद उन्होंने जो वर्णन किया है उसके अनुसार, वे स्वभावतया समुद्रतट का समस्त पश्चिमीय अंचल रघु के साम्राज्य में मिला देना चाहते हैं, अतएव अपरान्त का प्रयोग सामान्य अर्थ में हुआ है। जिसमें पश्चिम का सारा किनारा शामिल है। केरल का वर्णन 54-55 वे पद्य में है। अतः केरल, जहाँ की ललनाओं ने रघु की सेना के आने के भय होकर अपने आभूषण उतार फेंके थे। सम्पूर्ण पश्चिमी तट अपनी भौगोलिक सीमा के अन्तर्गत कोंकण के तीन भागों, उत्तर में दमन से गोवा तक, मध्य का कर्नाटक तट और दक्षिण केरल को सम्मिलित करता था।

अपरान्त-विजय त्रिकूट में आकर पूर्णता प्राप्त करती है, जहाँ के तीन गिरिश्रंग त्रय विजय स्तम्भ के रूप में प्रकट होते हैं। त्रिकूट वह स्थान प्रतीत होता है, जहाँ से समुद्र बहुत अधिक दूर नहीं था। कालीदास बतलाते हैं कि त्रिकूट से ही पारसीकों के देश की जाने वाले स्थल तथा जल मार्ग भिन्न होते थे। सम्भव है नासिक के पश्चिम में खड़ी किसी पहाड़ी का नाम त्रिकूट हो।

नासिक के समीप अजनेरी से प्राप्त एक प्रस्तर-केरल में 'प्राच्यत्रिकूट' विषय का उल्लेख हुआ है।

भारत-वर्ष के दूर पश्चिम में अन्तिम उत्तरी छोर त्रिकूट की हस्तगत कर लेने के पश्चात पारसी को परान्त किया गया।

संक्षेप में, प्रस्तुत अध्ययन कालीदास कालीन जनपदों के एकीकरण के सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण संकेत देता है।

सन्दर्भ

1. पूर्व सागर गामिनी, रघु. 4.32
2. बंगान-नौसाधनोद्यतान् वही, 36
3. आनन्द भट्ट का बल्लालचरितम्, खण्ड, 2
4. एन्सेण्ट कण्ट्रीज इन ईस्टर्न इण्डिया, जे0ए0एस0बी0 1897, पृ. 85
5. दिशि मन्दापते तेजो दक्षिणस्यां स्वैरपि , रघु. 4.46
6. ताम्रपर्णीसमेतस्य मुन्तासारं महोदयः। रघु. 4.50

Hkkj r ea Ñ"kd l ekt dh vo/kkj .kk

MkK0 jktdpkj feJ*

सृष्टि के प्रारंभ से मानव समाज में कृषक समाज की संरचना किसी न किसी रूप में विद्यमान रही है। ग्रामीण समुदाय में कृषक समाज का क्रमशः उद्भव एवं विकास हुआ है इस प्रकार प्राथमिक अवस्था में एक स्थिर एवं स्थायी जीवन व्यतीत करने के लिए कृषि कार्य योग्य भू-भागों पर जो व्यक्तियों की बस्तियाँ निर्मित हुईं। इसे ही समाजशास्त्रियों ने 'कृषक समाज' की संज्ञा दी है।

भारत जैसे विशाल देश के सभी ग्रामीण समुदाय कृषकों के समुदाय नहीं माने जा सकते। संरचनात्मक दृष्टि से भारतीय ग्रामों में काफी भिन्नता देखने को मिलती है।

आन्द्रे बेतेइ¹ ने लिखा है कि यद्यपि कुछ समाजों को कृषक समाजों के रूप में चित्रित करना लाभदायक हो सकता है परन्तु यह संदेहजनक है कि कोई परंपरागत भारत के लिए इस बात को माने। जहाँ एक ओर वृहद जातीय संस्तरण की प्रणाली पायी जाती है तो दूसरी तरफ जटिल कृषि संबंधी स्तरीकरण। इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज को 'कृषक समाज' (Peasant Society) नहीं माना जा सकता।

रेडफील्ड के अनुसार यदि हम संपूर्ण भारतीय समाज को नगरीय, कृषक तथा जनजातीय खण्डों में विभक्त करते हैं तो यह योजना भारतीय समाज पर संतोष जनक रूप से लागू नहीं होती। इस संदर्भ में आन्द्रे बेतेइ² ने रेडफील्ड के विचारों के प्रति दो अपत्तियाँ उठाई हैं- i fke रेडफील्ड ने 'कृषक समाज' को एक अवशिष्ट श्रेणी (Residual Catagor) माना है अर्थात् ग्रामीण भारत से जनजातीय भारत को अलग करने पर जो कुछ शेष बचता है उसे ही रेडफील्ड 'कृषक समाज' कहते हैं। इससे कृषक समाज के वास्तविक लक्षणों पर प्रकाश नहीं पड़ता तथा भारतीय परिस्थितियों में कृषक समाज को अवशिष्ट श्रेणी नहीं माना जा सकता।

*प्रवक्ता, समाजशास्त्र विभाग, मडियाहूँ पी0जी0 कालेज, मडियाहूँ, जौनपुर, उ0प्र0

f}rh; & भारत के गैर-जनजातीय गाँव इतने अधिक स्तरीकृत है कि उन्हें रेडफील्ड के विचारों के आधार पर कृषक समाज का नाम नहीं दिया जा सकता। इसके अतिरिक्त आन्द्रे बेतेइ³ की मान्यता है कि भारत में बहुत से जनजातीय गाँव वास्तव में कृषकों के समुदाय हैं। यदि हम छोटी घुमन्तू, शिकारी तथा फल-फूल एकत्रित करने वाली जनजातियों को छोड़ दे तो पायेंगे कि बहुत सी बड़ी जनजातियाँ जो एक स्थान पर रहकर खेती करती हैं तथा समुदायों में संगठित हैं, कृषक वर्ग के समान हैं। आन्द्रे बेतेई का तो मत है कि यदि भारत में कृषक समुदायों को देखना है तो संथाल, उरांव और मुण्डा जनजातियाँ इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं। अन्य आधारों पर भी रॉबर्ट रेडफील्ड के विचारों को भारतीय संदर्भ में उपयुक्त नहीं माना गया है वे इस प्रकार हैं—

(1) एक कृषक समुदाय आदर्श रूप में एक अविभेदीकृत और अस्तरीकृत समुदाय माना गया है। लेकिन जब हम विभिन्न भारतीय ग्राम अध्ययनों पर दृष्टि डालते हैं तो पाते हैं कि भारतीय ग्राम काफी विभेदीकृत और स्तरीकृत रूप में पाये जाते हैं लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भारतीय ग्रामों में कृषक नहीं पाये जाते या भारत में कृषक ग्राम नहीं है। कहने का आशय यही है कि भारत में विभिन्न प्रकार के गाँव पाये जाते हैं और यहाँ ग्रामीण समाज की प्रकृति बड़ी जटिल प्रकार की है। भारतीय गाँवों की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए आन्द्रे बेतेइ ने तमिलनाडु में तन्जौर जिले के अग्रहरम गाँव का उल्लेख किया है जिसे आपने श्री पुरम् के नाम से पुकारा है। यह 349 परिवारों का एक ऐसा गाँव है जिसकी सामाजिक संरचना काफी विभेदीकृत तथा स्तरीकृत प्रकार की है। इन परिवारों में से 92 परिवार ब्राह्मणों के हैं जो अन्य लोगों से पृथक एक अलग मोहल्ले में रहते हैं। इन लोगों को किसी भी दृष्टि से कृषक वर्ग के साथ नहीं रखा जा सकता। गाँव के कृषकों से ये लोग भोजन, रहन-सहन, वस्त्र तथा बोलचाल की दृष्टि से भिन्नता लिए हुए हैं। इन लोगों की परंपरागत मान्यतायें इन्हें स्वयं भूमि जोतने की आज्ञा नहीं देती जबकि भूमि जोतना कृषक जीवन की अनिवार्य शर्त है। ये ब्राह्मण लोग भू-स्वामी हैं जो अपनी भूमि जोतने के लिए अन्य लोगों को देते हैं। ये लोग प्रमुखतः अध्ययन-अध्यापन तथा धार्मिक अनुष्ठानों के कार्य में लगे हुए पाये गये। ये लोग तमिल की बजाय संस्कृत भाषा को अधिक महत्व देते हैं। श्री पुरम् के समान ही ब्राह्मण गाँव सारे देश में पाये जाते हैं। सभी जगह ब्राह्मणों के स्वयं खेत जोतने

के सम्बन्ध में परंपरागत प्रतिबन्ध पाये जाते रहे हैं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि इन ब्राह्मणों को किसी भी अर्थ में कृषक नहीं माना जा सकता।

गाँवों में ब्राह्मणों के अलावा राजपूत जाति के लोग भी रहते हैं। इनमें राजा महाराजाओं के अतिरिक्त जागीरदार, जमींदार, तथा ठेकेदार आते हैं जो अपनी परंपराओं के अनुसार स्वयं खेत नहीं जोतते हैं, बल्कि निम्न जाति के किरायेदारों से जुतवाते हैं। उच्च प्रस्थिति वाले मुसलमान लोग भी हाथ से काम करना ठीक नहीं समझते। यही कारण है कि वे स्वयं खेतों पर काम नहीं करते। आन्द्रे बेतेइ द्वारा अध्ययन ग्राम श्री पुरम् में ब्राह्मणों के अलावा दस्तकार और साथ ही खेती करने वाले लोग भी रहते हैं। इस ग्राम में खेती करने वाली जातियों के तीन प्रमुख समूह—वेलालास, कालास तथा पाडयाचिस पाये जाते हैं। इन्हीं समूहों के सदस्यों से मिलकर गाँव का कृषक वर्ग बना है, यद्यपि ये भू-स्वामी कृषक होने की बजाय किराये पर भूमि जोतने वाले काश्तकार हैं। ये लोग कृषि कार्यों में भूमिहीन श्रमिकों की सहायता लेते हैं। इससे स्पष्ट हो रहा है कि श्री पुरम् एक ऐसा गाँव है जो कृषक गाँव नहीं कहला सकता। गिलबर्ट एटीनी⁴ ने श्रीपुरम् के विपरीत प्रकार के तन्जौर जिले के एक गाँव किलाउलूर का उल्लेख किया है। इस गाँव को कृषकों का गाँव कहा जा सकता है यद्यपि इसमें कई जातियों के लोग रहते हैं जो सबके सब भू-स्वामी काश्तकार नहीं हैं।

इस गाँव की आधी से अधिक आर्थिक दृष्टि से सक्रिय जनसंख्या भू-स्वामी काश्तकारों से मिलकर बनी है और यहाँ बटाईदारी में खेती का कम महत्व है। किलाउलूर में भूमिहीन श्रमिक भी पाये जाते हैं। यहाँ किराये पर भूमि जोतने हेतु देने वाले का कोई पृथक वर्ग नहीं पाया जाता है।

(2) आन्द्रे बेतेइ⁵ ने अपने क्षेत्रीय अध्ययनों के आधार पर बताया है कि यह सही है कि ग्रामों में कुछ जातियाँ जिन्हें अकृषक और कुछ ऐसी जातियाँ जिन्हें कृषक कहा जा सकता है, मिल जायेंगी, परन्तु ग्रामीण सामाजिक संरचना के सही अध्ययन की दृष्टि से यह आवश्यक है कि प्रत्येक जाति में पाये जाने वाले आन्तरिक विभेदीकरण तथा स्तरीकरण को ध्यान में रखा जाय। अतः आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण अध्ययनों में विश्लेषण की इकाई के रूप में जाति के स्थान पर परिवार को लिया जाय। ऐसा करने पर ही हमें पता चल पायेगा कि किसी कृषक समझी जाने वाले जाति में सही अर्थों में कितने परिवार कृषक हैं, कितने अकृषक और कितने उत्पादन में वास्तविक भूमिका की दृष्टि से सीमान्तः स्थिति में हैं।

(3) गाँव में यह भी पाया गया है कि बहुत से परिवार प्रस्थिति तथा पारिवारिक सम्मान संबंधी सामाजिक दृष्टि से परिभाषित अवधारणाओं के कारण स्वयं खेत पर काम नहीं करना चाहते। वे या तो बटाईदारी में खेती करवाते हैं या किराये पर भूमि जोतने को दे देते हैं। वे कई बार भूमिहीन श्रमिकों द्वारा अपने खेतों में कार्य कराते हैं और स्वयं निरीक्षणकर्ता के रूप में भूमिका निभाते हैं। जब कोई परिवार दो या तीन पीढ़ियों से खेत पर स्वयं काम करना बन्द कर देता है तो ऐसी स्थिति में वह कृषक कहलाने का अधिकारी नहीं रह जाता है।

(4) सही अर्थों में उसी परिवार को कृषक परिवार कहा जा सकता है जिसके सभी सक्रिय सदस्य पुरुष और स्त्रियाँ दोनों खेत पर काम करते हैं। यहाँ स्वाभाविक रूप से

यह प्रश्न उठता है कि ऐसे परिवारों को कृषक परिवार माना जाय या नहीं जिसमें पुरुष खेतों पर काम करते हैं, लेकिन प्रथा के अनुसार भारत में संपत्ति अधिकारों की संरचना, प्रस्थिति, सम्मान तथा शुद्धता की धारणायें कृषि कार्य में स्त्री की भूमिका और कृषक परिवार में कार्य के विभाजन का निर्धारण करती है। ये धारणायें सांस्कृतिक रूप से विशिष्टता लिए हुए होती हैं और यह एक समाज और दूसरे समाज में, यहाँ तक कि एक ही समाज के विभिन्न स्तर के लोगों में भिन्न-भिन्न होती हैं। आन्द्रे बेतेइ का कहना है कि यदि हमें कृषक परिवारों या समुदायों का अधिक अर्थपूर्ण ढंग से अध्ययन करना है तो इन विश्वासों, मूल्यों तथा मनोभावों पर विशेष ध्यान देना होगा। ऐसा करने पर ही हम वास्तविकता को समझ पायेंगे।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि गाँवों में रहने वाले सभी लोगों को कृषक नहीं माना जा सकता। भारतीय ग्राम की जनसंख्या काफी स्तरीकृत है और यहाँ कई ऐसे स्तरों के लोग पाये जाते हैं जिन्हें किसी भी दृष्टि से कृषक नहीं कहा जा सकता।

I UnHkz :

1. Andre Beteille, op. cit. P. 48
2. Andre Beteille, op. cit. P. 49
3. Andre Beteille, op. cit. P. 42
4. Gilbert Etienne, Studies in Indian Agriculture, Theart of the possible 1968
5. Andre Beteille, op. cit. P. 53Ibid, P. 55

efgykvka ds l 'kfädj .k ea xj l jdkjh
l æBuka dh Hkfedk

Mkno eatw Hkkjr rh*

सशक्तीकरण की अवधारणा को दो रूपों में व्याख्यायित किया जा सकता है – एक आयामी और बहुआयामी। राजनैतिक शक्ति पर केन्द्रित नारी सशक्तीकरण का मॉडल एक आयामी है क्योंकि यह नारी को अपने शरीर, यौनिकता और संस्थागत संसाधनों पर नियंत्रण तक सीमित करता है जबकि सबलीकरण की बहुआयामी अवधारणा नारी सशक्तीकरण के लिए अधिक संभावनापूर्ण है। राजनैतिक आयाम के अलावा सशक्तीकरण के सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक आयाम भी महत्वपूर्ण हैं। अतः सशक्तीकरण की बहुआयामी अवधारणा जो नारियों को सभी प्रकार की क्षमताओं को बढ़ाने पर बल देती है, को एक आयामी राजनैतिक शक्ति केन्द्रीय अवधारणा के स्थान पर अपनाने की आवश्यकता है क्योंकि न्यायपूर्ण संबंधों की जगह हमें संस्थागत स्तर पर नारी विकास का सपना पूरा करना है और यह तभी संभव है जब नारी सशक्तीकरण का लक्ष्य सामाजिक तौर पर प्राप्त होगा। महिला सशक्तीकरण एक चेतनशील, अनवरत एवं व्यापक स्तर पर महिलाओं के आत्मविश्वास एवं क्षमता में निर्माण तथा निर्णय प्रक्रियाओं में सहभागिता में वृद्धि करने वाली प्रक्रिया है। सशक्तीकरण महिलाओं को लोकतांत्रिक विकास प्रक्रियाओं में भागीदारी हेतु समर्थ बनाती है। यह प्रक्रिया महिलाओं को शक्तिहीनता और गुलामी से मुक्त करती है और उनके अंदर लोकतांत्रिक निर्णय प्रक्रियाओं में सहभागिता हेतु अति महत्वपूर्ण क्षमता का विकास करती है।

वर्तमान समय में सशक्तीकरण एक फैशनेबल अवधारणा बन गई है। पूर्व में यह शब्द राजनीतिकशास्त्रियों द्वारा प्रयोग किया जाता रहा है। राजनैतिक विज्ञान में इसका सीमित उपयोग किया गया, क्योंकि इस विज्ञान में सशक्तीकरण से अभिप्राय उस राजनैतिक शक्ति से था जिसको राजनैतिक

*प्रवक्ता, समाजशास्त्र विभाग, ए0एन0डी0 कॉलेज, कानपुर, उ0प्र0

रूप से किसी संस्था को संवैधानिक रूप से प्रशासनिक नियम द्वारा प्रदत्त किया गया रहा हो। इसके पश्चात् सशक्तीकरण की अवधारणा का प्रयोग अन्य समाज विज्ञानों में बढ़ा।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में इस अवधारणा का व्यापक प्रयोग आर्थिक रूप से गरीब राष्ट्रों या कमजोर वर्ग के संदर्भ में प्रयुक्त किया जाने लगा है। भारत सहित पूरे विश्व में गैर सरकारी संगठनों का एक आंदोलन ही इन दिनों महिला सशक्तीकरण के लिए सक्रिय है। वर्तमान में संपूर्ण भारत वर्ष में 12 लाख एन.जी.ओ. कार्यरत हैं जिनमें से 83 प्रतिशत महिला सशक्तीकरण एवं ग्रामीण परिवेशों पर आधारित हैं। विश्व में मैसिको तथा चीन के बाद भारत में सर्वाधिक गैर सरकारी संगठन है। गैर सरकारी संगठनों के अद्भुत उदय और वृद्धि का सिलसिला पिछले दो दशकों में विश्वस्तर पर प्रतिबिम्बित हुआ है एवं विकास के नए आयामों की प्राप्ति में अविस्मरणीय योगदान दिया है। आज गैर-सरकारी संगठनों ने खुद को निजी और सरकारी क्षेत्रों के समतुल्य खड़ा किया है।

1985-1990 के दौरान गैर-सरकारी संगठनों को राज्यों के सहायक के रूप में स्पष्ट नियमों एवं निर्देशों के साथ परिवार नियोजन, पर्यावरण और महिला सशक्तीकरण जैसे मुद्दों पर अपना ध्यान केन्द्रित करने पर जोर दिया गया। इस तरह महिला सशक्तीकरण की प्राप्ति में पहली बार गैर-सरकारी संगठनों की मदद ली गई। महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में आगे लाकर ही उनको सशक्त बनाया जा सकता है, इस अवधारणा के तहत सन् 2001 को सरकार ने महिलाओं का सर्वांगीण विकास करने वाला वर्ष घोषित किया तथा इस कार्य में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका को प्राथमिकता दी गयी। इन संगठनों की सक्रियता एवं सकारात्मक भूमिका से ही महिलाओं पर हो रही हिंसा, उत्पीड़न एवं शोषण को कम कर उनका सशक्तीकरण किया जा रहा है। गैर सरकारी संगठन महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन और उनके विकास में केन्द्रीय भूमिका का निर्वाहन कर रहे हैं। इन संगठनों को 'जनता के आँख और कान' की संज्ञा दी गई है। इन गैर सरकारी संगठनों ने महिलाओं पर हो रही हिंसा, उत्पीड़न एवं शोषण को रोकने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

अनीता स्टेफन (2006) ने अपने अध्ययन में कहा कि महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार तथा सशक्तीकरण का कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। उनकी शक्तिहीनता का मुख्य कारण सामाजिक, सांस्कृतिक एवं संरचनात्मक है

न कि उनकी कमजोर आर्थिक स्थिति। छवि श्रीवास्तव (2007) ने अपने अध्ययन में यह विचार व्यक्त किया कि महिलाएँ समाज की महत्वपूर्ण धुरी हैं। सशक्तीकरण का अभियान यह संकेत करता है कि वे समाज में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक मोर्चों पर शक्तिहीन हैं तभी तो सशक्तीकरण की अनुगूँज ध्वनित हो रही है। जेण्डर अब मुद्दा बन गया है। राय, चन्द्रकान्त (2010) ने अपने अध्ययन में यह पाया कि गैर सरकारी संगठन जन संस्कृति के साथ गहरा तालमेल स्थापित करके रखते हैं तथा वे सदा वंचितों के अधिकारों एवं शोषण के पक्ष में जुझारू संघर्ष का रास्ता अपनाते हैं, जिसके कारण पिछड़ों, गरीबों, किसानों, महिलाओं, बच्चों, सारी मलिन बस्तियों एवं जनजातियों का अनौपचारिक अध्ययन गैर सरकारी संगठनों का प्रमुख कार्यक्षेत्र है।

गैर सरकारी संगठन महिला सशक्तीकरण हेतु प्रभावशाली तरीके से कार्यरत हैं। महिला एवं बाल विकास विभाग की परियोजना 'महिलाओं के लिए प्रशिक्षण तथा रोजगार कार्यक्रम हेतु सहायता (स्टेप) का क्रियान्वयन गैर सरकारी संगठनों के द्वारा स्वयं सहायता समूह के माध्यम से किया जा रहा है। इसका उद्देश्य महिलाओं को छोटे व्यवहारिक दलों में संगठित करना तथा प्रशिक्षण और ऋण के माध्यम से सुविधाएँ उपलब्ध कराना है, ताकि वे रोजगार एवं आमदनी बढ़ाने वाले कार्यक्रम चला सकें। महिलाओं को प्रशिक्षित करना, अधिमानतः गैर परम्परागत क्षेत्रों में उन्हें प्रशिक्षण देना तथा महिलाओं का रोजगार सुनिश्चित करने के लिए गैर सरकारी संगठनों के सहयोग से 'महिलाओं के लिए रोजगार 'नोराड' संचालित की जा रही है। बच्चों के लिए बाल देखभाल केन्द्र, कामकाजी महिलाओं के लिए हॉस्टल भवनों का निर्माण, विस्तार की योजना, अपने घरों से दूर रहने वाली कामकाजी महिलाओं को सस्ता एवं सुरक्षित आवास उपलब्ध कराने के उद्देश्य की पूर्ति हेतु गैर सरकारी संगठनों के सहयोग से विभिन्न योजनायें चलायी जा रही हैं। इसके अन्तर्गत एकल कामकाजी महिलाएँ, विधवाएँ, तलाकशुदा, परित्यक्त तथा ऐसी कामकाजी महिलाएँ जिनके पति शहर में नहीं रहते हैं लाभान्वित हो रही हैं। महिलाओं तथा लड़कियों के लिए अल्पावास गृहों का संचालन गैर सरकारी संगठनों के सहयोग से किया जा रहा है। इसके अन्तर्गत ऐसी महिलायें लाभान्वित हो रही हैं जिनके पास कोई सामाजिक सहायता प्रणाली उपलब्ध नहीं है। जिन्हें जबरदस्ती वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर किया जा रहा है। परिवारिक तनाव अथवा अनबन के कारण आजीविका के साधनों के बिना जिन्हें अपना घर छोड़ना पड़ा तथा शोषण के विरुद्ध जिनके पास कोई सामाजिक सुरक्षा नहीं

है अथवा जो विवाह सम्बन्धी विवादों के कारण मुकदमेबाजी की शिकार हैं। जिनका यौन शोषण किया गया है तथा वे परिवार अथवा समाज में पुनः समायोजन के लिए समस्याओं का सामना कर रही हैं।

I UnHkz %

1. कार्ल, मारली (2002) : वूमन एण्ड एम्पावरमेंट, पारटीसिफेशन एण्ड डिजीजन मेकीन, लंदन
2. जेनबबानु (2001) : वूमन एम्पावरमेंट, थ्योरीरिकल थ्रस्ट, इण्डियन जनरल ऑफ सैक्यूलरिज्म, अप्रैल
3. साहू, असीसा (2000) : वीमेन लिवरेशन एण्ड ह्यूमन राइट्स, जयपुर
4. व्यास, डॉ. मीनाक्षी (2008) : नारी चेतना और सामाजिक विधान, रोशनी पब्लिकेशन्स, कानपुर, पृ. 95-97
5. मजूमदार, वीना (1990) : सिम्बल्स ऑफ पावर-विमैन इन चेजिंग सोसाइटी, बाम्बे
6. वूमन पॉलिसी (2010): डिपार्टमेंट ऑफ वूमन एण्ड चाइल्ड डेवलपमेंट मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट, गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया, दिल्ली
7. अनीता स्टेफन (2006): कम्यूनिकेशन, टेक्नोलॉजीस एण्ड वूमन इम्पावरमेंट, रजत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
8. छवि श्रीवास्तव (2007): सूचना का अधिकार और महिला सशक्तीकरण, सोसाइटी फार मीडिया एण्ड सोशल डेवलपमेंट, वाराणसी
9. राय, चन्द्रकान्त (2010) : गैर सरकारी संगठन – स्थापना, प्रबन्धन और परियोजनायें, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

Self Help Groups and the Women Dairy Development Project

(A Reference to Uttarakhand)

Dr. Deepali Kanwal*

Credit is crucial input in the process of development. In the formal credit system, women have consciously and deliberately been marginalized by the institutions and agencies involved in the system. Infact this is due to the inability of the formal banking system to address the credit requirements of the poor, and particularly the women. Our formal credit system failed to understand that the women are not merely the beneficiaries and their abilities as benefactors need to be assessed.

Thus, all these factors together contributed to the emergence of micro credit as an alternative credit system and are generally recognized as a powerful tool for the socio-economic uplift of the women.

Women in Uttarakhand

Uttarakhand, before being constituted as a separate state of India on 9th Nov, 2000 was a part of Uttar Pradesh. The total population of the state as per the census of 2011 was 1.01 crores, which comprises 51.38 lakh male and 49.49 lakh females. The rural population of Uttarakhand was 70.37 lakh in 2011 which accounts near about 69.77% of the total population. The rural population comprises of 35.19 lakhs female which are a hand above the men's population of 35.18 lakhs.

Rural women are the most silent participant in the economic life of developing countries. Moreover women in the lowest classes and castes are deprived by their poverty, illiteracy and ill health of the means to escape from a short life of drudgery and fatigue. In rural India, agriculture and allied sectors employ as much as 89.5%

*Lecturer, Deptt. Of Commerce, Govt. P.G. College, Bageshwar, Uttarakhand

of the total female labours. The women of Uttarakhand are very hard working and are active not only in homes but in the fields, in community work and in socio-political movements. It is commonly said that women form the backbone of hill economy. Agriculture is the major source of income for more than 3/4th of the state's populations. Dairying is practiced as an allied activity to agriculture in the rural areas.

Women Dairy Development Project in Uttarakhand

Realizing the low status of women, government of India made number of interventions for their socio-economic emancipation. Support to Training and Employment Programme (STEP) for women is one among them. It was launched in 1986 and was sponsored by the Department of Women and Child Development, Ministry of Human Resource Development, Government of India. It aims at increasing self reliance and autonomy of women by enhancing their productivity and enabling them to take up income generation activities (animal husbandry, dairying, poultry, fisheries etc.).

Nearly 60% of these projects have been in dairy sector. The project known as Women Dairy Development Project (WDDP) is a holistic program in which various sub-systems are adequately looked in to so as to achieve system's overall objective. A number of state level dairy federations took up organizing women dairy cooperative societies under STEP program. These projects are financed by the Government of India.

The dairy cooperatives got the real momentum in Uttarakhand since 1982. It was realized that dairying is not merely a subsidiary occupation of farmers but is significantly contributing towards uplifting of rural occupation. A majority of responsibilities related to dairying and animal husbandry are looked after by the women in Uttarakhand. It was felt that women should be brought into the forefront of the dairy movement. In order to improve the condition of the women, generating the sources of income for them, increasing their confidence, education, awareness and leadership, the Women Dairy Development Project (WDDP) was launched under the STEP scheme in 1994. The project has been started with several objectives. It endeavors to provide employment by maintaining link with Development of Women and Children in Rural Area (D.W.C.R.A) and Integrated Rural Development Programme (I.R.D.P.). Further

efforts are being made to generate grass root level leadership among women. WDDP aims at organizing cooperative societies, coordinating the access of women members and women dairy cooperative societies to the safe drinking water facilities. Adult education programmes, child welfare and women health center in the remote village are also important functions.

Self Help Groups

A self help group (SHG) has been defined as a small and informal association of poor having preferably similar socio-economic background and who have come together to realized some common goals based on the principle of self-help and collective responsibility. The minimum number of members to form an SHG is five and the maximum is twenty without registration. The SHG will have a convener or other office bearers, president and secretary, elected by the group. All the members have to meet regularly every week, every fortnight or every month, in a specified place at a stipulated time, as decided by the group. The members discuss their problems and try to find out solutions of their own. During these meetings they collect their small saving and these savings are used to meet the credit requirements of the members. The savings can be either kept in a bank or kept by them. In this approach of SHG, cash transaction is secondary while participatory approach for solving the problems receives primary importance. Women SHGs are playing important role in inculcating among members sound habits of thrift, savings and banking. They show better scope of developing a common forum for the women's opportunities and skills. The various benefits of SHGs are -inculcation of spirit of self – effort and self-reliance among women; enabling a forum for women to exchange ideas; and experiences; providing opportunities to women to encourage in productive & indigenous work; fostering spirit of cooperation among women; promoting awareness – social, economical, political etc.; providing opportunities to acquire knowledge and skills and providing confidence. There are two ways in which women can get opportunity to

work: either through wage employment or through self employment. It is being felt that self employment supported by credit has more potential for improving the asset base of the poor women in the long run than wage employment. Promotion and development

of women self help groups is a strategy for long term sustainable socio-economic improvement.

As the SHGs movement was gaining importance in the rural India it was thought that besides WDCSs, SHGs should also be formed to strengthen the process of women empowerment. As a result the State Govt. of Uttarakhand and the Uttarakhand Milk Federation Ltd. introduced SHGs as a part of WDDP in the ninth five year plan. The process of organizing women self help group was started during the ninth five year by the government. In this way the WDDP is engaged in increasing self reliance and autonomy of women by enhancing their productivity and enabling them to take up income generation activities. WDDP is providing a common platform for the poor and deprived women through which various manifold activities and development programmes are being run such as - toy making, packaging and processing of food items, candle making, indigenous work etc. The SHG movement of WDDP also aims at increasing women's income level, control over income leading to greater level of economic independence and also women's participation in household decisions and other benefits. The SHGs are inculcating the habit of thrift, saving and reinvesting.

The Uttarakhand Milk Federation Ltd. introduced SHGs as a part of WDDP in the ninth five year plan. During the period of 1997-2002 and 2002-2007 the SHGs were organized under the ninth and tenth five year plan respectively. The highest numbers of SHGs (263) with a membership of 2756 women were organized during 2003-04 under the tenth five year plan. During the ninth five year plan, 315 SHGs were formed as against the target of 275 SHGs, out of which 204 SHGs(74.18%)are functional at present.During the tenth five year plan 522 SHGs were formed as against the target of 520 SHGs, out of which 412SHGs(79.23%) are functional at present..

Conclusion

The SHGs formed during the ninth and tenth five years plan under WDDP are engaged in manifold income generating activities. Majority of them are performing dairying and internal lending. Some of the other activities carried out by them are- candle making, making of juice, packaging of spices and pulses etc. But the most important aspect of SHGs which the village women are learning is to save and manage their money.

The Reserve Bank of India has launched the programme of linking SHGs with lending institutions like commercial banks so that the credit requirements of the SHGs can be properly attended by the commercial banks. WDDP is playing important role in SHGs – Bank linkage programme.

The Women Dairy Development Project is achieving its targets regarding the formation of SHGs successfully during ninth & tenth five year plan. But mere formation of SHGs is not important and it should be followed by an effective monitoring so that they could survive in future. In the absence of effective monitoring & follow up system a large no. of SHGs formed during the plans could not sustain. The Women Dairy Development Project should make sincere efforts to utilize the funds sanctioned and received in different phases so that objectives may be achieved in a better way. Government should make all efforts to improve the financial health of the project so that the SHGs formed under the project may play a vital role in the socioeconomic uplift of rural women and in turn may pace up the process of development.

References :

1. Seth, Mira, Women's Development: Indian Initiatives, Kurukshetra, August, 1995.
2. Rahman, Zainab, Empowerment of Rural Indian Women – Study of Uttarakhand, Kalpaz Publication Delhi, 2007, pp124.
3. Sen, D., and Jhansi, Rani G., Women in Dairying, Journal of Rural Development, Vol. 9 (5), 1990, pp 809.
4. Pande, R.C., Pahar Ki Mahilayn Aur Pahar Si Samasya, Dhinali Pani, a quarterly magazine of WDDP, Almora, Dec 2002 – Dec 2003.
5. Brochures of WDDP, Uttarakhand.
6. Mohanan, S., Micro – Credit and Empowerment of Women – Role of NGOs, Yojana, February, 2000, Vol. 2, pp 21.
7. Shylendra, H.S., role of Self – Help Groups, Yojana, Jan 2008, pp 25.
8. Records of Women Dairy Development Project, Almora(Uttarakhand).
9. Mohanan, S., Micro – Credit and Empowerment of Women – Role of NGOs, Yojana, Feb 2000, Vol. 2, pp 22.
10. Source: <http://ua.nic.in>

Vital Role of Women Self Help Groups(shgs) in Kumaon Region of Uttarakhand

Dr. Deepa Rawat*

Uttarakhand women have always emerged as the pillars of the rural economy due to their total involvement with agriculture, forest protection, cattle care and dairying. The male members of the family usually migrate to towns to earn a living for their families. Thus, women in villages become the heads of the family. Even where the men continue to reside in the villages, it is the women and girls who look after the agriculture and cattle. The women's health is also very poor due to negligence and improper diet, the leftover food for them is meagre, considering the families are poor and have little to begin with. This creates a major problem with malnutrition, especially for pregnant or nursing women. Few women seek medical care while pregnant because it is thought of as a temporary condition. This is one main reason why India's maternal and infant mortality rates are so high. Starting from birth, girls do not receive as much care and commitment from their parents and society as a boy would.

Uttarakhand women have been the backbone of the State's economy. They have always stood in the forefront during the struggle of State formation. Women are the backbone of the culture and traditions of the hills. Repeatedly, hill women have shown remarkable courage and participation in development programs. The life in the hilly areas of Uttarakhand is very difficult. Despite the adverse conditions, the rural women of the area portrayed immense potential and prominence in the society. Almost all the women in the society are employed in one way or other. In some cases their status was better off than any woman living in a hi-tech city or metro like Delhi. But the potential of Uttarakhand women is still not being utilized fully. Thus, there is a need to raise the status and standard of women

in Uttarakhand. Women who are working on the farm were suffering from a lot of problems. They are major contributors in the inside activities as well as outside activities. There is a need to assess the socio-economic status of the farm women.

Self Help Groups(SHG)are pilot projects implemented in the year 1992. SHGs concept attracted the attention of government of India, RBI, NABARD and other agencies. Self Help Groups (SHGs) are a homogenous group of rural poor voluntarily formed to save small amount out of their earning, which is convenient to all the members and agreed upon by all to form a common fund for the group to be lent to the members for meeting their productive and emergent credit needs. There are a lot of women SHGs coming up all over the country. In uttarakhand due to the migration of male, women are more active in SHGs.

Self Help Groups (SHGs) members of hilly areas have to face a lot more problems than SHGs of any other area/region. Due to the hilly terrain and the geographical conditions, they have to travel large distances on foot. The women are doubly burdened as they have to look after their family, which includes kids, elders and other household work. In some areas they have to travel a long distance for water, fodder for animals etc. This all she has to manage withher limited and meagre resources, in addition there are always the financial requirement of the family. The health area and nutrition of the ladies is also neglected due to poverty and lack of medical facilities. In some villages, SHGs have been formed by nearby 3-4 villages as the population is very less and BPL families have to struggle to attend the meetings regularly. In Districts Pithoragarh & Bageswar the landslides often play havoc and the link roads are blocked adding to the woes.

But slowly and steadily SHGs are proving to be an asset. A little more awareness and education is necessary with the support of the government. Women are definitely coming out of the shell with the help these SHGs. The education level and awareness regarding health, sanitation, savings and investments is on the increase which is helping them to reduce their poverty. The SHG members are empowering themselves economically, socially and politically. As a group the SHG becomes a support, which becomes politically visible for raising their voices on common issues like water problems,

*PDF, ICSSR, Rawat Niwas, Dharshula Road, Pithoragarh, Uttarakhand

education of children, health concerned in Panchyats as their local society. They are motivating their children, female counterparts etc to come up with solutions (after joining SHGs).

The peer pressure is also helping in recovering loans and as a result defaulters are minimum. They are helping themselves to eradicate their poverty, the confidence level of the village folk specially the women has increased to a visible extent. They are able to take and give feedback on their projects along with the general issues/problems surrounding them. They are able to send their queries and concern on the problems to the local Government/Panchyats to solve them. They are gaining wider acceptance through interaction in various meetings at Block level, general meetings which are more like festivals. The refreshment is provided to them in such meetings which is generally organised after a period of six (6) months. They get a good platform to share their concern over various burning issues like education of children, sanitation health, Govt schemes for the upliftment of villages etc.

The government has provided various incentives to boost the morale of the SHG members like in Bageswar a SHG was given a cash prize of Rs 5000/-. Such efforts should be encouraged. The SHG members are progressing and graduating from mere members to micro entrepreneurs which is a good sign of development of rural India. NABARD is playing a vital role in this regard. The Swarnajayanti Saroj Yojana [SGSY] has created a large number of SHGs with the help of NGO's and banks like rural development banks, Cooperative banks and Commercial banks.

The financial empowerment has helped ladies to the social empowerment to a great extent. The collective voice of a group is often better heard than that of single women. The male is generally migrated in search of job so the rural economy rests on the female. She has to make both ends meet by working day & night without a recognition and salary but thanks to the movement called self help group their value is somewhat understood. They are the sole bread earners in some families but still their health is always at stake. They are not able to look after themselves, the food and other needs. Self help groups members are earning Rs 1,000 to 2,000/- per month to supplement the family income. But still the male dominant society has not given her the due share of respect which she deserves. The

hill woman has to face a lot of hurdles and helping them overcome them should be the priority of NGO's and the government.

The subsidy should be made available which is been done in blocks (villages) at an increased level. Their education is a big concern so that the basic book keeping skills can be acquired by the women at large. The SHG's in Andhra Pradesh and the Southern State accounts to around 54% and the problems arising there should be met with differently but hilly states like J & K, Himachal Pradesh, North Eastern State and Uttarakhand have to be dealt keeping the geographical condition & other constraints in mind. The NGO's can play a vital role in reshaping SHG's. The micro finance institutions [MFI's] & NGO's should be monitored and asked for regular feedback. Although the ground & practical realities tend to differ sometimes. The profit making (earning) tendency of agencies should be discouraged with regular checks. Training sessions are regularly provided but it should be more practical and feasible and the fooding & transportation etc (costs be met by the Block/Government).

The recovery of loans should be done at minimum cost, default should be checked by the group itself by & peer pressure. Thus SHG movement has gathered a good pace in the right direction but a steady effort in the direction is needed with responsible control by the local & State agencies. Women have a vital role in the economy of any region therefore SHGs and other such self-employed organisation and individuals should be motivated by the government.

References :

1. C. Gangaiah at el Impact of SHGs on Income & Employment, Kurukshetra, Vol.54, No.5, March, 2006.
2. Dr.Naney David Development of micro enterprises by women, Ahmedabad, 1992.
3. Dr.Indrabhusan Singh and Dr.Usha Kumari needed Rural Development and Women Empowerment 'Kurukshetra' Vol.55 No.5, March, 2007.
4. Dr. M.L. Gupta at el Economic Empowerment of Women through SHGs, Kurukshetra, Feb, 2006.
5. Dr. N. Ramya Problems of Women Entrepreneurs, Third Concept, August, 2006.
6. Dr. N. Ramya at el Rural Development and Women Entrepreneurs, Kisan World, Vol.35, No.6, June, 2008.

Passing off of Trade Marks-issues and Challenges

Ms. Seema Ahlawat*
Mr. Kuldeep Birwal**

Introduction : Passing off is selling one's own goods under the pretence that they are the goods of another man. The law on passing off is designed to protect traders against that form of unfair competition which consists in acquiring for oneself, by means of false or misleading devices, the benefit of the reputation already achieved by rival traders.¹ The basic question in this tort turns upon whether the defendants' conduct is such as to tend to mislead the public to believe that the defendants' business is the plaintiffs' or to cause confusion between the business activities of the two.²

Research objective : The purpose of research work is to analyze the laws relating to passing off of Trademark and Judicial interpretation of passing off. To study remedies against action of passing off and to suggest the means for protection of interest of stakeholders.

Research questions : 1. Is existing provision relating to passing off sufficient? 2. Is there any need to reform the provision relating to passing off? 3. Is there any need to provide criminal remedies for passing off? 4. Is there any particular criteria to ascertain similarity of trademark?

Research methodology : The present research project is essentially doctrinal analysis based on survey of the primary and secondary sources of information which have been studied and examined in a holistic manner.

General Principles and the Scope of the Law of passing off : It has been held in various decisions that no man is entitled to represent the goods or business as being the goods or business of another

whether such representation is made by the use of any mark, name sign, or symbol, device or other means. It is therefore actionable wrong for any person to pass off his goods or business as the goods or business of another by whatever means that result may be achieved³. The basic underlying principle of such an action was stated by Lonng dale M.R. in *Perry v. Truefitt*⁴ to be –"A man is not to sell his own goods under the pretence that they are the goods of another man"

The concept of passing off which is a form of tort has undergone changes in course of time. At first it was restricted to the representation of one's goods as those of another. Later it was extended to business and services. Subsequently it was further applied professions and non- trading activities. Today it is applied to many forms of unfair trading and unfair competition where the activities of one person cause damage or injury to the goodwill associated with the activities of another person or group of persons.

Object of the law of passing off

The object of the law of passing off is to protect some form of property- Usually the goodwill of the plaintiff in his business or his goods or his services or in the work which he produces or something of that kind. The goodwill of the business is ordinarily represented by a mark, name, get up or other badge. Goodwill, misrepresentation and damage are the three elements of the tort of passing off, which is often referred to as the 'classical trinity' of passing off.

Essential characteristics of a contemporary passing off action

The essential characteristics which must be present in order to create a valid cause of action for passing off as stated by Lord Diplock⁵ are:

- Misrepresentation
- Made by person in the course of trade
- to prospective customers of his or ultimate consumers of goods or services supplied by him
- which is calculated to injure the business or goodwill of another trader
- which causes actual damage to a business or goodwill of the trader by whom the action is brought. No claim could however succeed, in the absence of all five.⁶

*Assistant Professor, Pt. N.R.S. Govt College, Rohtak, Hariyana

** Assitant Professor, Yash College of Education, Rurkee, Rohatak, Hariyana

Means adopted for passing off

The methods adopted by persons for representing their goods or business as the goods or business of other persons include:

- Direct false representation;
- Adoption of trade mark which is the same or a colourable imitation of the trade mark of a rival trader;
- Adoption of an essential part of the rival trader's name;
- Copying the get up or color scheme of the label used by the trader;
- Imitating the design or shape of the goods; and

Issues in a Passing off action

The following issues arise in an action for passing off:

- Whether the plaintiff has established a goodwill or reputation in connection with a business, profession, service or any other activity, among the general public or among a particular class of people, prior to the first use of the defendant.
- Whether the defendant's activities or proposed activities amount to misrepresentation which is likely to injure the business or goodwill of the plaintiff and cause or likely to cause damage to his business or goodwill.
- Whether the defendant succeeds in one or more of the defenses set by him.
- If the plaintiff succeeds what relieves he is entitled to.

Defenses in Passing off Action

In an action for passing off the defendant may setup the following defenses:

- The name, mark or other symbol, the use of which is sought to be restrained, is not distinctive of the plaintiff's goods or business.
- The defendant's use of the name, mark or other symbol is not such as to be likely to pass off his goods or business as those of the plaintiff.
- The defendant has a right of his own to use the name, mark or other symbol complained of.
- Isolated cases of passing off.
- The plaintiff is not entitled to relief on account of delay, estoppel, and acquiescence, deceptive use of the mark or symbol, misrepresentation of facts or fraudulent trade.

- The goods or businesses of the plaintiff and of the defendant are wholly different.
- Defendant using the word complained of for bona fide description of his goods Section 35 of the Trade Marks Act, 1999- surname and personal name.

Section 35 of the Act does not apply to artificial persons like incorporated company. In the case of incorporated company its adoption of the name is by choice whereas in the case of natural persons, the adoption of the surname is not by choice⁷.

Remedies for passing off

Remedies in an action for Passing off and Infringement of trademarks include civil remedies, criminal remedies and penal provisions. Section 135 of the Trade Marks Act, 1999 provides for the civil remedies in cases of alleged infringement and passing off of trade marks. Section 135 of the Trade Marks Act, 1999 provides that in any suit for infringement or passing off, the court may grant the following remedies.⁸

civil remedies

I. Injunction, II. Damages,
III. Accounts of profit, with or without any order for the delivery-up of the infringement labels and marks for destruction or erasure.

The order of injunction may be an ex-parte injunction or an interlocutory order. Such an order may be for any of the following purposes-

- (a) For discovery of documents;
- (b) Preserving of infringing goods, documents or other evidence which are related to the subject-matter of the suit;
- (c) Restraining the defendant from disposing of or dealing with his assets in a manner which may adversely affect plaintiff's ability to recover damages, costs or other pecuniary remedies which may be finally awarded to the plaintiff.

Criminal Remedies

Criminal remedies are available only in an action for infringement. Action for passing off being a tort- a civil wrong, does not call for criminal remedies in case of infringement of unregistered trade mark.

Conclusion

The law of passing off aims to protect even unregistered firms and their trade marks. This is abundantly clear that the law intends to safeguard the interest of even smallest of traders.

Registration confers upon the registered proprietor of a trade mark, exclusive and absolute rights. By this step, both the interest of the trader is protected and at the same time the difficulties faced by the Court is also covered.

In a plethora of judgments of the various Courts in India, it is observed that the process of referring to English cases for authorities in this regard is very cumbersome, tiring, time consuming and at the same time vague. Due to lack of a statute there are no concrete set of established principles that can be followed by the Courts. The High Court in its various judgments have observed that the lower Courts have acted in their discretion even when they have no such discretionary power in deciding cases of passing off of trade marks.

Under the present system, passing off is a form of tort. So no criminal proceedings can be initiated against a wrong doer. He escapes the liability by paying damages (although system of punitive damages exist, they are very rare) or suffers injunction. But these do not act as deterrent. If this action is done away with, and this is merged with the infringement action, then criminal measures can be initiated against infringer, without a chance of his escaping the punitive measures. The legislature has to take up this matter seriously, so that the hackneyed law of passing off can be done away with, which would ensure uniformity in deciding cases and conferring of concrete rights upon the proprietor of the registered trade mark.

References

- 1 Salmond Law of Torts, 17th Ed. pg. 401.
- 2 Ellora v Banarsi Dass AIR 1980 Del 254.
- 3 Office Cleaning Case (1944) 61 RPC 133.
- 4 (1842) 6 Beav 66 at 73.
- 5 Narayanan, "Intellectual Property Law," 3rd ed., 2007, p.215
- 6 Island trading v. Anchor Brewery (1989) RPC 287A AT 295.
- 7 Kirlosker Diesel Recon v. Kirlosker Proprietary AIR 1996 Bom 149.
- 8 Dr. M.K. Bhandari, "Law Relating to Intellectual Property Rights" 2nd ed. p.183

The Importance of Motivation in Organisation : A View

Dr. Rajesh Kumar Singh*

Abstract : The essence of human relation philosophy is to cultivate and develop an environment where the employees as individuals and in groups would wish to contribute their best to the organizational goal and this environment is cultivated and developed where there is an awareness of the needs, aspiration feelings and emotions of the employees on the part of the management of the organization. With awareness comes a better understanding and explanation of the behavior patterns of the individual of the group and constant interaction between them and inter personal relationship.

Introduction : Motivation is the actuating force which inspire a man to put his best in the accomplishment task. It is the most difficult management function of any organization concerned exclusively with human side of an enterprise. It is the dynamic side of management which creates will to work. The term motivation is derived from the word 'movement' and in the area of management it is used in the sense of self moving. A man is said to be motivated when his latent energy is directed towards a certain goal. From organization point of view, accomplishment of organization objectives depends on the work performance of its people. There is no doubt that motivation is the key to the promotion of good human relation. This shows that every human earnestly seeks a secure, friendly and supportive relationship. It is needless to drive home the point that every individuals regardless of his race, colour caste, sex, rank, states, nationality etc. Deserves respect and recognition of his worth as a human being and craves for them.

For effective performance organization specially developing ones must concentrate from the very beginning their job factor which

* Assistant Professor, Faculty of Commerce, R.G.S.C Barkachha, Banaras Hindu University, (South Campus), Varanasi, U.P.

have motivation and maintenance effect. It is essential that every organization must lay impression defining very clearly organization rules, policies and salary structure in relation to the future providing reasonable working condition and physical facilities congenial atmosphere essential to develop sound motivation, subordinate and co-worker which is term pave the way for effective supervision.

Allen has rightly stated “Poorly motivate people can nullify even the soundest organization.” Given the high level of skill for a particular job, the presence or absence of motivation can make a world of difference in the employee’s performance. It is therefore, the duty of the management to see employees are motivated to their jobs so that they may put their best towards the accomplishment of the organizational goals.

Herzberg’s Two Factor – Motivation Hygiene Theory: Life is for satisfaction. It is necessary to find out what satisfies the individual and to know something about what makes a man to do what he does. If the motivation of the individual a good start may be made. Behavioural Scientist such as Maslow, McClelland, Herzberg, McGregor, Argyris, Vroom and Ouchi have different views over the factors that stimulate or activate an individual in any organization. Out of different theories of motivation, the theory propounded by professor Herzberg known as Two factor or Motivation – Hygiene Theory has widely accepted to study the motivational factors.

Prior to the Herzberg’s theory it was commonly believed that the extrinsic or environmental factors such as attractive Pay and fringe benefits, status and job security, effective supervision and leadership, good working conditions cordial interpersonal relation and the sound policies and administration of the organization contributed a lot to heighten the motivation levels of employees. But it was soon realised that these factors failed to motivate the employees beyond a certain maintenance or hygiene factors or mere ‘incentives’ and they are not motivators. These factors are really more potent as dissatisfiers as they prevent dissatisfaction among employees but they are powerless motivators. These are necessary to maintain a reasonable level of satisfaction in employees. These are known as hygiene factors because they support employee’s mental health.

The real motivators, according to Herzberg that primarily build strong motivation and high job satisfaction among employees

are achievement, recognition for work done, advancement, increased responsibility the job itself and the possibility for growth and development. All of these are physical, administrative or social. Since, these are concerned with the work or job itself, they are also known as job content factors or intrinsic factors.

Monetary & Non-monetary System Of Motivation

1. Monetary System: (i). Wages & Salaries: Money is a strong motivator. In fact, the more it is given the more people would ask and the expenditure always, expands to meet the income. Wages and salary constitute the major component of the monetary system of motivating individuals to do their best. Wages and Salaries provide the means of meeting the various basic physiological and Safety and security needs of the individual. Hence, wages and salaries occupy a very important place in the motivation system of individuals and Organization. Money shall continue to occupy an important system anywhere in the world.

(ii). Incentive: In order to motivate the worker to produce more, there are several incentive schemes evolved by organizations in addition to straight wages. The regional conference of the Indian Institute of personnel management sometime ago outlined the important requisites of incentive scheme of India.

1. Under the existing conditions in India, it is necessary to provide monetary incentives to workers for putting in extra effort to increase working capacity.
2. Whereas monetary incentives must form the main ingredient of any effective scheme, it would be advisable to ensure a minimum standard of amenities and other welfare measures in order to build up a contented work force; which could be depended upon to be responsive to such schemes.
3. The norms should be fixed on scientific basis after detailed time studies and should be based on sound data.
4. Incentive scheme would be advisable to consult the employee’s representatives or unions.
5. In view of the rapidly changing technology, it is necessary to review and evaluate the incentive schemes continuously.

The human aspects of the incentive schemes must not be ignored. The employees fear and aspiration must be taken in to consideration. The schemes must be simple, easy to understand, easy to calculate

employee's earnings related to effort and be acceptable to employee and unions.

(iii). Allowances And Fringe Benefits: Allowance and fringe benefits introduced was a device to meet the needs of the employees in the light of price increases, which reduce the purchasing power of regular money wages. There are several types of fringe benefits, perquisites and other amenities to meet the peculiar need of different employees at different level.

2. Non Monetary System: There are many ways through which organizations can motivate their employees without any cost whatever.

(i). Achievement: Achievement is a strong motivator. A sense of achievement and accomplishment is the individuals essence of success and essence of meeting the goal or the target McClelland main thesis is that the need to achieve is a tremendous motivator and when you achieve your objective you derive a tremendous sense of satisfaction. The stronger the achievement derive, the greater the probability that the individual will demand more of himself.

(ii). Appreciation: When you appreciate a job that is well done, it acts as a strong motivator there is universal human urge to look for acceptance and appreciation. A person who deserve all the promotion and increments but not give him any appreciation, he will fall rather let down because there is a Universal human carving for appreciation.

(iii). Challenging Task : A challenging assignment or a job that challenges the employee is a very strong motivator. However, not all people like challenges but the dynamic go-getters would be bored with a job that provides no challenge that does not stretch their imagination, their abilities.

(iv). Recognition: People want recognition. They want to be introduced and recognized as individual human beings with a name and individual personality and a unique human being.

(v). Job Enlargement: Job enlargement performs more varied task, which are all on the same level, the idea being to make the jobs less monotonous. Job can be enlarged both in the horizontal dimension and in the vertical dimension. Job motivates employees in so far as it reduces the monetary of repetitiveness. It increases efficiency and interest in work because fatigue is lessened.

Job loading in more interesting. A horizontal job leads assume that if employees are given more work at the same level at which they are currently performing they will be motivated to work harder and also be more satisfied with their work. In a vertical job loading, changes in jobs include larger responsibility. Jobs are restructured so that they will become intrinsically more interesting. The worker is motivated because his job is more challenging and more meaningful.

According to Herzberg, job enlargement would provide an opportunity for the employee's psychological growth. In an enriched job, an employee's knows the overall deadline and the quality standards.

(vi). Job Rotation: Job rotation of an employee from one job to another is essential so that monotony and boredom are reduced. Its object is to increase the skill knowledge of the employee about the related job.

(vii). Increased Responsibility: The delegation of a substantial amount of responsibility to execute a given task often proves to be a strong motivating force. He feels that he must show results.

(viii). Job Security: Job security for some employees, an equally important motivator. Job security may be provided by properly regularizing the amount of work.

(ix). Social Security: Providing security against sickness, unemployment, disability, old age and death also motivate employees.

Conclusion: Motivation plays a crucial role in determining the level of performance of employees. Poorly motivated people can nullify even the soundest organization going through professor Herzberg's Two Factor Motivation Hygiene theory and also considering the its limitation with regards to the blue collar or low level employees in India.

References:

1. Ahuja, K.K. – Personal management. Kalyani Publisher.
2. Allen, L.A. – Management and organization. McGraw Hill, Book Company.
3. Cleveland Ohio, World Publishing Company. Two Factor Theory or Dual Factor Theory or Motivation Hygiene Theory.

The Contributions of Rajaji for the Socio-Economic Regeneration of Tamil Nadu

Dr. R. Panneer Selvam*

Introduction

As early in 19th century, Indian society was diverse socially, culturally and economically. Economically, the society was divided in various groups i.e., Zamindars and Agarian, very poor and very rich. Socially, the society was consisted of various groups including the high castes and low castes. When the British came to India, this diversity became greater by British rulers and European industry goods. The Indian social and economic interests affected by administration of British ruler. Tamil Nadu was the composite Madras Presidency during the British rule in India. The British had control of administration without intermediary assistance of Rajas and Zamindars. The Zamindars controlled cultivators (peasants) with the support of British rulers. In Madras Presidency, the Brahmins, ritually superior to other castes, appropriated the colonial services for their livelihood. The inequality between the Brahmin and non-Brahmin castes gave rise to social conflict and required policy measures right from the British colonial administration. The peasant's league and riots against Zamindars, and the British rulers. No movement organized at national level can overlook the interest of specific socio-economic groups up to 1885.

The Indian National Congress was formed in 1885 by A.O. Hume for the struggle against colonialism and development of nationalism. During its history the congress has been a three faced institution - a movement, an instrument of socio-economic regeneration and a political party. During pre-independence congress was movement, secondly is an instrument of socio-economic regeneration.¹ Historically, the movement of INC may divided into three phase

namely, moderates period (1885 to 1905), extremists period (1905-1919) and the Gandian era (1920-1947). The third phase of the congress in the year between 1920 and 1947 is led by Gandhiji.² During this period Gandian Principles and considered as the ideology of Congress. In this period of 1920 to 1947, the Congress was followed the idea of Gandhiji for a mass movement and socio-economic regeneration, there were very important leaders in the Congress, in which Rajaji also one of the leaders. The aim of this article is to explore the Rajaji's efforts to empowerment of rural groups and uplift of untouchables through the idea of Gandhiji in Tamil Nadu.

Rajaji and Gandhiji

Chakravarthi Rajagopalachari, popularly known as Rajaji was born in a village Thorappalli in Salem District of Tamil Nadu on 10th December 1878. Now this village located at Krishnagiri District of Tamilnadu. Rajaji attended school in Hosur. After becoming a law graduate in 1898, he started practice as a lawyer in Salem. When he was twenty-one he defended his first murder case. Rajaji showed keen interest in social and political affairs. In 1917, Rajaji was elected as a chairman of the Salem municipal council. In 1919, he resigned his chairmanship and migrated to Madras city. Having attracted by extremist of Tilak, he became an extremist in the beginning. Rajaji started political career as an extremist. Before coming of Gandhiji in INC, Rajaji believed in extremist.³ About this time, he read Henry Thoreau's Civil Disobedience, a book which impressed him. In 1920 he read Gandhi's Civil Indian Home Rule. This book was banned in South Africa. The non-violent ideology of Gandhiji was highly attracted by Rajaji. During third phase of the congress in the year between 1920 and 1947 is led by Gandhiji. When Mahatma Gandhi entered the movement for Indian Independence, Rajaji followed him. He was now increasingly coming under Gandhiji's influence.⁴

Mohandas Karam Chand Gandhi, known as Gandhiji was born on October 2, 1869 in Porbandar of Gujarat State. While in South Africa, he led the struggle against race discrimination and the oppression of Indians. It was then that he first advocated Satyagraha for movement. Upon his return to India in January 1915, he joined member of INC in 1919 and later, became one of its prominent leaders. During this period, Gandian principles are considered as the ideology of congress.

*Assistant Professor, History Wing, D.D.E., Annamalai University, Annamalai Nagar

Rajaji invited Gandhi to Madras through Kasturiranga Iyengar who was the president of the local Anti-Rowlatt Committee. In March 20 of 1919, at Rajaji's residence Gandhiji decided to call an All India Hartal in protest against the Rowlatt Act. Gandhi told Rajaji about this and Rajaji accepted Gandhi plan. On March 21 of 1919, Rajaji arranged a meeting in his house to form a Satyagraha Sabha.⁵ In April 13, General Dyer fired upon a peaceful crowd of people who assembled at Jalianwalabagh to show their protest against the Government. Thousands of people were killed and seriously wounded. Amritsar tragedy had its effect on all provinces of India.

In Madras, Rajaji believed that the Punjab incident could have been averted. In May 1919, 'The Hindu' published Govardhan Dass's speech about Jallian Wala Bagh tragedy. So The Hindu was ordered to furnish a security of a Rs.2000. The Hindu organized a protest with the support of Rajaji. He articulated the national demand to redress the Punjab wrongs. Non-cooperation was one of the essential elements on non-violent ideology of Gandhiji; Hence Rajaji implemented this ideology in Tamil Nadu and he resigned his advocate post. He was elected the general secretary of All India Congress in 1921. Then in 1922 at the request of Gandhi he became the editor of Young India.⁶

The Ideas of Gandhiji

The Gandhian concepts of Sarvodaya, the welfare of all, and Satyagraha, a way to achieve a society of universal welfare, are traceable to the Indian peasant traditions. Gandhi's social ideal is a petty bourgeois, peasant Utopia, the establishment of God's Kingdom of Earth. In his view, the assertion of social justice meant a return to the golden age of closed, self-sufficient peasant communities and the rejection of European machine civilization based on a market economy which he resented as something hostile to the patriarchal village life. As he saw it, market relations doomed the peasant-artisan community to degradation and perdition. Gandhi proposed what he called constructive work in villages and other goals, such as the uplift of 'untouchables' Khadi production and liquor prohibition.⁷

Gandhi Ashram

Gandhiji was not only won political independence but also started process of national generation through his famous constructive programme. Rajaji, setup a Gandhi ashram in village of

Pudhupalayam near Trichengode, then Salem District in 1925. Now this Ashram comes under Namakkal District.⁸ He stayed in this ashram and served to the people of the locality who were the most backward. He increased the medical facilities and worked against the drunkards and untouchability in the locality. Rajaji developed the socio-economic ideology of the congress or Gandhiji through his news paper namely, 'vimochanam'. The attraction due to the doctrines of Gandhiji, Rajaji gave preference to the production of khadi in his ashram. The volunteers in the Ashram were trained in constructive work like prohibition and removal of untouchability. During 1929 to 1934, the Congress recognized that "the great poverty and misery of the Indian people are due not only to foreign exploitation in India, but also to the economic structure of society" and therefore "it is essential to make revolutionary changes in the present economic and social structure of society and to gross inequalities."⁹

The role of Rajaji to uplift of untouchables

Rajaji following Gandhiji pledged to eradicate untouchability and promises to give special attention to educational and economic interest of untouchables and the backward classes. Rajaji, a believer of Constructive Programme, which was implemented in the Trichengode Ashram to train the volunteers in constructive work, medical care, eradication of untouchability and manufacturing of khadi products. Rajaji have given guidance for job opportunities to untouchables in and around Trichengode Ashram.¹⁰ He strongly supported and took part in the temple entry movement headed by Vaithyanathaiyar into the Meenakshi Temple at Madurai. Gandhi said that, "I dislike the untouchability, but Rajaji truly eradicated the untouchability through entering the Harijans into meenakshi temple". In Vaikom of Travancore State Certain roads near the temple were prohibited to the untouchables. Rajaji went to Travancore and he was one of the Gandhiji's lieutenants during the Vaikom Satyagraha, a movement to allow the untouchables into temple. The important ideology is followed and implemented by Rajaji was that eradication of arrack culture among the untouchables in Salem district. For this purpose Rajaji made awareness among the people against arrack or alcohol.¹¹

Conclusion

Rajaji was committed to follow the Gandhian idea. In this way, he had Khadi organization and the constructive programme. He served the people of the untouchables and Most Backward Classes. Rajaji boldly supported the eradication of the untouchability. He organized Sarvodaya Society and Ashram through Gandhian ideology in Tamil Nadu. Gandhiji appreciated Rajaji by saying that, "Rajaji, My Conscience Keeper.

References :

1. P.D. Kaushik, The Congress Ideology our Programme 1920-1947, Bombay, 1964.
2. Burton Stein, A History of India, Oxford Press, p. 285.
3. Kausikan, Rajaji, Madras, 1968; N. Perumal, Rajaji, Madras, 1953; Sankar Ghose, Leaders of Modern India, Allied Publishers Pvt Ltd., New Delhi, pp. 320-321.
4. Raj Mohan Gandhi, Rajaji - A Life History (in Tamil), Vanthi Pathipagam, Chennai, pp. 40-45.
5. C.J. Baker, The politics of south India (1920-1937), vikas publishing house, New Delhi
6. N. Perumal, Rajaji, Madras, 1953.
7. Rotislavulyanosky, Three Leaders, Progress Publishers, Moscow, 1990, pp. 31-32.
8. Interview, Rajagopal, Pudupalayam, Namakkal District, Tamil Nadu, 20.2.2014.
9. P.D. Kaushik, The Congress Ideology and Programme 1920-1947, Bombay.
10. Rajmohan Gandhi, Rajaji - A Life History (in Tamil) Vanathi Pathipagam, Chennai, 2010, pp. 254-256.
11. Ibid., pp. 261-268.

Nanak's Bhakti Movement: A Vehicle of Social Transformation

Mrs. Archana Bhattacharjee*
Mr. Lakhya Pratim Nirmolia**

Abstract

The Bhakti movement was a Hindu religious movement in which the main spiritual practice was loving devotion to God or Bhakti. The devotion was directed towards a particular form of God, such as Shiva, Vishnu, Murukan or Shakti. The Bhakti movement first started in Southern India and slowly spread North, during the later half of the Indian medieval period (800-1700 A.D.).

Among the major followers of Bhakti movement in Northern India were Guru Nanak, the founder of the Sikh religion and Saint Kabir Das. They were critical of the existing social order and made a strong plea for Hindu-Muslim unity. Through Guru Nanak, the Bhakti Movement in Punjab became a vehicle of social transformation and it was the intensity and depth of his message fortified and consolidated by successor Guru's that served as an edifice on which the super structure of Sikhism was built. Guru Nanak's genius lay specifically in integrating the contemporary Bhakti Sufi tradition of spiritual quest with the socio-milieu in the totality of the medieval Indian life. Guru Nanak emancipated his follower from all religious and social shackles. He consciously projected new goals, envisaging a socio-religious order based on the concept of universal brotherhood, social justice and humanitarian cultural vision that would endanger peaceful co-existence and mutual understanding through explicit acceptance of cultural pluralism.

Keywords: Devotion, Bhakti Movement, Social Transformation, Sikhism, Nanak

*Associate Professor, Dept. of English, Kakojan College, Jorhat, Assam

**Assistant Professor, Dept. of History, Kakojan College, Jorhat, Assam

Introduction:

To understand the many fascinating aspects of Indian culture and life, one must understand the role of devotion in India. Devotion is perhaps the only thing that binds the people of India, superseding such barriers as languages, caste of birth, religious beliefs, and racial diversity.

Prior to the coming of Islam to India, Hinduism, Jainism and Buddhism were the dominant religions. Hinduism lost its simplicity too. Many philosophical schools appeared. Two different sects i.e. Vaishnavism and Saivism also appeared within Hinduism. In course of time Shakti worship also came into existence. Common people were confused on the way of worshipping God. When Islam came to India the Hindus observed many ceremonies and worshiped many Gods and Goddesses. There were all sorts of superstitious beliefs among them. Their religion had become complex by nature. Added to these, the caste system, untouchability, blind worshipping and inequality in society caused dissensions among different sections of the people. On the other hand Islam preached unity of God and brotherhood of man. It emphasized monotheism. It attacked idol worship. It preached equality of man before God. The oppressed common people and the people branded as low castes were naturally attracted towards Islam. It only increased the rivalry among religions. Fanaticism, bigotry, and religious intolerance began to raise their heads. It was to remove such evils a new religious movement collectively known as Bhakti Movement broke out in India that emphasized the devotion to God, as sole means of salvation.

The word "Bhakti" is derived from Sanskrit language, "Bhaj", means devotion, intense personal attachment to God. In Hindu philosophy and thought, Bhakti is one of the ways to reach God. According to Barth and Senart, Bhakti is not at all specifically Semitic. It is a sentiment everywhere diffused. It came naturally to India when devotion turned to a single personal God. The traditions by which it is inspired belong to Aryan as much as to Semitic thought. After all, during the time of the arrival of Islam in India, as Yusuf Husain stated, "The religious point of view of the Hindus, though always based on hold foundations, became considerably modified". The real essence of Bhakti is however found in the great epics the Ramayana and the Mahabharata. The Vedic scriptures such as the Shvetashvatara

Upanishad and the Bhagavat Gita also talk about the concept of pure devotion. But it seems that the Bhakti propounded in these texts is radically different from the later developments.

In both these texts, Bhakti is presented as a form of Yoga in which one contemplates God as part of a controlled and disciplined practice.

Yusuf Husain divided the movement of Bhakti into two periods. The first was from the time of the Bhagavat Gita to the thirteenth century, the time when Islam penetrated into the interior of India. The second period extends from the thirteenth century to the sixteenth century, an epoch of profound intellectual fermentation, there of the contact between Islam and Hinduism.

The Bhakti Movement itself is a historical spiritual phenomenon that crystallized in South India during late Antiquity. It was spearheaded by devotional mystics (later revered as Hindu Saints) who extolled devotion and love to God as the chief-means of spiritual perfection. The Bhakti movement in South India was spearheaded by the sixty three Nayanars and the twelve Alvars.

The Bhakti movement began to spread to the North during the late medieval ages when North India was under Muslim domination. There was no grouping of the mystics into Shaiva and Vaishnava devotees as it was in the South. The movement was spontaneous and the various mystics had their own version of devotional expression. Unlike in South where devotion was centered on Shiva and Vishnu (in all his forms), the Northern devotional movement was more or less centered on Rama and Krishna, both of whom were their notions of Vishnu. Though this did not mean that the sect of Shiva or of the Devi went into decline. In fact for all of its history the Bhakti movement co-existed peacefully with the other movements in Hinduism. It was initially considered unorthodox as it rebelled against caste distinctions and disregarded Brahmanic rituals which according to Bhakti saints, not necessary for salvation.

Religion is a powerful factor in our national life. We rightly value our traditions and customs because they contribute a great deal to our fundamental cultural unity and appreciation of our spiritual and moral values in life. But divisions based on religion, rituals and rigid traditions often lead to demoralization in our society. As a consequence, people become narrow minded in their outlook and allow

superstitions to cloud their judgment. Society tends to degenerate and exploitations of one group by another and conflicts and clashes arrest human progress.

The one silver lining in the cloud that tends to disrupt social harmony has been that from time to time sages and reformers have appeared on the scene influenced the minds of the people throughout the length and breadth of the country and pulled them up from the morass of outmoded customs and conventions. All our saints were religious as well as social reformers. Among those who gave hope in the midst of despair light in the midst of darkness were Gautama Buddha, Kabir and Guru Nanak who form a distinguished line of religious leaders and social reformers in India.

In the hands of Guru Nanak, the founder of the Sikh religion, the Bhakti Movement in Punjab became a vehicle of social transformation. It was the intensity and depth of his message fortified and consolidated by successor Guru's that served as an edifice on which the super structure of Sikhism was built. Guru Nanak's genius lay specifically in integrating the contemporary Bhakti Sufi tradition of spiritual quest with the socio-milieu in the totality of the medieval Indian life. The state of society at the time of Guru Nanak's advent was at its lowest ebb, caste ridden and self-destroying. People were disunited and groaning under social and political tyranny. Guru Nanak emerged to dispel the pervasive darkness and brought to the suffering humanity hope and cheer. He traveled extensively and propagated his message of oneness of God, brotherhood of humanity and of love and tolerance far and wide. He laid stress on leading an active life in the world but detached from the world like lotus in water.

Guru Nanak considered all human beings as the offspring of one God and, therefore, brothers and sisters. This was the true foundation he laid for infusing a sense of equality among the people of different parts of the country professing diverse faiths. Guru Nanak laid stress on the fundamental truth in all religions and seldom asked any one to give up his own faith. For him there was no Hindu and no Muslim- there was only human being. According to Nanak, no one is high or low. All are equal. He himself was very humble and said that 'humility is the essence of goodness'. Guru Nanak clearly condemned the caste system and untouchability. By good action alone, he said, one can claim to be of high caste and not by his or her birth. He thus

established the equality of all human being and strengthened his follower's faith in God. To abolish the caste system he named each one of his followers Singh or lion and established langars (communal eating places). These langars defied the Hindu norm that a low born person could not eat along with a high born. He was also opposed to idol worship. Nanak preached that life is real and not maya or illusion. In this concept Nanak shows a spirit of affirmation which is the essence of all his teachings. He supports the institution of marriage and family and encourages man to be positive and productive members of society. As a social reformer, Nanak upheld the cause of women, downtrodden and the poor. He stood against child marriage and widow burning, both sanctioned and enforced by Brahmanism. He maintained that women have the same right as men and should have the same opportunities in spiritual and social affairs.

Thus we can say that Nanak was, as his life and teachings show a crusader against social evils and divisive forces in the country. He consciously projected new goal, envisaging a socio-religious order based on the concept of Universal Brotherhood, Social Justice, and Humanitarian Cultural Vision that would engender peaceful co-existence and mutual understanding through explicit acceptance of cultural pluralism. In a nutshell Guru Nanak successfully spearheaded a vigorous spiritual and social Bhakti movement which improved the moral and spiritual life of the medieval society and also provided an example for the future generation to live with the spirit of toleration.

References:

1. Max Arthur Macculiffe, (1929), *The Sikh Religion-Its Gurus, sacred writing and Author* (India: Low Price Publication)
2. N. N. Bhattacharjee (1999), *Medieval Bhakti Movement in India* (Reprint: New Delhi Munshiram Manoharial)
3. Singh Khushwant (2006), *The Illustrated History of the Sikhs* (India: Oxford University Press)
4. Singh Roopinder (2004), *Guru Nanak: His Life and Teachings* (Rupa and Co.)

The Impact of Celebrity Endorsement on the Young Consumers

Dr. Ajit Kumar Shukla*

Indian advertising has experienced a spectacular and multipronged growth over the years on account of the consumer boom, coupled with the expansion of the print media and increased television coverage. In fact, media explosion has led to the advertising explosion in India. Celebrity endorsement has been established as one of the most popular tools of advertising in recent time. It has become a trend and perceived as a winning formula for product marketing and brand building. This paper will focus to identify a strong association between the product and the endorser.

Key Words: Celebrity values, Celebrity endorsement, Brand building, Commercial endorsement, Target audience

Endorsement branding strategy allows the brand the freedom to take an independent direction. Unlike the source brand strategy where the corporate name is an integral and equal part of the brand, in endorsement strategy the firm's name sits back as an assurance of quality. It rubs off the brand in a positive and generic way. The idea is not to pass on specific associations on to the brand. The brand is expected to carve out its own image. It acts more or less as an independent entity. For instance, in the case of Cadbury's and Nestle, the brands mentioned above have their own unique position and image. Celebrity endorsers are used by firms who want to support a product or service. Since presence of celebrity endorsers affects purchase decisions of consumers positively, producers and retailers have always preferred to use celebrity endorsements in order to sell their products (Stafford et al, 2003; Erdogan, 1990). Kaikati (1987) believes that using of celebrities in advertisements could have many benefits and advantages including: 1) facilitating of brand identification 2) changing or impressing the

negative attitude towards a brand 3) repositioning an existing brand 4) global marketing or positioning of a brand or product 5) affecting purchase intentions of consumers. Although using of celebrity endorsers as brand messengers is impressive, but it could have some risks. For instance, celebrities who are known to be guilty because of negative events (e.g., accident) may have harmful effects on the products that they endorse (Louie and Obermiller, 2002). Studies reveal that using of attractive celebrity causes to increase attitude towards advertisements. Such attitude towards advertisements is defined as "mental states which are used by individuals to organize the way they perceive their environment and control the way they respond to it" (Haghirian, 2004). There is a considerable correlation between desirable attitudes with regard to advertising and rating of certain advertisements by respondents as being likeable, irritating, delightful, etc. (Bauer and Greyser, 1968). Celebrity endorsers enhance awareness of a company's advertising, create positive feelings towards brands and are perceived by consumers as more amusing (Solomon, 2002). Thus using of a celebrity in advertising causes to influence brand attitude and purchase intentions of consumers in a positive way. Celebrity endorsement has a strong effect on consumers' memory and learning approach too. Most consumers are not in a purchasing situation when they are encounter with message of the brand.

Review of the Literature : Consumers want to improve their self image by opting for those brands which have relevant meanings to their self-concept. It is important, in understanding how an celebrity endorsed advertisement ultimately affects consumer buying behavior and helps in building brand in the eyes of Indian consumer. This could result in enhancing of purchase intentions and as a result enhancing of sales. Some properties such as likeability, expertise, trustworthiness and similarity cause a celebrity endorser to become a source of persuasive information and this creates a sense of certainty which has been revealed in many studies (Suranaa, 2008). Also physical attractiveness of the endorser is considerable in effectiveness of a message (Khatri, 2006). Acceptance of a message by a receiver could be influenced by celebrity endorsers as believable sources of information about a product or a firm (Amos et al, 2008).

Objectives of Study : There are following objectives of the study:

- 1) Impact of celebrity endorsed advertisement on young consumers.
- 2) Apart from celebrity endorsement what other factors affects consumer buying behavior.

* Professor, Department of Commerce, Faculty of Commerce and Management Studies, Mahatma Gandhi Kashi Vidyapith, Varanasi.

3) To study celebrity endorsement as a source of creative brands.

Research Methodology : The study area was confined to the hallowed city of Varanasi in Uttar Pradesh and the sample has been chosen therefrom. Convenience sampling has been resorted to. The focus was on the behavioral pattern and the impact of celebrity endorsements on the purchase attitude of the consumers. The questionnaires were distributed to a sample population of 100 consumers, but 7 questionnaires were rejected in due to incompleteness of data. Data collection comprises of primary data and secondary data. The primary data has been collected through questionnaires and secondary data from related journals and publications.

Theoretical Framework : Celebrity: A celebrity, also referred to as a celeb in popular culture, is a person who has a prominent profile and commands a great degree of public fascination and influence in day-to-day media.

Brand: Brand means “a name, term, sign, symbol, or design, or a combination of them, intended to identify goods or services of one seller or a group of sellers and to differentiate them from those of competitor”.

Celebrity Endorser: “Any individual who enjoys public cognition and who uses this cognition on behalf of a consumer by appearing wit in an advertisement”.

For Example:

TV Advertisement

- Idea Cellular
- Tata Sky, Samsung
- Fair & Handsome, Hyundai
- Vivel, Head and Shoulder
- Slice, Veet, Yardley
- Gujarat Tourism, ICICI pru
- Boost, MRF Tyres

Celebrity Endorser

- Abhishek Bachchan
- Amir Khan
- Shahrukh Khan
- Kareena Kapoor
- Katrina Kaif
- Amitabh Bachchan
- Sachin Tendulkar

It is interesting to see Amitabh ‘touching’ our hearts with Nerolac; making a fervent pitch for peace in the public service message released after the Gujarat riots; playing the matrix for Reid & Taylor; doting grandfather in the new Cadbury’s commercial, and so on.

As an endorser, he fulfills all the FRED objectives, namely, Familiarity (target market is aware of him, finds him friendly, likeable and trustworthy); Relevance (which says that there should be a link between the endorser and the product as well between the endorser and the audience); Esteem (the polio endorsement, for example, is

successful as the masses see him as a credible name-face-voice); Differentiation (in all his projections, he is seen to be one among the masses, and yet he towers above them, He is different).

Significance of Celebrity Endorsement

In India context, celebrities rule the mind space of customer. That’s why the marketers use celebrity endorsement as an effective tool for brand building and capturing the minds of customer.

- Instant Brand Awareness and Recall.
- Celebrity values define and refresh the brand image.
- Celebrities add new dimensions to the brand image.
- Instant credibility or aspiration PR coverage.
- Convincing customers.

There is no doubt that celebrity advertising has its benefits – the two Qs:

Quick Saliency: It gets cut through because of the star and his attention getting value. Goodlass Nerolac has ensured high saliency for its brand with the inclusion of Amitabh Bachchan in its advertising.

Quick connect: There needs to be no insight but the communication connects because the star connects. Sachin, Shahrukh and their ilk’s ensure an easy connect for Pepsi with the youth.

Preference	Male					Female				
	O	E	(O-E)	(O-E) ²	(O-E) ² /E	O	E	(O-E)	(O-E) ²	(O-E) ² /E
Agree	12	14.34	-2.34	5.49	0.38	11	8.7	2.34	5.48	0.63
Slightly Agree	21	18.71	2.29	5.24	0.28	9	11	-2.29	5.24	0.46
Not sure	11	9.98	1.02	1.04	0.10	5	6	-1.02	1.04	0.17
Slightly disagree	9	8.11	0.89	0.79	0.10	4	4.9	-0.89	0.79	0.16
Disagree	5	6.86	-1.86	3.46	0.50	6	4.1	1.86	3.46	0.84
Column Total	1.37					2.27				

Chi square statistics exceeded the critical value of 9.488. Hence null hypothesis was accepted. This result conveyed a message that the consumers are not satisfied with the products endorsed by celebrities. It also conveyed a strong message that male are more dissatisfied than female with the purchasing products and services endorsed by celebrities.

Findings

1. The result of chi square established that the celebrity endorsement is not an effective tool to affect positively the consumer’s purchase decision.

2. Celebrity endorsement creates awareness among consumers. It helps them to recall the brands.
3. The purchase attitude is influenced by the celebrity endorsement factors, price and brand recognition.
4. Bollywood stars are the rulers of the advertisement domain.
5. Television is an effective medium to convey celebrity endorsed advertisements.

Conclusion :

Celebrities have a great impact on consumers mind, sometimes we see that we don't remember the product name but remember which celebrity is promoting that product. But as people are getting literate the impact of celebrity stunt is going in vain as people try to know the pros and cons of product as well as the strategy behind the advertisement. Buying the celebrity's time is like buying a high value automobile. It is necessary to target celebrities who will appeal to the target audience.

References :

1. Kotler P. Brown J. and Makens J. (2002), "Marketing for Hospitality and Tourism", Pearson Education, Delhi.
2. Kaikati, J.G. (1987), "Celebrity Advertising : A Review and Synthesis", International Journal of Advertising, Vol. 6, page 93-105.
3. Mehta, A. (1994), "How Advertising Response Modeling (ARM) can Increase Ad Effectiveness", Journal of Advertising Research, Vol. 34, No. 3, pp. 62-74.
4. Roy, Shubhadip (2007), "Consumer's perceptual space and Indian celebrities in relation to brand attributes", Journal of Business Research, Vol. 37 No.1, pp.71-84.
5. Shimp (2007), "Celebrities as spokesperson", Journal of Retailing, Vol. 76 No. 2, pp. 175-91.
6. Solomon et al. (2002) "Celebrity endorsement in risk regime", Communication Research, Vol. 30 No. 5, pp. 483-503.
7. Shukla, Ajit K., (2013), 'Marketing Management, (2nd Edition), Varanasi, Vaibhav Laxmi Prakashan.
8. Tellis (1998) "Celebrity endorsement in highly involved regime", Journal of the Academy of Marketing science, Vol. 16 No. 4, pp. 74-94.
www.marketingmania.in
http://www.marketingpower.com
www.managementparadise.com

An Analytical Study of Emotional Intelligence of Secondary Schools Teachers in Government Aided and Private Schools in Rohtak District

Anju Rani*

Abstract : The aim of present investigation was to make an analytical study of emotional intelligence of secondary school teachers teaching in government aided and private schools.

For this purpose, a sample of 30 teachers from each type of school and total sample is 500 were selected randomly. This sample being sufficiently large and drawn in a random manner may be reasonably considered representative of the total population of the secondary school teachers teaching in government aided and private schools.

Introduction : "Fittest will survive", Charles Darwin stated these words long back but they are still relevant in every aspect of life. All the living beings have the ability to accommodate themselves differently in different kinds of situations. In other words it can be said that the capability of adjustment is in borne characteristics of all living beings.

There Are A Few Dimensions That Influence Emotional Intelligence: 1. Self Awareness, 2. Empathy, 3. Self Motivation, 4. Emotional Stability, 5. Managing Relations, 6. Integrity, 7. Self Development, 8. Value Orientation, 9. Commitment, 10. Altruistic Behaviour

objectives & hypothesis: To analyze emotional intelligence of senior secondary school teachers teaching in government aided and private schools in terms of self- awareness, empathy, administration, integrity and other correlated factors. There is no significant deviation between senior secondary teachers in government aided and private school

*Research Scholar, Deptt. of Education, Mewar University, Chittorgarh, Rajasthan

teachers in terms of self awareness, empathy, administration, integrity and other correlated factors.

Method: Survey method is used in the present study.

Population & Sample: The population has been defined as the teachers teaching in secondary schools of government aided and private schools in Rohtak district.

A random sample of 500 teachers of both types is drawn as a fair and reasonable representative of the total population of senior secondary teachers teaching in secondary schools of government aided and private schools.

Tools To Be Used: Following tools are used to collect data for the present study:-

Emotional Intelligence Scale (Eis)

Developed by: Mr. Aniket Hyde (Indore)

Mr. Sanjyot Pethe (Ahemdabad)

Mr. Upinder Dhar (Indore)

This scale contains 34 items and 10 dimensions.

Statistical Techniques Used In The Study : In the present investigation following statistical test that allows the investigator to analyze two means to determine the probability that the difference between the means is the real difference rather than a chance difference. It involves the computation of the ratio between observed variance and error variance.

$$t = \frac{M_1 - M_2}{\sqrt{\frac{\sigma_1^2}{N_1} + \frac{\sigma_2^2}{N_2}}}$$

It is computed by the formula:

Where,

M_1 = mean of the first group

M_2 = mean of the second group

σ_1 = standard deviation of the first group

σ_2 = standard deviation of the second group

N_1 = no. of cases in the first group

N_2 = no. of cases in the second group

Analysis and Interpretation of Data

S.No.	Name of Group	N	Mean	S.d	T	Level of Sign.
1	Secondary Teachers of Govt Schools	500	7.1	2.85	2.78	0.01
2	Secondary Teachers of Private Schools	500	9.3	3.25		

The table displays analyzed data regarding analysis of self awareness dimension of emotional intelligence of secondary schools teachers working in government aided and private schools. Obtained 't' value is 2.78, which is greater than the 't' value at 0.01 level of significance. It means that the two groups of the secondary school teachers differ significantly in terms of self -awareness dimension of their emotional intelligence.

Since 't' value is significant at 0.01 level of significance and mean score of the teachers working in govt. aided is more than the mean score of their counterparts teachers working in private schools. It can also be said that if 100 samples are taken from the same population in 99 cases the results will be similar to the present one.

Delimitations:

The topic of the study covers a vast area. Thus it is very difficult to cover all aspects of it in a single study. Therefore the investigator limited his study from the point of feasibility as follows:

1. The study has been confined to the sample of Rohtak district.
2. The study has been delimited to teachers both male and female working at the secondary school in the rural and urban areas of Rohtak district.
3. The simple random sampling technique has been selected to choose the sample for the present study.
4. The study is delimited to the normative survey method research and too few statistical techniques or as 't' test to analysis and interpret the obtained data.

Findings of the Study:

Secondary school teachers of private schools are more emotionally intelligent in terms of self awareness aspect and integrity aspect of their E.I. than the government school teachers.

Secondary school teachers of government teachers are equally emotionally intelligent in terms of empathy, administration and other correlated factors than the private school teachers.

CONCLUSION:

Although the difference is not much wide, but it can be concluded that secondary school teachers in government aided schools are more emotionally intelligent in terms of empathy, administration whereas private school teachers lead the way in terms of self – awareness.

References:

1. Corroll. J.B., 1993; Objective determinants of perceived socila support, Journal of personality and social psychology, 50, 349-355, Darwin, C. 1965. The expression of the emotions in man and animals.
2. Dawda, D. and Hart, S.D., 2000; Assessing emotional intelligence : Reliability of the Bar - on Emotional Quotient Inventory, Journal of personality and individual differences, 28, 797-812.
3. Depape, Anne-Marie R. Hakim-Larson, J. Voelker, S. page, S.et al., 2006, Self-talk and emotinal intelligence in university students. Canadian Journal of Behavioural Science. 38, 3, 250-260 (Psy.abs. 2004, 93, 12, 4330)
4. Eisenberg et-al, 1997, The relations of regulation and emotional intelligence, burn out and engagement among staff in services for people with intellectual disabilities, Psychological Report, 95, 2, 386-290.

Financial Inclusion- Issues & Perspectives

Dr. Rajat Kumar Sant*

Abstract :

Financial inclusion is the availability of banking services at an affordable cost to disadvantaged and low-income groups. In India the basic concept of financial inclusion is having a saving or current account with any bank. In reality it includes loans, insurance services and much more.

Introduction :

Financial inclusion is the availability of banking services at an affordable cost to disadvantaged and low-income groups. In India, the basic concept of financial inclusion is having a saving or current account with any bank. In reality it includes loans, insurance services and much more.

In India, Govt. of India and RBI have taken various steps over the years commencing from nationalization of banks in 1969/1980, SHG-Bank lineage programme to recent measures like 'No-Frills accounts' and their linking to Govt. Payments schemes like MGNREGA ,branchless banking through BC/ BF model and introduction of ICT solutions to achieve greater financial inclusion. Mr Pranab Mukherjee, Minister of Finance, Government of India, said at the Financial Inclusion Summit (2010) that although the banking network has rapidly expanded over the years, the key challenge would be to extend the banking coverage to include the large population living in 6 lakh villages in the country.

Financial Inclusion : Concept and Definitions

Financial inclusion is generally defined in terms of exclusion from the financial system. Early discussion on financial exclusion was preceded by social exclusion and focussed predominantly on the issue of geographical access to financial services, in particular

* Associate Professor, Deptt. Of Commerce, Maharaja Agrasen College, University of Delhi, Delhi

banking outlets (Leyshon and Thrift, 1993). In 1995, Leyshon and Thrift in their paper defined financial exclusion as "those processes that prevent poor and disadvantaged social groups from gaining access to the financial system. It has important implications for uneven development because it amplifies geographical differences in levels of income and economic development."

Causes of Financial Exclusion

There are people who desire the use of financial services, but are denied access to the same. The main reason for financial exclusion is the lack of a regular or substantial income. In most of the cases people with low income do not qualify for a loan. The proximity of the financial service is another fact. The loss is not only the transportation cost but also the loss of daily wages for a low income individual. Getting money for their financial requirements from a local money lender is easier than getting a loan from the bank. Most of the banks need collateral for their loans. It is very difficult for a low income individual to find collateral for a bank loan. Moreover, banks give more importance to meeting their financial targets. So they focus on larger accounts. It is not profitable for banks to provide small loans and make a profit.

Policy Initiatives for Financial Inclusion in India

The process of financial inclusion in India can broadly be classified into three phases. During the First Phase (1960-1990), the focus was on channeling of credit to the neglected sectors of the economy. Special emphasis was also laid on weaker sections of the society. Second Phase (1990-2005) focused mainly on strengthening the financial institutions as part of financial sector reforms. Financial inclusion in this phase was encouraged mainly by the introduction of Self- Help Group (SHG)-bank linkage programme in the early 1990s and Kisan Credit Cards (KCCs) for providing credit to farmers. The SHG-bank linkage programme was launched by National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD) in 1992, with policy support from the Reserve Bank, to facilitate collective decision making by the poor and provide 'door step' banking. During the Third Phase (2005 onwards), the 'financial inclusion' was explicitly made as a policy objective and thrust was on providing safe facility of savings deposits through 'no frills' accounts

Recent RBI's Initiatives to achieve Financial Inclusion- 2005 onwards

- i) No Frills Accounts: In November 2005, RBI asked banks to offer a basic banking 'no-frills' account with low or zero minimum balances and minimum charges to expand the outreach of such accounts to the low income groups.
- ii) Easier Credit facility: Banks were asked to introduce a General Purpose Credit Card (GCC) facility up to Rs. 25,000. However, total number of GCCs issued by banks as at end-March, 2009 was only 0.15 million.
- iii) Simpler KYC Norms: In order to ensure that people belonging to the low income groups, both in urban and rural areas, do not encounter difficulties in opening bank accounts, the 'Know Your Customer' (KYC) procedure for opening accounts was simplified for those accounts with balances not exceeding Rs 50,000 and credits thereto not exceeding Rs.100,000 in a year.
- iv) Use of Information Technology: Banks have been urged to scale up IT initiatives for financial inclusion speedily while ensuring that solutions are highly secure, amenable to audit, and follow widely-accepted open standards to ensure eventual inter-operability among the different systems. Two of the important initiatives are:
 - v) EBT through Banks: The Reserve Bank is in consultation with state governments to encourage them to adopt Electronic Benefit Transfer (EBT) by banks.
 - vi) 100% Financial Inclusion Drive: The Reserve Bank launched a financial inclusion drive targeting one district in each state for 100% financial inclusion. In the light of the experience gained, coverage has been extended to other areas/districts. RBI carried out an external evaluation of the quality of 100% financial inclusion reported by banks. On that basis, in January 2009-10.
 - vii) Business Correspondent Model: Possibly the most important initiative of the Reserve Bank has been the Business Correspondent (BC) model. The BC model ensures a closer relationship between poor people and the organized financial system.

Current Indian Scenario: Progress made so far towards financial inclusion

A Synoptic View of Financial Inclusion in India is as under:

Number of No-Frill Accounts - 3,30,24,761 at end-March 2009:

1. Number of rural bank branches - 31, 727 constituting 39.7% of total bank branches (as on June, 31, 2009)
2. Number of ATMs - 44,857 (as on May 31, 2009)
3. Number of POS - 4,70,237 (as on May 31, 2009)
4. Number of Cards - 167.09 million (as on May 31, 2009)
5. Number of Kisan Credit Cards - 76 million (Source: CMIE publication 2007-08)
6. Number of Mobile phones - 403 million (as on Apr.30, 2009)

Issues: Challenges and Opportunities. Challenges ahead Firstly, from the point of view of banking sector, the bottlenecks and difficulties in achieving complete financial inclusion in our country are fairly well known.

The second issue or challenge regarding financial inclusion is that of allowing non-banking financial companies especially micro-finance companies to act as business correspondents of banks for branchless banking. The argument put forward is that this would enable their clients to access insured deposits, national payments system and remittance services. There have also been demands that large 'for profit' companies having a wide network of outlets especially in rural areas could be allowed to act as business correspondents of banks as there could be significant synergies if such networks are leveraged upon. This issue is currently under examination and in doing so the possible risks such as conflicts of interest, co-mingling of funds, misrepresentation and other agency related risks would need to be weighed against possible safeguards for consumer protection.

Conclusion

The financial system in India has grown rapidly in the last three decades and more. The functional and geographical coverage of the system is truly impressive. Nevertheless, there is exclusion and poorer sections of the society have not been able to access adequately financial services from the organized financial system.

There is an imperative need to modify the credit and financial services delivery system to achieve greater inclusion. However, creating an appropriate credit delivery system is only a necessary condition. This needs to be supplemented by efforts to improve the

productivity of small and marginal farmers and other entrepreneurs so that the credit made available can be productively employed. While banks and other financial institutions can also take some efforts on their own to improve the absorptive capacity of the clients, it is equally important for Government at various levels to initiate actions to enhance the earnings capacity of the poorer sections of the society. The two together can bring about the desired change of greater inclusion quickly.

However, for achieving the goal of financial inclusion, it must be realized that the initiatives of the banking sector need to be complemented by the central government, state governments, agencies associated with the implementation of various developmental programmes, the technology providers, policy-makers and NGOs and civil society.

References:

1. Reserve Bank of India (2008), Report on Currency and Finance 2006-08. Government of India (2008), The Committee on Financial Inclusion (Chairman: C. Rangarajan)
2. Mohan, R. (2006): "Economic Growth, Financial Deepening and Financial Inclusion Address at the Annual Bankers' Conference 2006, at Hyderabad on Nov 3, 2006.
3. Thorat, U. (2008): Inclusive Growth - the Role of Banks in Emerging Economies, lecture delivered at 'Independence Commemoration Lecture, 2008' at the Central Bank of Sri Lanka, Colombo, 28 February.
4. Thorat, U. (2008): Financial Inclusion and Information Technology, Delivered at WIPRO-NDTV Convergence Conference on 'Vision 2020 - Indian Financial Services Sector'.
5. Chakrabarty, Dr K. C. (2009): "Banking: Key Driver for Inclusive Growth", Address delivered at the Mint's 'Clarity Through Debate' series in August 2009 at Chennai
6. Address delivered by Dr. K. C. Chakrabarty, Deputy Governor, Reserve Bank of India at the National Finance Conclave 2010 organised by KIIT University on November 27, 2010 at Bhubaneswar
7. Leyshon, A. and N. Thrift. 1993. "The Restructuring of the UK Financial Services Industry in the 1990s: A Reversal of Fortune?" *Journal of Rural Studies*, 9: 223-41.
-1995. "Geographies of Financial Exclusion: Financial Abandonment in Britain and the United States." *Transactions of the Institute of British Geographers*, New Series, 20: 312-41

Protection of Geographical Indication as Intellectual Property

Ms. Seema Ahlawat*

Introduction

Indications of geographical origin used as an instrument for securing the link between quality and other aspects of a good and its region of geographical origin. The connection between good and region especially when former is distinct with respect to similar goods, allow producers of such goods to adopt strategies of niche marketing and product differentiation. Marks indicating the geographical origin of goods are the earliest types of trade mark and were established to differentiate goods that possessed some unique quality either because of environmental factors, processing methods or manufacturing skills. Property rights are often sought for such goods based on the fact that they are produced in a geographical region which has unique geo-climatic characteristics and uses traditional skills. These render a unique value to the product and make replication of these goods elsewhere impossible.

Research Methodology and Source of study

The present research project is essentially doctrinal analysis based on survey of the primary and secondary sources of information which have been studied and examined in a holistic manner. Primary data includes acts, documents, international conventions, judgement reports, working papers. Secondary data includes books, articles, journals, newspapers and the other official data mainly available from libraries and the internet.

Object and Scope of the study

The purpose of research work is to analyze the laws relating to protection of geographic indications of goods. Object of this research work is also to figure out those spheres under IPR which

are capable of providing protection to geographical indications of goods. Another object of this research work is to make out and analyze the statutory provisions provided at national and international level. The scope of protection for geographical indications is largely based on the principles that postulate for protection against the use of indications in manner that might either mislead the public or be construed as deceptive and protection against the use of indications in a manner that are acts of unfair competition.

Research Hypothesis

The aim of the present research work is to explore and analyze the areas where protection to geographical indications can be provided. It also examines those areas under IPR which can provide remedies against infringement of geographical indications. The issues include:

1. Is it correct for the traders to use the geographical indications as a trademark?
2. Whether there is need of new laws on geographical indication?
3. How the intellectual property rights regime is providing protection to unregistered geographical indication?

Definition of Geographical Indication

Geographical indications have been defined to mean “indications which identify a good as originating in the territory of a member, or a region or locality in that territory, where a given quality, reputation or other characteristic of the good is essentially attributable to its geographical origin.”¹

Indication may be a name, mark or any other representation used for the purpose of representing the goods originating from a specific locality to which the quality and reputation of the good can be attributed. Geographical indications entered into international intellectual property law field with its inclusion in the TRIPS agreement. The TRIPS agreement is based largely on two prior international conventions² viz. The Paris Convention for the protection of industrial property (Paris Convention), The Berne the protection of Literary and Artistic works (Berne Convention). There are two notions involved in recognizing geographical indications:

Need for Legal Protection of Geographical Indications

Given the enormous commercial implications of geographical indications, the legal protection of this IPR evidently plays a

* Assistant Professor, Pt. N.R.S. College, Rohtak, Hariyana

significant role in commercial relations both at the national as well as at the international level. Without such protection geographical indications run the risk of being wrongfully used by unscrupulous businessmen and companies. Because they can misappropriate the benefits emanating from the goodwill and reputation associated with such geographical indications, by way of misleading the consumers. Such unfair business practices not only result in huge loss of revenue for the genuine right holders of the geographical indications concerned but can also hamper the goodwill and reputation associated with those indications over the longer run³.

Legal System of Geographical Indication Protection in India

The member-countries of World Trade Organization (WTO), in accordance with the agreement of TRIPS, are bound to extend protection to the geographical Indication. As a member of WTO, India has enacted The Geographical Indications of Goods (Registration and Protection) Act, 1999 to provide for the registration and protection of geographical indications relating to goods.

The new Indian Geographical Indications Act has an elaborate procedure for registering Geographical Indications at an office located in the southern city of Chennai. The registration of a geographical indication is for a period of ten years. Renewal is possible for further periods of ten years. If a registered geographical indications is not renewed, it is liable to be removed from the register.⁴

Protection at international level

The protection of Geographical Indications (henceforth Geographical Indications) has, over the years, emerged as one of the most contentious intellectual property right (IPR) issues in the realm of the World Trade Organisation (WTO). Notably, the Agreement on Trade Related Aspects of Intellectual Property Rights (TRIPS)- an integral part of the WTO Agreement, which was concluded among 117 countries of the world in April 1994, at Marrakesh-specifies norms and standards for the protection of Geographical Indications, along with six other categories of IPRs.

Protection against the false and misleading use of geographical indications is provided under the TRIPS agreement.⁵ A higher level of protection for wines and spirits⁶ incorporating this doctrine exists under the agreement where there is no need to establish the public is misled otherwise, the indication cannot be used if the

goods do not originate in the indicated geographical area. The Lisbon Agreement⁷ makes strong implementation of this doctrine in, i.e. “protection shall be ensured against the usurpation or imitation even if the true origin of the product is indicated or if the appellation is used in translated form or accompanied by terms such as ‘kind’, ‘type’, ‘make’, ‘imitation’, or the like. Given the recent trends in the world market, where consumers, especially those in the developed world, are increasingly becoming finicky about the quality and authenticity of the products that they are buying and are gradually developing preferences for environmentally sound and/or socially responsible products, Geographical Indications are increasingly gaining in importance as weapons for such niche marketing. Because, the information conveyed by Geographical Indications makes it possible to meet the new consumer criteria by identifying products with added value and specific qualities due to their origin.⁸

Leaving aside such economic and commercial benefits, Geographical Indications also serve to convey the cultural identity of a nation, region or locality, and add a human dimension to goods, which are increasingly subject to standardized production for mass consumption. Often Geographical Indications are also associated with other social benefits, such as, the protection of traditional knowledge and community rights.⁹

Protecting Geographical Indications can be daunting

The implications of different protection approaches in terms of requirements, effectiveness and costs are not clear-cut. The lack of a single or coherent international approach, or even a common registry of Geographical Indications, makes it difficult to secure protection in different overseas markets.

This is exacerbated by often fragmented, overlapping, and unclear national protection system. The 167 countries that actively protect Geographical Indications as a form of intellectual property fall into two main groups: 111 nations with specific or *sui generis* systems of geographical indications laws and 56 that prefer to use their trademark systems.¹⁰

CONCLUSION

Protection of geographical indications can be a large and sometimes difficult undertaking. The first step is at the domestic level and while many countries now have functioning systems to handle

Geographical Indications they are not always easy to navigate. The efforts embodied in several international accords and the TRIPS Agreement offer only a loose framework for protection. In the absence of internationally accepted procedures or systems, a prospective geographical indications must consider the type of protection to undertake in each country where it may be necessary. The learning process can be considerable. It requires careful balance of costs, effectiveness, and structures that will offer the most value to as many stakeholders as possible. Some of the potentially negative aspects associated with Geographical Indications are not necessarily intrinsic to them. Instead, geographical indications failures seem to be largely the result of unrealistic expectations, poor planning, and inadequate governance structures.

References :

- 1 Sec. 2(1)(e) of Geographical Indications of Goods Act, 1999
- 2 WTO document on intellectual property as on 25th Jan. 2006 (www.wto.org) visited on 4, Dec. 2012
- 3 Downes, David R. and Sarah A. Laird (1999), Innovative Mechanisms for Sharing Benefits of Biodiversity and Related Knowledge: Case Studies on Geographical Indications and Trademarks, paper prepared for the UNCTAD Biotrade Initiative, p.6.
- 4 <http://www.indiatogether.org/2004/apr/eco-tradeGIs.htm>. visited 11 Dec. 2012
- 5 Art. 22(2)(A) & Art. 22(4) of TRIPS agreement
- 6 Art. 23(1) of TRIPS agreement
- 7 Art. 3 of Lisbon agreement
- 8 Addor, Felix and Alexandra Grazioli (2002), 'Geographical Indications beyond Wines and Spirits: A Roadmap for a Better Protection for Geographical Indications in the WTO TRIPS Agreement', in 'The Journal of World Intellectual Property', Vol. 5, No. 6, November, p. 874
- 9 <http://www.eldis.org/cf/search/disp/docdisplay.cfm?doc=DOC18596&resource=f1>. Visited on 20 Dec. 2012
- 10 WTO (2004), World Trade Report: Exploring the linkage between the domestic policy environment and international trade, p. 72-73

Global Financial Crisis and India : An Overview

Dr. Shephalika Rai*

Introduction : Globalisation is the new buzzword that has come to dominate the world since the nineties of the last century with the end of cold war and the break up of former soviet unions and the global trend towards rolling ball. The frontiers of the state with the increased reliance on market economy and the renewed faith in private capital and resources, a process of structural adjustment spurred by the studies and the influences of the World Bank and other international organisations have started in many of developing countries.

India is a rising economic power that is contributing to world growth in new and powerful ways. The international architecture needs to accommodate India and other powers whose growth rate far exceeds those of developed countries. Our country is already on indispensable part of global conversation. Its increasing globalisation will be driven by the country becoming a source for some of these specialised products. It still faces enormous challenges as a developing country. Yet, if it can remove them, then India is well positioned to become one of the new poles of global growth.

India will need innovative financing to move on its massive infrastructure agenda. According to world bank president, Robert Zoë lick (2009) if the world bank group help to attract global partnership for knowledge and funding, access to finance is another area where changes will mean a difference to lives of a millions of citizens, a difference being a share upon opportunity of India's growth. There are also huge technology advances that India can put to work efficiently to make service delivery easier and public financial flow more visible.

A sustainable globalisation means an India that shares some of its remarkable achievements more widely. In view of India being a global citizenship, it has much to offer the world lessons from its model of economic development, cooperation between private and

* Lecturer Dept. of Economics, Govt. P G College Chunar , Mirzapur, U.P.

public sectors to generate microeconomic efficiency and macroeconomic stability, working on global financial regulation part of G-20 task forces and considering ways forward on migration and cross border labour mobility.

The Global Crisis

As par D. Subba Rao ,Governor RBI in his paper ,we are going through what is by all accosts the deepest economic crisis of our time which is comparable to the great depression of 1930's both were global in scope, both were centred in United States and importantly both were preceded by mounting global imbalances, loose monetary policy and high level of leverage.

Still, these are important differences between the great recession of today and great depression and the entire crisis in between. All the crisis which a number of regions of the world and individual countries had gone through crisis were essentially traditional retail banking and currency crisis in Contrast the current crisis hit all the very heart of global finance with no buffer to fall back on.

Every country in every part of world has been affected by the crisis, although through different channel and different degrees. In India, though our financial sector remain healthy , we were hit by sudden capital flow reversals as a part of the global de leveraging process and liquidity hiccups transmitted mainly through confidence channel.

If we probe deeper of the present crisis, we will learn that at heart of crisis were two roots causes the build up global imbalances and developments in financial market s over last two decades which are interconnected and that financial market developments were in a sense driven by the global imbalances.

Global macro imbalances get build up because of large saving and current account surpluses ion in China and much of Asia in wake of East Asian crisis a decade ago. These were mirrored by large increases in leveraged. Consumption and current account deficits in the U S in short Asia produced and America consumed. While there may be different views as to which caused the bottom line is that one was simply the mirror of the other and the two share a symbiotic relationship.

An Asia accumulated saving simultaneously maintained competitive exchange rates, the saving turned into central bank reserves. Central banks in turn invested these savings not in any large diversified portfolio but in government bonds of the advanced economies. This in turn drone down risk free real interest rates to

his tragically low level triggering phenomenal credit expansion and drooping of guard on credit standards ,erosion of credit quality and search of yield., all by which combined to brew the crisis of its explosive dimension.

Where did India stand in all these? India did not contribute to global imbalances. Indeed we ran current account deficits for the last two decades except for a brief period during 2001-04.In other words we imported savings, did not export them while the crisis transmitted to India through both trade and finance channels.

Consequences

The implications of globalisation for a national economy are many. Globalisation has intensified interdependence and competition between economics in the world market. This is reflected in independence in regard to trading in goods and services and in movement of capital. As a result domestic economic developments are not determined entirely by domestic policies and market conditions. Rather they are influenced by both domestic and international policies and economic conditions .It is thus clear that a globalising economy, while formulating and evaluating its domestic policy cannot offered to ignore the policies and developments in the rest of the world .This constrained the policy option available to government which implies loss of policy autonomy to some extent, indecision marketing at the national level.

As per current India's status as the rising economic power is closely connected with how it can create opportunity and inclusion. The World Bank can support India through assistance with urban development, transport power in infrastructure, secondary education and agricultural and rural development. There is a hope that working together India and World Bank group can become even stronger as India rises both at home and abroad.

References :

1. Hindustan times –October 2009.
2. "Impact of globalisation on developing countries and India" by Chandrashekharan Balakrishnan.
3. www.about.com/economics.
4. Indian Streams Research Journal.
5. www.nsindia.com.

Role of Intellectual Property Rights in Economic Development

Ms. Jyoti Rani*

Introduction : Intellectual property plays a very crucial role in the development of industry, commerce and trade and in the growth of creative efforts in almost every field of human endeavour. Intellectual property rights, as the term suggests, are meant to be rights to ideas and information, which are used in new inventions or processes. Intellectual Property is in the nature of intangible incorporate Property. It consists of a bundle of Rights in Relation to certain Material object create by the owner. These rights enable the holder to exclude imitators from marketing such inventions or processes for a specified time; in exchange, the holder is required to disclose the formula or idea behind the product/process. The effect of intellectual property rights is therefore monopoly over commercial exploitation of the idea/information, for a limited period. The stated purpose of intellectual property rights is to stimulate innovation, by offering higher monetary returns than the market otherwise might provide.

Meaning of intellectual property : Human being are superior from other living creatures because they possess intellect. Creative genius of human being creates intellectual property; which in turn ,when properly exploited , can earn wealth. Since it is essentially creation of mind, therefore, it is called intellectual property: inventions, industrial designs literary and artistic works, symbols used to promote commerce are some commonly known forms of intellectual property.¹

Object of studies : The purpose of Research work is to analyze the impact of intellectual property rights in trade or commerce. This research Work also shows the need for legal protection of intellectual property rights. This works also reflects light on various International agreement made for the expansion & protection of intellectual property rights.

* Assistant Professor, CR Institute of Law, Rohtak, Haryana

Research methodology and Scope of study : The present research study is essentially doctrinal analysis based on survey of the primary and secondary sources of information which have been studied and examined in a holistic manner. Primary data includes acts, documents, international conventions, judgement reports, working papers. Secondary data includes books, articles, journals, newspapers and the other official data mainly available from libraries and the internet. The scope of this work is limited to various component of intellectual property. It also deals with the roles of intellectual property in the economic development of the Country.

Research hypothesis : The aim of this work is to explore the various types of intellectual property. It examines the role of intellectual property rights in protection of intellectual creation of human mind. The issue includes:

1. What is intellectual property?
2. What are various components of intellectual property?
3. Why there is need for legal protection of intellectual property?
4. Explain the scope of intellectual property rights?

Need for legal protection of intellectual property : Every human endeavour which promote economic, social, scientific and cultural development of society must be encouraged and the creator must be suitably rewarded by affording legal protection to his intellectual creation. Thus the intellectual property rights are the legal rights governing the use of creations of human minds.² The intellectual property law regulates the creation, use and exploitation of mental or creative labour. It prevents third parties from becoming unjustly enriched by reaping what they have not sown. This is a branch of the law which protects some of the finer manifestations of human achievement.³

Basic concepts of intellectual property rights : The law relating to intellectual property is based on certain basic concepts. Patent law centers round the concept of novelty & Inventive step. Design law is based on novelty or originality of the design not previously published in India or any other country. The substantive law of trade mark is based on the Concept of distinctiveness & similarity of marks &

similarity of goods. Copyright is based on the concept of originality & reproduction of the work in any material form.⁴

Component of intellectual property : The various components of intellectual property rights are: 1. Patent, 2. Trade marks, 3. Copyrights, 4. Geographical Indications, 5. Industrial Designs

Patent : A Patent is a exclusive right granted to a person who has invented a new & useful article or a new process of making an article.⁵

Patent is granted for inventions which have Industrial & commercial value. Any person whose invention has novelty involving, inventive steps and is of industrial application, can be granted a monopoly right for a certain term to commercially exploit his invention & earn profit out of his invention.⁶

A Patent is not granted for an idea or principle but for some article or the process of making some article applying the idea.

Trade marks⁷ : Trade Marks is a symbol through which goods are sold in the market. It is a symbol which may denote & distinguish goods of competing traders they may consists of single letter, numerals, logo, design, work pictorial devices or combination of wards and devices. When a trade marks is used in connection with services such as banking, telecommunication, airlines, tourism etc. they are called service marks.

Copyrights : Copyright means the exclusive right to do or authorize others to do certain acts in relation to:⁸

1. Literary, dramatic, musical & artistic work.
2. Cinematograph films
3. Sound recording

Copyright is the right to copy or reproduce the work in which copyrights subsists. The objects of copyright law is to encourage authors, composers, artist and designers to create original works by rewarding them with the exclusive rights for a limited period to exploit the work for monetary gain.

Geographical indications : An indication which identifies goods, such as agricultural goods, natural goods or manufactured goods as originating in the territory of a country, or a region or a locality in that territory are called as geographical indications.⁹

These indications denote quality, reputation or other characteristics of such goods essentially attributable to its geographical origin. The right conferred on geographical indication

confers the right to prevent competition from commercially exploiting the respective rights to the detriment of the owner of that property.¹⁰

Industrial designs : Design means only the feature of shape configuration, pattern, ornament composition of lines and colours applied to any article whether in two dimensional or in three dimensional or in both forms by any industrial process or means whether manual, mechanical or chemical, separate or combined which in the finished article appeal to and are judged solely by the eye, but does not include any mode or principle of construction & does not include any trade mark.¹¹

Intellectual Property Rights and Competition : Intellectual Property Rights affects competition in various ways. The grants of an intellectual property rights title confers market power on the rights holder as competitors are not allowed to copy the protected technology or product. In most cases, however, Intellectual Property Rights ownership does not lead to a perfect monopoly in the underlying market. Typically, with a patented product e.g. it competes with other products or technologies which themselves may or may not be covered by patent rights. If the patent holder raises prices by too much, may decide to switch to substitutes products that may not offer the exact same features as the patented good, but may nonetheless satisfy their needs. Firms in markets that are covered by Intellectual Property Rights engage in what economists call monopolistic competition. One factor determining prices in a monopolistically competitive market is how far one product can be substituted by another product.

In time Intellectual Property Rights can promote a dynamic process of competition. A patent e.g. gives a firm the ability to gain market share, but once this firm has established itself as market leader, competing firms try to invent better technologies, obtain patents themselves, and squeeze the market leader's position. Consumers may temporarily pay higher prices for patented products, but may also benefit in the long run if dynamic competition leads to a continuous stream of innovations and significant price falls in the older products. For this to happen, however, government must prevents potential anti competitive practices of firms owing Intellectual Property Rights.

Role of TRIPs agreement in intellectual property¹² : The TRIPs Agreement for the first time creates a multilateral framework for

the enforcement of all Intellectual Property rights which were so far left to the nation states to carry out at their discretion under national laws.

It is a mandatory agreement attached to WTO (World Trade Organization). Every member of WTO is required to observe the Provision of TRIPS & Provide minimum level of Intellectual Property Rights in their national Laws. Failure to comply with the minimum prescribed requirement will entail Penal Provision of World Trade Organization.

Conclusion: Intellectual property play a key role in the development of Industry, commerce & trade & in the growth of creative efforts in almost every field of human Endeavour. Intellectual Property Rights enable the holder to exclude imitators from marketing such invention or Processes for a specified time, in exchange the holder is required to disclose the formula or idea behind the Product Process which in turn encourages the growth of technology.

References :

1. M.K. Bhandari, "Law relating to Intellectual Property Rights", 2010, p.1-2.
2. Ibid p.2.
3. W.R. Cornish, "Intellectual Property", 3rd ed., 2001; p. 3.
4. P. Narayanan, "Intellectual Property Law", 2007, p. 11.
5. Ibid
6. Supra note 1, p. 4.
7. Supra note 1, p. 3.
8. Supra note 4, p. 251.
9. Supra note 1.
10. S.R., Mynani, "Law of Intellectual Property", 2003, p. 5.
11. Supra note 4, p. 124.
12. Supra note 1, p. 14-15.

Microfinance as a tool for Poverty Alleviation Case Study of Balera Village, Mirzapur

Dr. Rajay Kumar Singh*

Microfinance is basically source of financial assistance for small entrepreneurs and small businesses lacking access to banking and related facilities. The two main tools used for this purpose are:

1. Customer relationship-based banking for individual small entrepreneurs and small businesses.
2. Group-based models e.g. Self Help Group.

Many of microfinance institution are setup to help poor people out of poverty.

Microfinance is a way to promote economic development of the region or whole country through employment and growth through the support of micro-entrepreneurs and small businesses.

Microfinance is a broad category of services and the service which this paper is focusing on is microcredit, which is credit services to poor customers. It brings financial inclusion into its fold.

Purpose : Banks and other loaning agencies do not provided any type of financial services, such as loans, to customers with little or no cash income. This is especially true in India. This is due to fact that most poor people have few assets that can be deposited by a bank as collateral. This means that the bank will have no recourse against defaulting borrowers, if it gives the loan. Further, the high interest rate also repels the poor customers.

Because of these difficulties, poor customers rely on relatives or a local moneylender, whose interest rates, again, can be very high

*Assistant Professor, Faculty of Commerce, Rajiv Gandhi South Campus, Banaras Hindu University, Varanasi, U.P.

Due to this, microfinance has been growing rapidly in developing countries. This is required by customers due to many reasons, some of them are:

- Personal Emergencies: such as sickness, injury, unemployment, theft, harassment, death etc.
- Disasters: such as fires, floods, cyclones and man-made events like war or bulldozing of dwellings, volcano etc.
- Investment Opportunities: expanding a business, buying land or equipment, improving housing, securing a job etc.

Often, people don't have enough money when they face a need, so they borrow. One convenient way will be taking loan from a microfinance institution. Since these loans must be repaid by saving after the cost is incurred.

In other form, microfinance in a group is process of formulating groups within a community to assist poverty stricken people by lending them money without the need of credit or collateral. A common example is Self Help Group, group formed inside the community to help each other.

Microfinance debates and challenges

There are several debates and challenges to existence of microfinance institutions. They are as follows.

1. One of the challenges of microfinance is providing small loans at an affordable cost that is beneficial both to customers and the organization.
2. Some argue that microfinance loans should be used for productive purposes, such as to start or expand a microenterprise.
3. Gender based challenges is another thing. Microfinance challenge argue that women should be the primary focus of service delivery, since they repay the loans more than their male counterparts, and they use loan for the purpose for which it was taken.

Benefits and Limitations

The benefits of microfinance are that it helps the poor and generates income for them. Through microfinance institutions, poor customers can obtain small loans which ensures some income and savings.

The limitations of microfinance are that, through this savings, customers are losing money by having to pay a fee. The customer can also pay back their loans whenever they chose therefore encouraging a borrower to have various outstanding loans. The lender is also vulnerable in that there is no guarantee of the loan being repaid in the given time period, and the consequences to defaulting are not yet defined.

Still Microfinance?

Micro-finance can be an alternative program to address poverty reduction; the tools needed to raise an individual out of poverty are given to them directly, without use of any agent. In a micro-finance, main tool include money primarily, and may also be accompanied with a savings account along with financial help.

Microfinance is considered a tool for socio-economic development, and can be clearly distinguished from charity. Families who are destitute and poor are best served by financial institutions.

Micro Finance in India : The Self Help Group are formed and nurtured by Non Governmental Organization and only after accomplishing a certain level of maturity, they are entitled to seek credit from the microfinance organizations.

The main features of micro financing:

- 1) Loan are given without security in micro finance.
- 2) Loans to those people who live Below Poverty Line.
- 3) Members of Self Help Group enjoy Micro Finance
- 5) The terms and conditions given to poor people are decided by Non Governmental Organization.
- 6) Micro Finance is broader in scope than Micro Credit. Under Micro Credit, small amount of loans given to the borrower but under Micro Finance besides loans many other financial services are provided such as Savings A/c, Insurance etc. Therefore Micro Finance has wider concept as compared to Micro Credit.

In present times, the concept of financial inclusion has been gaining prominence.

Research Methodology

The research methodology for this paper is as follows:

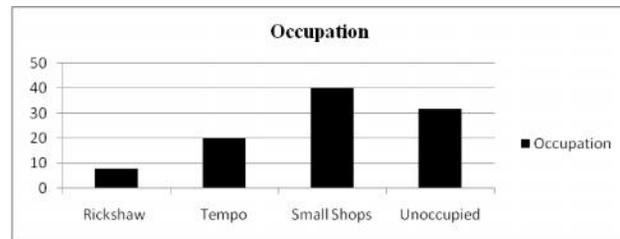
1. Population:- People below poverty line is the population for this study.

2. Sample size:- Out of total population, 50 households have been selected for this research study.
3. Sample Method:- The method used was convince sampling for this sample size.
4. Sampling area:- Sampling area was Balera village, Mirzapur District.
5. Primary Data:- This was collected through questionnaire which was well structured, close ended questionnaire.
6. Secondary Data:- It was collected through books, journals, newspaper, magazines, internet etc.
7. Data analysis tools:- The tables and graph created through questionnaire were analyzed and on this basis, some findings and suggestions were given.

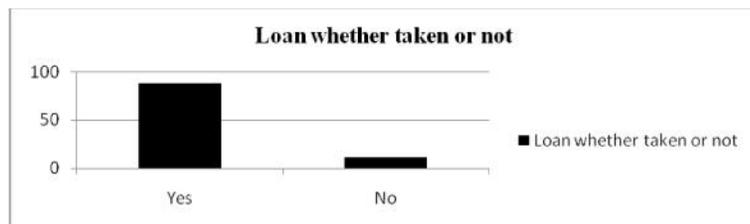
Data Analysis

The data collected was as follows:

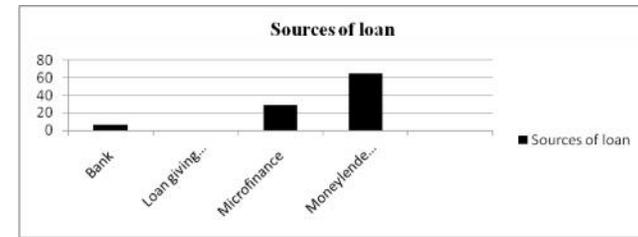
On asking the prime occupation of the earning members, the following result was obtained:



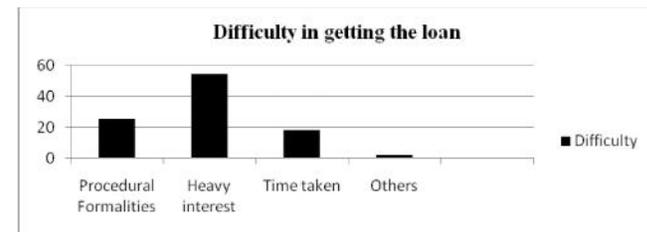
On asking, whether they have taken any sort of loan, the responses were as follows:



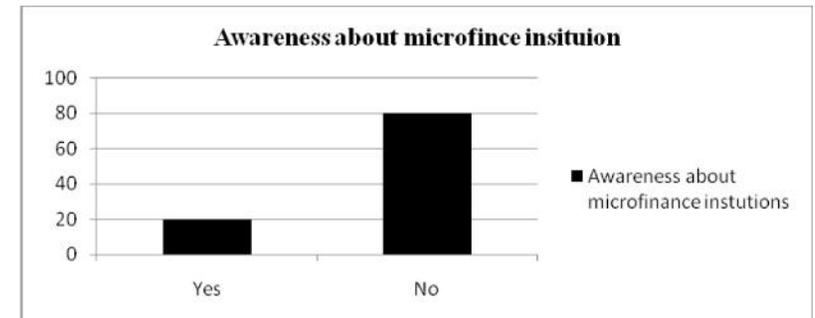
When asked, from where they have taken the loan, the response were as follows:



When asked about the difficulty that they face in obtain the loan, the response were as follows:

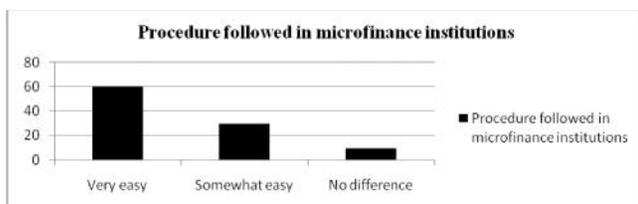


When asked about the awareness of microfinance institutions, the responses were as follows:

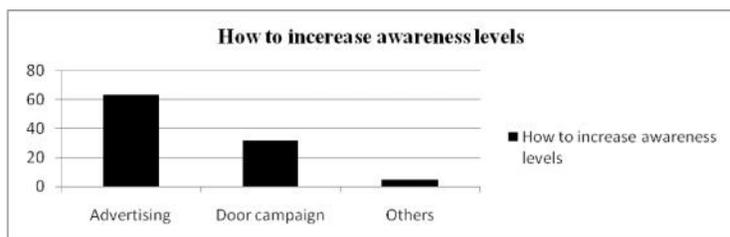


When the 10 people were asked to name any two institutions, only 3 were able to name them. That was done to verify the actual awareness.

When asked about the loan giving formality of microfinance institutions, the responses were as follows:-



What should be done to increase the awareness levels, the responses were as follows:-



Conclusions and suggestions

The above data analysis shows that microfinance plays a very important role on poverty reduction. Its importance increases due to easiness in which loans are distributed to the poor customers. But, they are not popular due to very low level of awareness among the poor customers.

So, through this paper, author suggests some ways and means of increasing awareness among the public. Since this paper is focuses more on rural areas, door to door campaign, newspaper advertisement, opinion leader advisement will be much helpful. The microfinance institutions can take help from Gram Pradhan for this purpose.

References :

1. Research Methodology – Kothari C.R.
2. Marketing Research – Agrawal Sangeeta
3. en.wikipedia.org/wiki/Microfinance
4. www.cashpor.in
5. Financial Management – Khan I.A.

An Analytical Study of Mental Health and Job Satisfaction of Male and Female Teacher Educators Teaching in Self - Financed Institutions in Ghaziabad District

Mrs. Deepali Garg*

Dr. D.K. Jha**

Abstract-

The aim of the present investigation was to analyze the mental health and job satisfaction of male and female teacher educators teaching in self-finance institutions in Ghaziabad district. For this purpose, a sample of 500 teacher educators, analyzing of 250 male and 250 female teachers educators from each type of institutions affiliated to c.c.s university. Meerut were selected randomly. Mental health check-list(MHC) has been prepared by Dr.Pramod kumar, Department of Phychology, Sardar Patel University and teacher's job satisfaction scale(TJJSS)has been prepared by Dr.Sushil Prakash Gupta.

Introducation-

Man is the greatest creation of God and a sound health gives a great pleasure of living and enjoying the life .It affects all most all the dimension of life extensively and deeply. By the 'Health' we mean physical health as well as mental health .As is well known that 'Mental health' affects our emotions, feeling, expression, thoughts, imaginations, reactions, satisfaction, perception, ability of adjustments etc. A person can be called normal if norms or if he approximates an ideal mature, health or fully functioning personality.

1) Mental Health -

Mental health describes a level of psychological well-being or an absence of a mental disorder. From the perspective of positive

*Research Scholar, Deptt. of Education, Mewar University, Chittorgarh, Rajasthan

**PROF. & PRINCIPAL, I.A.M.R B.Ed. College, Ghaziabad, U.P.

psychology or holism, mental health may include an individual's ability to enjoy life and create a balance between life activities and efforts to achieve psychological resilience. Mental health can also be defined as an expression of emotions and as signifying a successful adaptation to a range of demands.

2) Job Satisfaction-

On the other hand, a person is said to be satisfied with job if he enjoys his work and if fulfills his all domestic requirements. But sometimes having these all satisfactions our consciousness still fell unsatisfied. It means satisfactions is not simply related to all kinds of domestic requirements but it includes some mental aspects also. Job satisfaction is simply how content an individual is with his or her job. At the more specific levels of conceptualization used by academic and human resources professionals, job satisfaction has varying definitions.

Objectives Of The Study-

The present study to analyze mental health of male and female teacher educators teaching in self- financed institutions.

To analyze job satisfaction of male and female teacher educators teaching in self-financed institutions in term of salary and fringe benefits interpersonal relationship among colleagues teacher principal relations, Profession, Teacher -students relations, working condition, Ability utilization, Achievement, Activity, Community aspect, Supervision, Family life, Freedom, Policies and practices, Possibility of growth and development dimension of job satisfaction in self- financed institutions.

Hypothesis Of The Study-

To analyze the above discussed objective the following hypothesis has been formulated -

Male and female teacher educators teaching in self - financed institutions of not differ significantly in term of mental health salary and fringe benefits, interpersonal relationship among colleagues, teacher-principal relations, teacher-students relations, working-condition, ability utilization, achievement, activity, community aspects, supervision, family life, freedom, policies and practices, possibility of growth and development, security and recognition and status dimension of job satisfaction.

Method Of Study-

The survey method of research was used in the present study.

POPULATION AND SAMPLE-

There above 200 self financed institutions were found affiliated to C.C.S.University, Meerut .A sample of 250 male and 250 female teacher educators from each type of institution were selected randomly .Most of the were located in Ghaziabad district. This sample being sufficiently large and drawn in a random manner may be reasonably considered representative of the total population of the male and female teaching affiliated institutions of C.C.S.University Meerut,`

Tools To Be Used-

Following tools used to collect data for the present study

1) Mental health check list (MHC) -

Prepared by : Mr. Pramod Kumar (Deptt. of Psychology)

There are four spaces belong to four spaces belong to four responses namely Always, Often, At time and Rarely. The dimension has been indicated serially as (i), ii)and (iii,iv) assigned numbers as 4 marks to Always, 3 marks to Often, 2 marks to At time and 1 marks to rarely responses counting the total marks of all assigned dimension gives the score for mental health.

2) Teacher's Job satisfaction scale (TJSS)-

Prepared by : Dr. Sushil Prakash Gupta And

Dr. Jawala Prasad Shrivastava

This scale has been designed to measure the job satisfaction of teacher educators experienced by them. It provides a measure of the quality and quantity of the cognitive emotional and social support that have been available to the teacher educators during their college /institution activities and experiences in terms of various dimensionof job satisfaction .

Statistical Techniques-

Test of significance namely 't' test was applied to analysis the data of the study.

Analysis And Interpretation Of Data -

The purpose of the study was to compare the mental health and various dimension of job satisfaction of male and female teacher educators teaching in self - financed institutions this study has been devoted to the analysis and interpretation of the results based on the

data collected in the proposed variable first the mean and S.D for all 20 dimension of job satisfaction and mental health were found separately for the male and female teacher educators teaching tested with the standards value at 't' from the which were tested with the standard value at 't' from the table were 2.00 and 2.66 for d f=58 and .01 level of significance, respectively.

Sl. No.	Variable	Gender	N	Mean	S.D	t-value	Significance
1.	Salary	Male	58	2.11	0.89	2.08	0.05
		Female	58	2.17	0.87		
2.	Salary and fringe benefits	Male	58	2.24	0.91	2.12	0.05
		Female	58	2.29	0.87		
3.	Interpersonal relationship	Male	58	2.12	0.89	2.08	0.05
		Female	58	2.12	0.87		
4.	Working conditions	Male	58	2.07	0.90	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
5.	Freedom	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
6.	Working conditions	Male	58	2.12	0.89	2.08	0.05
		Female	58	2.12	0.87		
7.	Work load	Male	58	2.11	0.89	2.08	0.05
		Female	58	2.17	0.87		
8.	Ability utilization	Male	58	2.12	0.89	2.08	0.05
		Female	58	2.17	0.87		
9.	Advancement	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
10.	Ability	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
11.	Multitasking aspects	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
12.	Task/role	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
13.	Family life	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
14.	Freedom	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
15.	Advancement position	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
16.	Flexibility of growth and development	Male	58	2.07	0.89	1.98	Not significant
		Female	58	2.07	0.87		
17.	Ability utilization and practices	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
18.	Ability	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		
19.	Recognition and award	Male	58	2.07	0.89	1.98	0.05
		Female	58	2.07	0.87		

Conclusions :

1. Male and female teacher educators working in self - finance institutions are equally satisfied fringe benefits inter-personal relationship among colleagues, profession, teacher student relations, institution, work-load, ability utilization activity, family life, freedom, policies and practices and re-cognition and status aspect of their job satisfaction than female teacher educators working in self-finance institutions.
2. Male teacher educators working in self-financed institutions are more satisfied on salary and in terms of mental health.

References :

1. Allport, G.W.(1961) Pattern and Growth in personality Y.Halt,Rinchart and Winston, New York.
2. Arkoff Fair Child, M.(1930) Skill and Specialization, a study in the Mental Trades, The Personnel Journal,9,128-175.
3. Blum, m.l, Naylor,J.C (1968). Industrial psychology, It's Theoretical and Social foundation, Harper of Row Publishers.
4. Donald Canthy,A and Ware, John, E.(1984). (Rand Corpsanta Monica, CA)he measurement of social support. Research in Community and Mental Health, Vol.4,325-370.
5. Dunn,H.L(1964). A positive view of Aging Asks much of Education, should life, Jan ERAMER Duncans, Henderson; Scott and Scott, Ruth(1996). (Loughborough, English)
6. Mental health and adequacy of social support:A four wave panel study. British Journal of social psychological (Jun),Vol. 35(2), 285-295.
7. Fair Child, M.(1930).Skill and specialization, a study in the Mental Trades, The Personnel Journal,9,128-175.
8. Frenkel Etha, Kugelmass, Sal, Nathan Michael and Ingraham, Haring J (1995). (NIM/NIMN, Bethesda MD)locus of control a mental health in adolescence and adulthood. Schizophrenia bulletin, Vol. 21(2), 219-226.
9. Ghaffarian Shireen (1998). (California School of Profesional psychology, CA) The acculturation of Iranian immigrants in the United States and the Implications for mental health journals of Social Psychology(Oct), Vol.21(2),219-226.
10. Sam David, L and Eide, Roff (1991). Survey of mental health of foreign students. Scandinavian journal of psychology, Vol.32(1),22,30.

Sports As a Means of Nation Development and Personal Development

Prof. V.S. Ghule*

Abstract:- This study examined sports as a means of Nation Development and Personal Development, the writer see sports as an employment avenue for athletes, coaches, managers and sports writers in India, creating socio-economic development for the country. This paper also identified some values of sports as an instrument that enhance national unity irrespective of ethnic and religious diversity. The writer recommended that people should be encouraged to participate in sporting activities in order to achieve the needed values.

Introduction : Swami Vivekanada said “First of all, our young men must be strong. Religion will come afterwards. Be strong, my young friends; that is my advice to you. You will be nearer to Heaven through football than through study of Gita.”

Sport is a social agent that brings different people of different ages and religious background together, either as a sport producers or consumers, so that both can make good use of their leisure time. The players are usually referred to as primary producers who engage in sporting activities in order to entertain the spectators, while secondary consumers watch them perform.

According to Olajide sports is an institutionalized physical activities which operate by rules fixed externally. He described sports as activities with clear standard of performance involving physical exertion through competition, governed by norms, definitions and role relationships, typically performed by member of organized group, with the goal of achieving some rewards through defeat of others competitors. Sports today, is global in scope and sporting events are followed with great interest by the people of many countries. Sports

in an international tool for politics and nationalism. As such, it has a means of obtaining recognition and giving attention in the desire of the people (Omoruan, 1992)

It is now important for the local managements, state and government to provide adequate facilities for the schools. It is also important to employ qualified personnel in the tertiary institutions to teach physical education. Precisely, if facilities like soccer field, handball court, hockey pitch, gymnasium, volleyball court, basketball court, tennis court, to mention a few are available, plus adequate personnel, the rate of participation will be high. It will later produce skilled sports men and women as well as good physical educator or teachers (Abubakar, 2006).

Intercollegiate sport refers to the competition where top athletes of higher institutions compete within themselves. It is primarily meant for elite sport men and women of higher institutions like University, Polytechnics, colleges of education etc (Olajike, 1992).

According to Bucher (2001) inter collegiate sport represents an integral parts of total physical education programme which mostly involved from the intramural programmes. It is designed for students that are highly skilled in sports. .

Importance of Sports to the National Development : Augustine listed the followings as the importance of national development.

- 1) Sports create employment for several people aside the athletes themselves. This includes job for coaches, managers, agents, medical professional, dietician, journalists and body guards. All these people demand goods and services in an economy, which leads to growth and development of the economy and the society in which they live.
- 2) Sports also provide tremendous business opportunity in merchandising and in the healthcare sector in many economics. Whole lots of manufacturing industries have emerged producing sports attires. Sports equipment sports souvenirs, health products and services for sportsmen, women and fans, such industries are contributing immensely to socio-economic development of the country.
- 3) Media organization earn lots of income from providing local, national or global satellite coverage of major tournaments such as; Champions leagues and world cup, Olympics .

*Director of Physical Education, S.S.S.K.R. Innani Mahavidyalaya, Karanja (lad), Dist-Washim, Maharashtra

- 4) The hosting of major international sport events and festivals drives growth and development to the host countries or cities. Such development includes construction of hostels, stadium, roads, games villages, provisions of information technology, security, media and hospitality services etc.
- 5) Asian countries with reference to India have become major exporters of talented players to Europe and most of these players earn huge income. Many of these repatriate significant amounts of money, home to improve the economic situation of their families as well as contribute to the development of their communities and country at large.
- 6) Sports do promote and contribute to the development of societies and nations. First and foremost, a sporting culture just for the fun or if, produces healthy and more productive citizens. No wonder the ancient Romans used to say “mensa ana incorpore sano” meaning a sound mind lives in a sound body.

A physically fit person is not only mentally alert, but also more productive, when it comes to the use of motors and psychomotor skills in the work environment.

Peter (2003) in his contribution stated that as a result of competition, there is evidence of a decline in youth crime and youngsters were given a sense of self esteem and local pride.

Historical significance of sports : The history of sports in India dates back to the Vedic era. Physical culture in ancient India was fed by a powerful fuel—religious rites. There were some well-defined values like the mantra in the Atharva-Veda, saying, “Duty is in my right hand and the fruits of victory in my left”. In terms of an ideal, these words hold the same sentiments as the traditional Olympic oath: “.....For the Honour of my Country and the Glory of Sport.” The founders of the Olympic idea had India very much in mind when they were deciding on the various disciplines. There is a fascinating link between Greece and India which stretches back to 975 B.C. The zest for chariot-racing and wrestling was common to both the countries.

In India, *dehvada* or the body-way is defined as “one of the ways to full realisation.” In the day and age of the Rig-Veda, Ramayana and Mahabharata men of stature and circumstance were

expected to be competent in chariot-racing, archery, horsemanship, military tactics, wrestling, weight-lifting, swimming and hunting. The guru-shishya (teacher-pupil) relationship has always been an integral part of Indian sport from time immemorial. Indian sport reached a peak of excellence when Buddhism held sway here. In *Villas Mani Majra*, Tiruvedacharya describes many fascinating games, namely, archery, equitation, hammer-throwing and chariot-racing. In *Manas Olhas* (1135 A.D.), Someshwar writes about *bhrashram* (weight-lifting), *bhramanshram* (walking) and also about *Mall-Stambha* (wrestling).

It is more than likely that many of today’s Olympic disciplines are sophisticated versions of the games of strength and speed that flourished in ancient India and Greece. Chess, wrestling, polo, archery and hockey (possibly a fall-out from polo) are some of the games believed to have originated in India.

Values of Sports

Values are social shared ideas about what is good, right and desirable. These could be enjoyed through participating in sports. These values includes:

1. Physiological values,
2. Psychological values,
3. Sociological values

Sports As a Means of Social Functions

Abubakar (2006) opined that sports is an important institution that is directly affecting the lives of the majority of the population, who are either participants or spectators of various sports. He said, like all other institutions, sports serve various social function .

Conclusion

In the light of the preceding discussion, it is believed that sport have contributed to national developments, stressing out its importance to the participants, coaches, managers, agents, medical professional, dieticians ,journalists, manufacturing, industries of sports equipment and supplies.

Sports can also promote development of good infrastructures, tolerance, unity, endurance, discipline and diplomacy. Values of sports for the participant ranging from human growth and development improve cardio respiratory functional capacity and physical working ability, as a result of health status and equality of life. Finally, sports was also examined as a means of social functions.

Recommendation

In view of the importance of Sports As a Means of Nation Building and personal independence, the following recommendations are proffered.

- i) People should be encourage to participate in sporting activities, in order to achieve the inherent values.
- ii) Sports should be used as basis of fostering unity among the diverse ethnics and socioeconomic group of the country.
- iii) Adequate facilities and equipment should be made available to enhance sports performance in all institutions.

References :

1. A Corner of a Foreign Field: The Indian History of a British Sport by Ramachandra Guha (2003)
2. Abubakar N. M. (2007) Appraisal of available sport facilities for the teaching of Physical Education in Secondary School Journal of Education Research and Development Vol. 1 No 2 pg. 102.
3. Ajiegbe Y. I (2004) Relevance of Sports as a weapon of Tourism national development. Multi-Disciplinary Approach to human kinetics and Health Education.
4. Akinsanmi, T. (1995). The Role of exercise in promoting health as perceived by health related professionals. Journal of Research in Behavioural Sciences 1 (2).
5. Augustine, Y. D. (2003), Sports for peace and development. A paper presented at the second PT Africa conference on peace through Tourism. Dares Salaam. Tanzania.
6. Babalola, J. F. and Oyeniya, P. O. (2003), curbing sport hooliganism during collegiate sport in Nigeria. West African Journal of Physical and Health Education. Vol. 7 pg. 58.
7. Biddle, S. J. H and Fox, K. R. (1991). Exercise and Health Psychology emergency relationships. British Journal of medical psychology. 62,205-216. ed.) Saint Louis: the C. V. mosby company.
8. Olajide, O. A. (1992). Sports in cultural perspective of a Nation Unpublished manuscript.
9. Olajide, A. O. (2000). Ensuring hitch free intercollegiate sport in Nigeria: A critical Analysis. West Africa Journal of Physical and Health Bucher, C. A. (2001). Management of Physical Education and Sports (12th Education. Vol. 7.95-103.

Pandit Shri Ram Sharma Acharya : The great social reformer

Anil Kumar*

Pandit Shri Ram Sharma Acharya was born on 20 September 1911 as the son of Pt. Roopkishore Sharma and Mata Dankunvari Devi in Anwalkhera Dist. Agra, India. Right from his childhood, he showed the yearning and deep commitment for the welfare of common masses when he took a brave step of nursing an old “Dalit (outcaste) and untouchable woman, suffering from leprosy against the strong disapproval and displeasure of his family. She used to work in their household and was called Chapko. Child Shriram was curious about her prolonged absence, when she did not show up for a few days. So he set out in her search towards the outskirts of the village. Dalit (outcaste) and untouchables’ settlements were usually constructed on the outskirts of the villages. He found her in a terrible condition, screaming out in pain and agony, the screams suppressed due the lack of energy. Being devoid of food for many days,her condition was worse than that of animals—stripped of all human dignity. Everybody in that village including her family members had completely ignored her and left her to her fate. This situation of the old lady had shaken child Shriram. He decided to do all that was possible to help this old woman. He immediately called the local physicians and vaidyas (traditional Ayurvedic physicians), procured the medicines, did the dressings of her leprosy wounds. This particular event in his early life was significant as it showed his concerns and unadulterated love and affection for the whole of humanity. It highlights his belief in the “Karma”, or the theory of Right-Action in life.

The Great freedom fighter and founder of Banaras Hindu University, Pandit Madan Mohan Malaviya solemnized his sacred thread ceremony (Yagyopaveet) and initiated him in Gayatri Mantra.

*UGC NET, Manas Mandir Durgakund, Varanasi, UP

At the age of fifteen, his Spiritual Guru, a Himalayan Yogi, Sarveshwaranandji had appeared in his vision during the worship in the astral body. As per Sarveshwaranandji's instruction, Shriram performed twenty-four mahapurashcarañas (2.4 million recitations) of Gayatri Mantra each for twenty-four years. He visited Himalayas four times for higher spiritual attainments. At the same time he took active part in Indian freedom movement and was sent to jail thrice.

Participation in Indian Freedom Movement

Young Shriram had started participating in Indian freedom movement at an age of just 12 years. He created Baal Sena (children's army) to oppose British government and help victims. Worried by his increasing participation in movement, his family members tried to stop him, but he left home in the midnight, walked for 12 hours and reached Agra. There he joined volunteer camp of Indian National Congress. Fellow freedom fighters nicknamed him as "Matt" (the Intoxicated, obsessed, completely devoted to the idea of a Free India) on account of his dedication and devotion. Many of his revolutionary writings and poetries were published in Hindi newspaper Sainik with nickname of Matta.

In 1933, he left for Kolkata to attend Rashtriya Adhivasion (national meet) of Congress, but arrested and sent to Asansol jail with other national leaders such as Mahamana Madan Mohan Malaviya, Swaruparani Nehru, Devdas Gandhi, Rafi Ahmad Kidwai etc.^[4] At the age of 25 years he was again arrested on charges of flag hoisting on government establishments and transferred to many jails. He was released after almost one year.

Spiritual Sojourn

Pandit Shriram Sharma Acharya visited Sri Aurobindo Ashram at Pondicherry, Ramana Maharshi's Ashram at Tiruvannamalai, Santiniketan of Rabindranath Tagore and worked with Mahatma Gandhi at Sabarmati Ashram in Ahmedabad. During his participation in Indian freedom movement, he came in close contact with eminent national leaders. In 1935, he embarked upon the task of social upliftment through spiritual means with the blessings of Mahatma Gandhi.

In 1946, he married Bhagwati Devi Sharma, and ever since, the saintly couple dedicatedly pursued the goal of spiritual upliftment of humankind. Pandit Shriram Sharma Acharya (revered as

"Gurudev" by his disciples) was a great devotee of Goddess Gayatri. He successfully practiced and mastered the highest kinds of sadhanas described in Hinduism. He had deciphered the hidden science of Tantras. He had attained the supreme knowledge of the philosophy and science of the Gayatri Mantra and yoga..

The yearning for literature

To help people, his aim was to diagnose the root cause of the ailing state of the world today and enable the upliftment of society. He recognized the crisis of faith, people's ignorance of the powers of the inner self, and the lack of righteous attitude and conduct.

Pandit Shriram Sharma Acharya initiated the movement of VICHAR KRANTI (Thought Revolution) with the very first issue of Akhand Jyoti. By 1960, he had compiled and translated the 4 Vedas, 108 Upanishads, 6 Darshanas, 18 Puranas, Yogavasishtha and various Aranyakas and Brahmanas with lucid commentaries to enable the masses to understand the knowledge contained in them. The translation was also aimed at eliminating misconceptions, superstitions and blind customs, which were propagated in the medieval era by misinterpretations of the Vedas and other scriptures. This contribution to the world of knowledge and human culture was highly acclaimed and appreciated by scholars like Dr S Radhakrishnan, Acharya Vinoba Bhave; the distinguished title of "Vedmurti" was conferred upon him in its recognition.

Understanding the modern day psychology of the people, and recognizing the non-relevance, in the present times, of the mythical characters and the background of life depicted in the Puranas, he wrote "Pragya Purana" in the narrative and conversational style of the ancient Puranas to preach the eternal principles of happy, progressive and ideal life with practical guidance relevant to the modern age.

A Global Movement

On the completion of the 24 Mahapurashcharans, Pt. Shriram Sharma established Gayatri Tapobhumi at Mathura, Uttar Pradesh, India in 1953. He organized a grand 1008 Kundi Yagya in 1958, which served as a base to launch the Yug Nirman Yojna, a global movement for moral, cultural, intellectual and spiritual refinement and reconstruction. The objectives of this movement are to reform the individual, the family and social values of mankind and to change

the current ideologies and concepts of morality and social structure for a better tomorrow.

Through various activities at Mathura, including the performance of yagnas on large scale, Acharyaji gathered a team of dedicated men and women. Thus the organization called “Gayatri Pariwar” was born.

As per the plans projected under the Yug Nirman Yojna, the mission has contributed to the upliftment of the personal, familial and social aspects of human life. Its major activities include mass awareness and education on cultural values through small and large scale Gayatri Yojnas and collective projects of social transformation with people’s voluntary participation. Propagation of ideal marriages without dowry and extravagant shows has been a significant and trend-setting achievement, especially in the Indian context. Other achievements include upliftment of the social status of women and an integrated and self-reliant development of villages.

Establishment of Shantikunj and Brahmavarchas

According to the pressing need of the present times, he developed Shantikunj, as spiritual center for implementing the teachings of Rishis into practice. He established Brahmavarchas Research Institute at Haridwar, a center for inter communion of science and religion. The prime aim of establishing the Brahmavarchas Research Institute is to establish the ancient Indian Yogic Philosophy as the science and art of living.

Establishment of Dev Sanskriti Vishwavidyalaya (the Divine Culture University) inaugurated in 2002, under the auspices of Shantikunj is an instrument for the revival of the Divine Indian Culture as per his vision.

Scientific spirituality

Pandit Shriram Sharma Acharya was convinced that modern man could not be persuaded to accept the values of life patronized by ancient spirituality until and unless these were proved to be scientifically viable for the welfare of the individual and the society. This was indeed a Herculean task, given the trends of intellectual and scientific evolution over past millennium and almost simultaneous deterioration of religion and culture, which had resulted in a near total neglect of spirituality in the human life and the emergence of

blind faiths, misconceptions, and prejudices. The Brahmavarchas Research Institute founded by him in 1979 near Shantikunj stands as a living example of how the idea of scientific spirituality could be implemented and researched in the modern laboratories.

The dawn of the New Era

During 1984–1986, he carried out the unique spiritual experiment of sukshmikaraña, meaning sublimation of vital force and physical, mental and spiritual energies. He authored a special set of 40 books (termed Revolutionary Literature or Krantidharmi Sahitya) highlighting the future of the world and conveying the message of the dawn of the New Era of Truth during the 21st Century.

Acharyaji passed away on Gayatri Jayanti (2 June) 1990. In 1991 India released a postage stamp in his honour inscribed Sri Ram Sharma Acharya.

Thereafter, his soulmate revered Mata Bhagavati Devi guided the series of Ashwamedha Yagyas, which accelerated the pace of global expansion of the mission during the critical juncture of the decade of change of a millennium and change of an era. She died on 19 September 1994.

References:

1. “Shri Ram Sharma Acharya, Chronology”.
2. “Seer-sage of the new golden era”.
3. Swatantrata-Sangram ke Sainik (Sankshipt Parichay). 33, District Agra. Suchna Vibhag (Information Department) Lucknow, UP.
4. Sanskriti Purush Hamare Gurudev (in Hindi). Shri Vedmata Gayatri Trust, Shantikunj. 2001.
5. “Yugrishi Vedmurti Taponishtha Pt. Sriram Sharma Acharya: Seer-Sage of the New Golden Era” Akhand-Jyoti (bimonthly) Jan-Feb 2003
6. <http://literature.awgp.org/home/>
7. “Establishments of Gayatri Pariwar”.
8. “Founder-Patron, Devsanskriti Vishwavidyalaya”.
9. Stamp Issue Date: 27 June 1991, Postage Stamp Denomination: 1.00, Postal Stamp Serial Number: 1458, Postal Stamp Name: SHRIRAM SHARMA ACHARYA

Coinciding Politics and Tourism in India: A Brand Image Perspective

Vikrant Kaushal*

Sidharth Srivastava**

Abstract :

Academicians and researchers have been inquisitive about the reasons that hold back the tourism from yielding substantial benefits, given the kind of tourism offerings the country has and more than half a century of self-governance. The ever existing volatilities in Indian politics affect the 'Brand India'. The paper tries to examine concepts of destination branding, brand image and reviews select important political developments in India that received international attention, and tries to coincide the concepts of destination branding and destination image to infer implications for tourism industry in India.

Keywords : Tourism, Branding, Politics, India, Destination image

Introduction :

Politics in India never runs out of trends and discussions. This comes by the virtue of being the largest democracy in the world. The contemporary India is bracing the importance of politics and seeking to participate actively in the present political landscape. Tourism is gaining its prominence in India and influenced by the occurrences in the political backdrop.

The geographical stretch of India presents magnitude of variations, as the topography changes-different cultures, languages, communities' surface astounding the curious observers. This multiplicity renders diverse occurrences which could be termed either

good or bad. Good notions are welcomed and bad ones are abhorred. Political events are quick to clutch attention, both affirming and contradictory happening are prone to get media attention. Political happenings of latter type are more likely to become headlines and travel faster across national and international peripheries. Where positive development establishes an affirming image, contrary are counterproductive.

This paper attempts to present several such events that garnered just not national but international news space. It also through presented accounts tries to substantiate the impact of these developments on prospective tourists. While the paper would be focusing on the certain developments in the political setup it is pertinent to understand the concepts like branding, destination image, brand image and certain other concepts would evolve as the paper proceeds further.

A brush up with important concepts :

The word "Brand" was first found in the Germanic languages that evolved to Old English [Anglo-Saxon] in which the word "brand" appears as a noun, and as a verb (Todd, 1942). the word "brand" was used for at least 15 centuries before it entered Marketing in 1922 when it was used in the compound "brand name" to define a trade or proprietary name (Oxford English Dictionary, 2004, cited by Stern, 2006).

Crompton (1979) defines destination image as 'the sum of beliefs, ideas and impressions that a person has of a destination.' destination image is formed from several sources of information namely reference groups, group membership, media, etc. Thus, any person can build an image of any destination (in their mind) without ever having been there (Lopes, 2011). The organic image of a destination is formed by the information transmitted unintentionally by representatives of tourism destinations like television, radio, books on geography or history, newspapers, magazines, or by people living at a tourist destination (Gunn, 1972).

Case of Italian marines :

The issue of two Italian marines being detained on the charges of killing an Indian Fishermen has garnered international coverage. The relations between both the countries suffered blow as the whole instance unfolded and the supreme court of India intervened. The

*Research Scholar at Central University of Himachal Pradesh

**Assistant Professor, School of Hotel Management and Tourism Lovely Professional University Phagwara, Punjab

whole case has seen many ups and downs, with growing threats and an anonymous warning to Indian embassy in Italy a sigh of relief came with the news when it was decided that the detained marines would not face death penalty. This incidence has given new frame of reference to Italian citizens to think about India and Indian system.

The prospective tourists generating from the region of Italy may perceive India as a brand in terms of its personality or brand image. A negative image may dissuade them from visiting Indian tourist destinations. This also opens an area of further research to analyse the perceptions on the yardsticks of destination personality and image to further refine preference of Italian tourists at this point in time

The ever surprising Delhi :

Politics at centre receives considerable media attention than others at regional levels. Being the capital of the largest democracy New Delhi has seen upheavals and it continues to do so. Technology has shrunk the world and apparently information can't be controlled from spreading if media distinguishes it as news worthy. An instability in political situation though brings TRP to channels broadcasting it, also deter many potential visitors to the city. In this place's context anti-corruption rallies hit the news recently where the images of mob protesting on the roads being manhandle, faces of screaming crowd against the pervasive corruption in the regime were common in news. The chaotic expression of such kind generate insecurity and anxiety among the tourists present in the place, and discourages those who have planned to cover the destination, and often cancel their halt and may even consider cancelling the tour before culmination. It is important to understand here that products are often purchased or avoided not for their functional attributes but because of how, as symbols, they impact on buyer's status of self-esteem (Levy, 1959).

Indictment of DevyaniKobragade :

Another issue in political showground has been the indictment of the Indian deputy consul general to United States DevyaniKobragade. This has drawn a major attention across the globe and brought the diplomatic ties between US and it's so called reliable ally India to a low. The VISA related charges against her led to ensuing arrest. The treatment aggravated emotions in India and certain reactions of the government clearly indicated their displeasure

with the handling of the situation by the US authorities. The barricades from the US embassy in New Delhi were removed, which could spawn security concerns in minds of the Americans who think very carefully before they visit any place. The removal of concrete barricades may not have created a vacuum in the security, yet was enough to reflect the idea behind the endeavour. Brand image is based on perception of reality rather than the reality itself (Levy, 1959; Pohlman&Mudd, 1973). Given the fact that majority of tourists that constitute international arrivals in India are from the US, the described incidence isn't promising and may instead deteriorate the arrival trends.

It's not all adverse :

Although the mentioned instances in the paper suggest the negative impacts of politics on tourism, it should be noted that it is the political scenario that may be one of the most encouraging factor in creation of positive destination image. Tourism is growing in India, and this should also be attributed to various policies and affirming developments in political sphere. One such development includes the rise of the Indian political leader NarendraModi who was initially faced VISA restrictions from USA and diplomatic boycott from UK. With the surge in prominence UK has welcomed him and following this promising statements from the US envoys have brought further relief on the restrictions in future. Besides this the visit of the president of the United States of America further forged the ties between two great democracies. At an individual tourist's level, it becomes a supporting factor to travel to a country where the most powerful president takes up a discussion with student in seemingly informal settings. Earlier to it, both the countries had inked civilian nuclear deal that gave foundation of cooperation in the energy sector, bringing both the countries closer.

Conclusion :

The paper identified certain events that received worldwide attention. The implications of such advances have also been emphasised on individual's impressions subsequently affecting their travel decisions. To brand India in the competitive environment where other destinations are placing their best foot forward, it becomes crucial to leave positive first impression which is possible through positive image creation and conveying the right message to those who have yet to take decision to travel to the country.

References :

1. Todd, J.H. (1942). An apology for Lollard doctrines. London: Camden Society.
2. Crompton, J.L. (1979). An assessment of the image of Mexico as a vacation destination and influence of geographical location upon that image. *Journal of Travel Research*, 17 (4), 18-23
3. Lopes, S. D. F. (2011). Destination image: Origins, Developments and Implications. *Revista de Turismo y Patrimonio Cultural*, 9, 305-315.
4. Stern, B. B. (2006). What does brand mean? Historical-analysis method and construct definition. *Journal of the Academic Marketing Science*, 34(2), 216-223.
5. Lopes, S. D. F. (2011). Destination image: Origins, Developments and Implications. *Revista de Turismo y Patrimonio Cultural*, 9, 305-315.
6. Gunn, C. A. (1972) *Vacationscape: Designing Tourist Regions*, Taylor & Francis, Washington.
7. Levy, S.J. (1959). Symbols for sales. *Harvard Business Review*, 37 (4), 117-124
8. Pohlman, R.A., & Mudd, S. (1973). Market image as a function of group & product type: A quantitative approach. *Journal of Applied Psychology*, 52 (2), 167-171.

Effectiveness of Environmental Laws in India: A Study in Context of Green Criminology

Mr. Supratim Karmakar*

Abstract:

Green criminology addresses the forms of crime that harms the environment. Compared to regular criminal harms green crimes are much more wide spread. Policies intended to control crime and address biases in law and law enforcement must incorporate green criminology in order to reduce environmental pollution. India is facing the problem of degradation and pollution of environment despite of employing a range of regulatory instrument such as environmental laws. There are seated to be over more than 200 central and state statutes, which have at least some concern with environmental protection. The plethora of such enactments has, unfortunately, not resulted in preventing environmental degradation, which on the contrary has increased over the years. The main objectives of the paper is to consider how to readdress the problem of poor enforcement of environmental law in India and to make suggestions for strengthening the environmental policies and laws of India by incorporating the idea of green. criminology more vividly.

Green Criminology:

Green Criminology is the analysis of environmental harms from a criminological perspective or the application of criminological thought to environmental issues. As elsewhere in criminology, this means thinking about offences, offenders and victims and also about the responses to environmental crimes: policing, punishment and crime prevention. On a more theoretical level, green criminology is interested in the social, economic and political conditions that lead

*Junior Research Fellow (UGC), Department of Geography, Visva Bharati, Santiniketan, West Bengal.

to environmental crimes; on a philosophical level it is concerned with which types of harms should be considered as 'crimes' and therefore within the remit of a green criminology.

Environment and Environmental Law:

Einstein once remarked, 'the environment is something that isn't me'. In that sense, the environment may mean virtually everything in the surrounding. However, for the purpose of this study a limited definition of the environment as contained in the status will be adopted. Section 1 of the UK Environmental Protection Act 1990 defines the environment as consisting of 'all, or any, of the following media, namely, the air, water and land; and the medium of air includes the air within buildings and the air within other natural or manmade structures above or below ground.

Despite of the development of environmental law as a branch of law, it does not comprise a single, distinct set of rules. Rather it is made up of law drawn from a variety of sources including environmental legislation, the tort of nuisance, negligence, trespass, town and country planning legislation, land law, consumer protection, and public health legislation etc. The main aim of the environmental policy is to state the objects or goals of a desired environment. Constitutional provisions relating to the environment, guidance notes, and policy documents on the environment and pollution have been treated as different contours of environmental policy in this study. However, there are some areas where the precise difference between environmental law and policy is blurred.

Environmental Policy in India:

Respect for nature is part of the Indian psyche. Arthashastra written in 321 - 300 B.C. contains references to environmental management. After the advent of British rule in India, the environmental and forest policies were shaped as per the directions of the British administration in India. In fact, policy on the general aspects of the environment was not laid down in British India, as environmental problems were not serious enough to warrant a policy of this nature. Therefore policy was confined to forests only. It was thought by the British Government that Indian forests should be properly managed for a sustained supply of timber. The Stockholm Conference in 1972 on Human Environment increased environmental activities in India. As on today, India has following detailed policy guidelines:

- " On Forestry
- " On Abatement of Pollution, February 1992.
- " On National Conservation Strategy and Policy Statement on Environment and Development, June 1992.

The Indian constitution is amongst the few in the world that contains specific provisions on environmental protection. The Supreme Court has adapted and developed some fundamental norms in the process of adjudicating environmental cases. These norms have come to stay in India as part of the environmental policy and law. These norms include right to a wholesome environment, polluter pays principle, precautionary principle, sustainable development principle, intergenerational equity etc.

Environmental Laws in India:

The Stockholm Conference on Human Environment in 1972 inspired a number of measures relating to the enactment of laws in the domain of air, water and other aspects of the environment. In December 1984, the Bhopal disaster occurred claiming thousands of lives and inflicting permanent disability upon hundreds of thousands of hapless residents in Bhopal. The inadequacy of Indian environmental law was laid painfully bare. India's environmental law regime before Bhopal was inadequate, unimaginative and so ineffectual as to be virtually non-existent. A flurry of policy and law reform measures were catalyzed by the Bhopal tragedy and in this effort, an already activist judiciary was unwilling to play the role of a passive spectator. It was uniquely placed to extend its judicial activism to environmental issues and concerns and in fact did not hesitate to do so. Parliament has enacted three major anti-pollution laws dealing with various aspects of environmental pollution. These laws are: the Water (Prevention and Control of Pollution) Act 1974, the Air (Pollution and Control of Pollution) Act 1981, and the Environment (Protection) Act 1986. It is significant to note that the term 'prevention' appearing in the titles of the Water and Air Acts, refers to new sources of pollution whereas the term 'control' refers to the existing sources of pollution.

Evaluation of Effectiveness of Laws:

India is facing problem of resource degradation and pollution of the environment despite employing a range of regulatory instruments. "But the law works badly, when it works at all. The

judiciary, a spectator to environmental despoliation for more than two decades, has recently assumed a pro-active role of public educator, policy maker, super-administrator, and more generally, amicus environment." (Divan, Shyam, Rosencranz and Armin, 2001).

The Indian Supreme Court has said: " If the mere enactment of laws relating to the protection of the environment was to ensure a clean and pollution free environment, then India would, perhaps, be the least polluted country in the world. But, this is not so. There are stated to be over 200 Central and State statutes, which have at least some concern with environmental protection, either directly or indirectly. The plethora of such enactments has, unfortunately, not resulted in preventing environmental degradation which, on the contrary, has increased over the years." (Indian Council for Environmental Action vs Union of India, 1996).

Likewise, the "Approach Paper to the Tenth Indian Five Year Plan" (2002-2007) says that 'pollution of air, water and soil is emerging as a serious threat to human health, biodiversity, climate change, ecology and economy of the area.'³ The approach has recommended review of existing policy, laws, rules, regulations and executive orders and their better enforcement. (Planning Commission, Govt. of India, 2002).

Some Recommendations:

1. Indian Policy Statement for Abatement of Pollution 1992 should be redesigned to give sharp focus to environmental pollution.
2. Indian State Pollution Control Boards should be strengthened to effectively address the problems of pollution. In the mean time, forest officials may be assigned the duty and power in respect of pollution prevention at local and regional level.
3. India should integrate the programme of sustainable development and all departments should adopt a unified approach.
4. Indian States Forest Departments should issue a vision statement for sustainable management of forest and appropriate strategy to this effect may be put in place.
5. Indian environmental laws need substantial restructuring for achieving goals of environmental policies as well as to meet her treaty obligations.

Conclusion:

The sphere of green criminology is not very well recognized in India, so the environmental crimes or dirty collar crimes are often being neglected. In the country like India crime generally refers only violent offences like murder, assault, rape or economic offences like theft, robbery etc. But our environment in which we are living and acquiring all the elements of survival got overlooked. In the course of exploiting nature we often forget that this exploitation is also a kind of offence. In this situation green criminology is such a discipline of knowledge which can be very helpful to make people aware of degradation of environment. Only policy making and law implementation is not enough to protect our mother earth. These laws and policies will be effective only when every man will consider degrading environment as a criminal offence and give the environmental issues due importance.

References:

1. Adger, W.N. et al. (2001) 'Advancing a Political Ecology of Global Environmental Discourses', *Development and Change*, 32, pp.681-715.
2. Divan, Shyam. and Rosencranz, Armin. (2001) *Environmental Law and Policy in India: Cases, Materials and Statutes*, Second Edition, New Delhi: Oxford University Press, p.1.
3. Indian Council for Environmental-Legal Action v Union of India 1996 (5) SCC 293.
4. Government of India (2002) Draft Approach Paper to the Tenth Five Year Plan, New Delhi: Planning Commission, p.7, available on line at <http://www.planningcommission.nic.in>.
5. White,R(2011), *A Green Criminology Perspective*, Sage Publications, New York.

Development of liberal feminism

Dr. Anish Kumar Verma*

Abstract - The word 'feminism' has manifold connotations. It has been interpreted differently by thinkers and scholars. But, feminism at its simplest connotes a movement for social, political and economic equality of both the sexes, i.e., men as well as women. It strives to bring gender equity in society by revealing the historical reality that women have been subordinate to men since ages.¹

Feminism has fragmented into a number of schools of thought. The major shades within feminism include Liberal Feminism, Socialist Feminism, Marxist Feminism, Radical Feminism, Post-modern Feminism, Black Feminism, Ecofeminism, Post-colonial Feminism etc.

The roots of Liberal feminism lie in classical liberalism which developed in the seventeenth and eighteenth centuries. Liberalism is a philosophy which believes in providing freedom and equality to all human beings, whether man or woman. It believes in the rationality of all human beings and views the individual as an independent, self-defining entity. It promotes private property and a limited state. The liberals assert that social problems are a product of ignorance and of social constraints on freedom of choice. Building on these notions and ideas, Liberal feminism argues that women are just as rational as men and that, women should have equal opportunity with men to exercise their right to make rational, self-interested choices. Elizabeth Cady Stanton, Mary Wollstonecraft, John Stuart Mill and Harriet Taylor were among the few liberal feminists who supported these ideas.

Liberal feminism emphasizes the rights of women as individuals and enjoins the state to provide them with opportunities to develop their full potential as individual human beings. Generally, the Liberal feminists are committed to equality of opportunity which is the first and foremost goal of Liberal feminism. Moreover, feminists of this tradition have the traditional liberal beliefs in the power of

education as a means of social reform as well as its importance to human fulfillment. Since the publication of Mary Wollstonecraft's *Vindication*, they have demanded education for girls and women equal to that offered to boys and men.

Liberal feminists do not call for a radical change in society, rather they hope to make 'cultural resources' more accessible to people who have not historically had access to them. It is chiefly concerned with providing equal legal and political rights to women at par with men. They emphasise on the equality of women in the public sphere. Marysia Zalewski assigns six characteristic features of Liberal feminism which she says are freedom, choice, rights, equality, rationality and control.²

They do not talk of equality within the 'private' or domestic sphere. They maintain that women's subordination by men is due to their legal and political restraints which are applied to them by the male-dominated patriarchal society. They argue that women, like men, possess similar rational capacity. Their view is that a woman is not devoid of reason and should not be considered an emotional fool. The constraints which block women from entering into the 'public' domain of the market, the academy etc. lead to the unfulfillment of many women's potential. Liberal feminism, therefore, clearly places emphasis individualism. They favour equal opportunities for women through legislation and other democratic means. They put emphasis on change from within the society. They are not in favour of any revolution for bringing about any change in society. They therefore, suggest to reform the existing system and equally redistribute power between males and females. Promoting 'androgyny' or the integration of roles and characteristics traditionally defined as masculine or feminine, the Liberal feminists argue that when men and women will adopt flexible roles, gender differences will be minimal or even disappear, and then women and men will experience a wider range of life satisfactions. The prominent Liberal feminists include Mary Wollstonecraft, John Stuart Mill, Elizabeth Cady Stanton, Susan B. Anthony, Harriet Taylor, and Betty Friedan.

In her groundbreaking work *A Vindication of the Rights of Woman*, Mary Wollstonecraft has insisted that if rationality is the capacity distinguishing human beings from animals, then unless females are mere animals (a description most men refuse to apply to

*Editor, Research Discourse, Varanasi, U.P.

their mothers, wives, and daughters), women along with men have this capacity. Thus, society owes girls the same education that it owes boys, simply because all human beings deserve an equal chance to develop their rational and moral capacities so they can achieve full personhood. Wollstonecraft has urged women to become autonomous decision-makers.

John Stuart Mill's *The Subjection of Women* is very often seen as the classic statement of liberal feminism. He 'claimed that his philosophical readings had always convinced him of the need to give women equal rights'. He was of the opinion that women and men should be given equal opportunities. He stressed that 'women's legal servitude in marriage must be abolished, they must be allowed free access to education and employment, and they should be allowed both to vote and to hold political office'. Mill states:

Women in general would be brought up equally capable of understanding business, public affairs, and the higher matters of speculation, with men in the same class of society; and the select few of the one as well as of the other sex, who were qualified not only to comprehend what is done or thought by others, but to think or do something considerable themselves, would meet with the same facilities for improving and training their capacities in the one sex as in the other. In this way, the widening of the sphere of action for women would operate for good, by raising their education to the level of that of men, and making the one participate in all improvements made in the other.³

Similarly, Harriet Taylor's liberal feminist thinking becomes clear when she says that a married woman should be a contributor to the household income 'even if the aggregate sum were but little increased by it'. She further says that in this way, she would be 'raised from the position of a servant to that of a partner'.

However, despite the above strong voices in support of Liberal feminism, it has been accused of including all feminism under its banner and wrongly represent them. It has further been accused of neglecting the role of larger structural elements and values such as patriarchy in society that oppress and undervalue women and remain excessively accommodating by keeping its demands within the existing political structure.⁴ Liberal feminists are also criticized for assuming that those things which men do and have are the only

things worth doing and having for women. Alison Jaggar rejects this idea when she says:

Liberal feminists assume that most individuals are likely to discover fulfillment through the exercise of their rational capacities in the public world and consequently these feminists emphasize the importance of equality of opportunity in that world.... Liberal feminist assumptions rest on a devaluation of women's traditional work and indeed of the labor of most working people.⁵

Radical feminists reject liberal feminists' idea of equality with men as they see women entirely different from men. They "argue that it is not equality that women should want, but liberation – and freedom for women means being separate and apart from men. It means celebrating their difference from men and their distinctive sexuality".⁶

Similarly Socialist feminists criticize Liberal feminists for ignoring and undervaluing the position of working-class women and their problems at the workplace. Marxist feminists "want to challenge the view of the state as a benevolent reformer"⁷ as seen by Liberal feminists. Liberal feminists are also criticized for overestimating the number of women who wish to be like men. Apart from these, their over emphasis on the importance of individual freedom has also come under attack from various other feminist theorists.

References:

1. Tim Delaney, *Contemporary Social Theory: Investigation and Application*, New Delhi, Dorling Kindersley (India) Pvt. Ltd., 2008, p. 202.
2. Marysia Zalewski, *Feminism after Postmodernism: Theorising Through Practice*, London, (first published by Routledge, 2000). This edition published by Taylor & Francis e-Library, 2006, p. 4.
3. John Stuart Mill, *The Subjection of Women*, Mineola, Dover Publications, 1997, p. 83.
4. See Pat¹ John Stuart Mill, *The Subjection of Women*, Mineola, Dover Publications, 1997, p. 83. ricia S. Misciagno, *Rethinking Feminist Identification*, Westport, Praeger Publishers, 1997, p. 37.
5. Alison M. Jaggar, *Feminist Politics and Human Nature*, New Jersey, Rowman & Allanheld, 1983, p. 188.
6. John Hoffman and Paul Graham, *Introduction to Political Ideologies*, New Delhi, Dorling Kindersley India Pvt. Ltd., 2010, p. 177
7. Ibid., p. 177.

**SUBSCRIPTION FORM/PROFORMA FOR RESEARCH
DISCOURSE**

1. Name :
2. Position Held (In case of Individual) :
3. Postal Address (Complete with Pin Code) :
.....
4. Telephone No. :.....Mobile No. :.....
5. E-mail (If any) :
6. Mode of Payment : D.D./Cheque/ Pay Order/ M.O./ Cash
7. Particulars of Payment : Amount :
No. Date
8. Subscription :

Rates	Per Copy	Annual Membership	Life Membership (Ten years)
Individual			
Indian	Rs. 1500/-	Rs. 5000/-	Rs. 15000/-
Foreigner	100\$	300\$	1500\$
Institutional			
Indian	Rs. 1800/-	Rs. 6200/-	Rs. 18000/-
Foreigner	200\$	400\$	1800\$

Note :

- (i) Please tick your option (Given Above).
- (ii) Please make payment in favour of **ANISH KUMAR VERMA**, payable at **VARANASI, U.P. (INDIA)**
- (iii) Postal charge extra.
- (iv) Membership fees of different categories of members of the Institute and the Journal is subject to change from time to time.

Date :

Signature

economic development in India. In order to maintain the momentum of her economy Japan views India as a huge market and place of investment. On the other hand for India Japan is a viable source of capital and advanced technology, always required for her development. Both Countries have high stakes in the restructuring of UN Security Council as both of them are potential claimants for the permanent membership of the Security Council.

Their claim for permanent Membership in the UN Security Council is genuine as these country have made outstanding contribution in the UN related. domain whenever sought after.

Reference :

1. Indo-Japan Relation, Challenges & Opportunities, M.D., 1947, Dharam Dasani.
2. Changing Paradigm of Indo-Japan Relations opportunities & Challenges, PG Rajamohan Bahadur Rahul, Jibing Jacob.

INDO-JAPAN RELATION - From Historical Past to Strategic Present

Amar Nath Upadhyay*

The relationship between India and Japan dates back to the reign of emperor Kemmei through introducing Buddhism by Koreans in Japan. So the first contact was driven by religion and later Commercial aspirations drove Japanese to connect India and vice versa. Though India at that time was a British colony Still Japan realized the importance of India on Industrial front. Apart from this Some Indians begun with Political activities harboring Support for India's freedom.

Indian National congress was critical of Japan during the freedom struggle but with the victory of Japanese over their opponents (western power) many colonial people were elated. This paved the way for some Indian Nationalists to get connected with Japanese to achieve the India's independence.

Post world war period the prime minister of Pt Jawaharlal Nehru Provide devastated Japan with the Iron ore to build the Japan back. The Supply of Iron ore coupled with the denial of Pt Nehru to Participate in the Sanfrancisco conference to sign a Peace treaty with Japan Sponsored by USA fasten Delhi and Tolko Together.

As Japan began to reshape the Country's polity under a new Constitution and took Steps to revive its economic growth, India Sought to maintain Co-operation ties with that Country. In February 1966 Japan India Business Co-operation Committee was established.

Amid these developments, the growing Indo-US political differences and strategic divergences affected India's relations with japan, Since the Japan's foreign Policy was Conditioned by the

*Research Scholar, Dept. of Political Science, Banaras Hindu University-221005

western especially American view on world affairs. Even then Some Japanese appeared to have appreciated and regarded India's non-aligned foreign Policy postures and its role in the developing world, since Japan could have followed such a policy but for the compulsions generated by the US influence over post war Japan. Japan, in fact, viewed India as a rising Asian Power and a better alternative model of a developing country than China, despite the Political differences on international affairs. The 1962 Military aggression by china on India, however, seemed to have brought some disappointment to Japan and India fell low in the Japanese foreign policy Priorities. what was disturbing is the fact that Japan Maintained neutrality during Indo China war. There was the positive response from USA. During Indo-pak war in 1965, Japan cut off aid and credits to India. As geopolitical developments in the early phase of 70s culminated in India's Political proximity to the erstwhile soviet Union in strategic Matters, Japan's Political distance from India became wide. Japan did not support the liberation of Bangladesh nor did it endorse India's peaceful nuclear explosion. More over Japan had a territorial dispute with USSR and perceived a threat to Japanese sea lanes from Soviet navy operating out Cam Ranh Bay in Vietnam. Thus Japan's position on Indo-Pak was in 1971 and nuclear test by India were coloured by Japan's own relation with the former USSR. Had Japan's reaction against nuclear test on the basis of Country's Principled Stand the nuclear issue, Japan would not have abstained from wing in the UN general Assembly in 1978 When India and Some other Countries introduced a resolution to declare as a crime against humanity the use or threat of use nuclear weapons. Indeed, the cold war differences between India and Japan were so intense that there was hardly a Substantial issue in the UN where the two countries remained on the same side. While political differences persisted, there was not much of meaningful interaction between the two countries in the economic field. Post war Japan began to focus on its economic reconstruction and development and was increasingly successful. This was a time when the Indian economy was stagnating. The economic policy of India focusing on the import Substitution strategy disillusioned and

discouraged the Japanese from engaging in more positive economic relations with India. Though India became one of the first and largest recipients of Japan's official development, Assistance the assistance was Suspended for years Until mid 1980s when prime animistic Rajiv Gandhi visited Japan in the midst of a global Political transformation. After the cold war, Japan was fully reconciled to India being a nuclear weapon state. High level exchange of visits between two countries introduced new strategic relationship.

This strategic and global Partnership covers the following areas of Co-operation political, Defense and security Co-operation, Comprehensive economic Partnership, science and Technology Initiative, People to people exchange and co-operation in regional/ multilateral forums.

In order to shape the strategic Partnership a road map was prepared during the visit of Japanese Prime minister to India in 2007 This became the basis of future Co-operation between India and Japan. When India Prime Minister visited Japan a joint declaration on security Co-operation was adopted During 2009 Summit meeting between the top leaders of two countries, a Joint statement on the new stage of Indo-Japan strategic and global partnership and action plan to advance Indo-Japan security co-operation were issued. An important decision of this meeting was to initiate dialogue at defense and foreign secretary level in which these two officials from each side participate in the discussion. This is a new mechanism to discuss security and foreign issues in comprehensive and integrated manner.

In view of the changing strategic environment in East Asia and South-East Asia, indo-Japan partnership is likely to see a positive swing in future. In the given scenario, Japan is gradually moving from a defensive security policy towards a more proactive security strategy. In future, both countries are likely to extend CEPA to service sector also and forge ahead with the cooperation in civil nuclear field. In view of the memory of Fukushima nuclear tragedy in March 2011, Japan appears to be hesitant in the field of civil nuclear cooperation with any country. In the past also, Japan has made enormous financial and technological contribution in the